डॉ0 एस0 बी0 सिंह परमार
अध्यक्ष-समाजशास्त्र विभाग
अतर्रा, स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अतर्रा, बाँदा
के निर्देशन में-

"नगरीय परिवेश में शिशु मृत्यु की दर विभिन्नतायें कारण तथा निवारण"

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की
समाज शास्त्र में पी-एच० डी० उपाधि हेतु
प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

1994

प्रस्तुतकर्ता
अवधेश चन्द्र मिश्रा
प्रवक्ता-समाजशास्त्र विभाग
अतर्रा, स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अतर्रा, बाँदा (उ०प्र०)

डॉ० एस० बी० सिंह परमार
अध्यक्ष-समाजशास्त्र विभाग
अतर्रा, स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अतर्रा, बाँदा

के निर्देशन में-

"नगरीय परिवेश में शिशु मृत्यु की दर विभिन्नतायें कारण तथा निवारण"

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की
समाज शास्त्र में पी-एच० डी० उपाधि हेतु
प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

1994

प्रस्तुतकर्ता
अवधेश चन्द्र मिश्रा
प्रवक्ता-समाजशास्त्र विभाग
अतर्रा, स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अतर्रा, बाँदा (उ०प्र०)

प्रमाण - पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि शोध-प्रबन्ध "नगरीय परिवेश में शिशु-मृत्यु: दर, विभिन्नतायें, कारण तथा निवारण," अवधेश चन्द्र मिश्रा द्वारा समाजशास्त्र में 'डाक्टर आफ फिलासफी' उपाधि हेतु प्रस्तुत है । यह शोध-प्रबन्ध बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, के नियमानुसार पूर्ण किया गया है । शोध-प्रबन्ध अवधेश चन्द्र मिश्रा की मौलिक कृति है ।

(डा0 शीलभद्र सिंह परमार)
अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग
अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, अतर्रा
(बाँदा)

अ प नी - बा त

मृत्यु-दर किसी भी राष्ट्र की समृद्धि का सूचक है । उन देशों में, जहाँ कि जनसंख्या का अधिकांश प्रतिशत निर्धनता रेखा के नीचे जीवन यापन करता है, की तुलना में उच्च रहन-सहन वाले देशों में मृत्यु-दर कम पायी जाती है । विश्व के अन्य विकासशील देशों की तुलना में भारत में स्वास्थ्य का निम्न स्तर पाया जाता है, जो कि यहाँ के निवासियों में अल्प जीवन अवधि के रूप में परिलक्षित होता है ।

सम्पूर्ण देश में, ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में शिशु मृत्यु-दर में पर्याप्त भिन्नतायें हैं । इसके अतिरिक्त, यह भिन्नतायें विभिन्न प्रान्तों में दृष्टिगोचर होती हैं ।

स्वतन्त्र भारत में शिशु मृत्यु की दर को कम करने के लिये बहुत सी नीतियों का प्रतिपादन किया गया है फिर भी, उच्च शिशु मृत्यु-दर अब भी विद्यमान है । स्वाभाविक रूप से यह सामान्य चिन्ता का विषय है । यह समस्या इस परिप्रेक्ष्य में और भी महत्वपूर्ण हो जाती है कि जब तक शिशु मृत्यु-दर को व्यापक स्तर पर कम नहीं किया जाता प्रजनन-दर तथा जनसंख्या बृद्धि में आशानुरूप ह्रास करना सम्भव नहीं है ।

मृत्यु-दर के अन्वेषण में सांख्यकीय कारकों की भी भूमिका महत्वपूर्ण है । उन देशों में, जहाँ कि जन्म एवं मृत्यु के पंजीकरण की विकसित व्यवस्था है, वहाँ पर शिशु मृत्यु का प्रत्यक्ष मापन करना अत्यधिक सरल है । परन्तु भारत सहित विश्व के अधिकांश विकासशील देशों में जहाँ पर कि पंजीकरण की विकसित व्यवस्था नहीं है, पर्याप्त तथा सही आँकड़ों का अभाव है योजनाओं की सफलता की दृष्टिकोण से शिशु मृत्यु-दर तथा सूक्ष्म स्तर पर उसके कारणों की सही जानकारी प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है ।

भारत एक विशाल देश है जहाँ पर कि सामाजिक-सांस्कृतिक तथा आर्थिक विभिन्नताओं की अधिकता है । इस दृष्टि से भी सूक्ष्म स्तरीय अध्ययन अधिक महत्वपूर्ण है । साथ ही, जनसंख्या से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों के बीच अन्तर्क्रिया की प्रकृति को समझने के लिये यह आवश्यक है कि विभिन्न तथ्यों का सूक्ष्म स्तर पर अध्ययन किया जाये । वर्तमान अध्ययन उक्त संदर्भ में किया गया एक प्रयास है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध को व्यवस्थित और सुनिश्चित दिशा देने वाले निर्देशक श्रद्धेय डॉ0 एस0बी0सिंह परमार के प्रति मैं आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने गुरू एवं संरक्षक के दायित्व का एक साथ निर्वाह करते हुये शोध कार्य के दौरान आयी सभी कठिनाइयों का सामना करने के लिये मुझे सक्षम

बनाया । उनके अमूल्य विचार-विमर्श और प्रोत्साहन से ही इतना बड़ा शोध-प्रबन्ध, जिसमें प्रारम्भ से सामग्री का अभाव ही अभाव रहा, पूरा हो सका ।

विषय की दुरूहता और प्रबन्ध सम्बन्धी सामग्री के अभाव के कारण लगभग पूरा कार्य स्वतन्त्र चिन्तन पर आधारित था । इस चिन्तन में आयी शंकाओं का समाधान करने वाले पं० जवाहर लाल नेहरू महाविद्यालय के प्रवक्ता डॉ० जे०पी०नाग, श्री एस०एस०गुप्ता, डॉ० निर्मला व्यास एवं अतर्रा महाविद्यालय के डॉ० आर०ए०चौरसिया, डॉ० आर०एस०त्रिपाठी, डॉ० बी०बी०माथुर व डॉ० महेश सिंह के प्रति मैं आभार प्रकट करता हूँ ।

प्रस्तुत शोध से सम्बन्धित नगर क्षेत्र 'मौदहा' के उत्तरदाताओं के प्रति मैं आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर इसे आसान बनाया । साथ ही, स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्सा अधीक्षक डॉ० यू०सी०गुप्ता, चिकित्साधिकारी डॉ० अरविन्द शिवहरे, स्वास्थ्य कर्मचारी श्रीमती कुरेशा एवं नगर निवासी श्री दिनेश श्रीवास्तव के विशेष सहयोग को भुलाया नहीं जा सकता, जिनके कारण यह शोध-प्रबन्ध सरल बन गया ।

मैं अपने महाविद्यालय के डॉ० बी०एन०द्विवेदी, डॉ० राजकिशोर शुक्ला, डॉ० आर०पी०सिंह एवं अन्य वरिष्ठ सहयोगियों का आभारी हूँ जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से शोध कार्य के दौरान सहयोग प्रदान किया ।

मैं डॉ० डी०सी०गुप्ता, श्री राजीव रत्न, श्री एस०पी०पाठक, श्री अखिलेश वैश्य एवं श्री अमित तिवारी व अन्य मित्रों के योगदान के प्रति भी आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने समय-समय पर मुझे इस कार्य के लिये प्रोत्साहित किया ।

पग-पग पर बड़े ही सहज ढ़ंग से शोध कार्य को शीघ्र पूरा करने के लिये प्रेरित करने के लिये पूज्य पिता जी श्री रामसेवक मिश्र जी के प्रति भी मैं कृतज्ञ हूँ यद्यपि यह कठिन कार्य है ।

इस संदर्भ में पत्नी डॉ० प्रेमलता मिश्रा का योगदान अविस्मरणीय है जिन्होंने मुझे शोध कार्य के दौरान पारिवारिक जिम्मेदारियों से मुक्त रखते हुये हर प्रकार से सहयोग प्रदान किया यद्यपि उन्हें धन्यवाद देना सम्बन्धों को औपचारिक बनाना है ।

अन्त में मैं इस शोध प्रबन्ध में जिन-जिन विद्वानों की रचना से सहायता मिली है उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ ।

अ नु क्र म णि का

सा र णी - सू ची

समस्या निरूपण

कम मृत्यु-दर किसी भी राष्ट्र की स्मृद्धि का सूचक है । उन देशों में, जहाँ कि जनसंख्या का अधिकांश प्रतिशत निर्धनता रेखा के नीचे जीवन यापन करता है, की तुलना में उच्च रहन-सहन के स्तर वाले देशों में मृत्यु-दर कम पायी जाती है । विश्व के विभिन्न विकासशील देशों की तुलना में भारत में स्वास्थ्य का स्तर निम्न कोटि का पाया जाता है, जो यहाँ के निवासियों की अल्पजीवन अवधि के रूप में परिलक्षित होता है । ऐतिहासिक दृष्टि से वर्तमान शताब्दी के चतुर्थांश तक मृत्यु-दर अधिक थी । पिछले कुछ वर्षो में मृत्यु-दर में ह्रास देखने को मिला है । प्रति 1000 जीवित जन्में बच्चों पर 1941-1951 में मृत्यु-दर 27.4 प्रतिशत थी, जो कि 1978 में 14.2 प्रतिशत हो गई है ।[1] 1986 में मृत्यु-दर 11.7 प्रतिशत एवं 1988 में 11.1 प्रतिशत तक पहुँच गई[2] वर्ष 1990 में यह मुत्यु-दर 0.7 प्रतिशत घटकर 10.4 प्रतिशत पर आ गयी । यह अनुमान किया जाता है कि यह मृत्यु-दर 2000 ई0 तक पहुँचते-पहुँचते 9.0 प्रतिशत पर पहुँच जायेगी ।[3] जन्म के समय जीवित रहने की सम्भावना 1951 में 32 से बढ़कर 1976-1981 के मध्य 52 से ऊपर पहुँच गई है ।[4]

वास्तव में मृत्यु-दर में कमी का अनुभव 1921 से हो गया था, परन्तु इस कमी में तीव्रता 1950 से 1970 के मध्य अधिक हुयी ।[5]

---

(1) संध्या, एस0,(1986) सोशियो कल्चरल एण्ड इकोनोमिक कोरिलेट्स आफ इनफेन्ट मार्टीलिटी ए केश स्टडी आफ आन्ध्र प्रदेश : डेमोग्राफी इण्डिया वाल्यूम 15 नं0 1, पेज 86 ।

(2) पार्क, जे0ई0 एण्ड पार्क, के0,(1991) पार्कस टेक्स्ट बुक आफ प्रिवेन्टीव एण्ड सोशल मेडिसिन, बनारसी दास भनार पब्लिशर्स, जबलपुर (13 वाँ संस्करण), पेज 270, 277 ।

(3) गोयल, डा0 रमेश एण्ड माथुर डा0 सरला, (1991) हेल्थ एण्ड फेमिली वेलफेयर प्रोग्राम इन सेवेन्थ फाइव ईयर प्लान ; डिपार्टमेन्ट आफ पीरियाडिक, जी0एस0वी0एच0 मेडिकल कालेज, कानपुर पेज नं0 3 ।

(4) भाटिया : पी0एस0 एण्ड राय : एस 0,(1983) प्रासपेक्टिव फार मार्टीलिटी डिक्लाइन इन इण्डिया, इन दी नेक्स्ट टू डिकेट्स ; इन पापुलेशन पालिसी प्रासपेक्टिव इन डेवलपिंग कन्ट्री एडीटेड बाई नारायन बी0 एण्ड प्रकाशन सी0पी0 बाम्बे ; दि हिमालयन पब्लिशिंग हाउस, पेज नं0 299 ।

(5) पाठक : के0वी0 एण्ड मूर्थी पी0के0,(1985) सोशियो इकोनोमिक कोरिलेट्स आफ फर्टीलिटी एण्ड मार्टीलिटी डिक्लाइन इन इण्डिया, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 14 नं0 1 पेज नं0 31 ।

उक्त कमी भारत में मृत्यु-दर से सम्बंधित विविध वर्षो के आंकड़ों से परिलक्षित होती है, जिसे निम्न सारणी में प्रस्तुत किया गया है ।

मृत्यु-दर में लगातार यह कमी इस बात का द्योतक है कि मृत्यु के कारणों, विशेष रूप से महामारी, चेचक, मलेरिया, कालरा, प्लेग आदि पर नियन्त्रण किया गया है । इसके साथ ही, कृषि उत्पादन पर विशेष ध्यान दिया गया जिससे उत्पादन में बृद्धि के कारण कुपोषण की समस्या हल हुयी, शिक्षा स्तर ऊँचा हुआ, उत्तम प्रसव सुविधायें उपलब्ध कराई गईं और मेडिकल तकनीकी को काफी विकसित किया गया। इसी से मृत्यु-दर में आशातीत कमी आई ।

मृत्यु-दर को तुलनात्मक रूप में समझने के लिये विश्व के कुछ देशों के आँकड़े सारणी 1.2 में प्रदर्शित किये गये हैं ।

सारणी- 1.1

भारत में मृत्यु-दर (प्रति हजार)[6]

वर्ष	मृत्यु-दर
1901-1910	42.6
1911-1920	47.2
1921-1930	36.3
1931-1940	31.2
1941-1950	27.4
1951-1960	22.8
1961-1970	19.0
1971-1980	14.8
1988	11.1
1990	10.4

---

(6) पार्क : जे0ई0 एण्ड पार्क के0, (1991) पार्कस टेक्सट बुक आफ प्रिवेन्टीव एण्ड सोशल मेडिसिन ; बनारसी दास भनार पब्लिशर्स ; जबलपुर पेज 277 ।

सारिणी- 1.2

विश्व के कुछ विशिष्ट देशों की मृत्यु-दर (1985-90)[7]

देश	मृत्यु-दर
स्वीडन	11
फ्रांस	10
जर्मनी	11
ब्रिटेन	12
कनाडा	7
अमेरिका	9
श्रीलंका	6
भारत	10.4
बांगलादेश	15
पाकिस्तान	15
चीन	7
जापान	6
सिंगापुर	5
लीबिया	10
कुवैत	8
मिश्र	10
सऊदीअरब	8

सारणी 1.2 से स्पष्ट है कि यद्यपि विश्व के कुछ विकासशील देशों की तुलना में भारत में मृत्यु-दर अपेक्षाकृत कम है, परन्तु विकसित देशों से यह पर्याप्त अधिक है । साथ ही श्रीलंका तथा सऊदीअरब जैसे विकासशील देशों में भी मृत्यु-दर भारत से पर्याप्त कम है ।

जहाँ तक शिशु मृत्यु का प्रश्न है कुछ अध्ययन इस तथ्य को प्रकट करते हैं कि 1941-45 में प्रति एक हजार जनसंख्या पर मृत्यु-दर 147 थी, जो घटकर 1978 में 126 हो गई ।[8] मृत्यु-दर में यह ह्रास अपेक्षाकृत कम ही था ।[9] परन्तु इस सत्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि पिछले कुछ वर्षों में शिशु

---

(7) पार्क ; जे0ई0 एण्ड पार्क ; के0,पार्कस टेक्स्ट बुक आफ प्रिवेन्टीव एण्ड सोशल मेडिसिन, बनारसी दास भनार पब्लिशर्स, जबलपुर पेज नं0 270 ।

(8) संध्या : एस0,(1986) सोशियो कल्चरल एण्ड इकोनोमिक कोरिलेट्स आफ इनफेन्ट मार्टीलिटी ए केश स्टडी आफ आन्ध्र प्रदेश, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 1, पेज नं0 86 ।

(9) जकारिया ; के0सी0 एण्ड पटेल एस 0,(1983) ट्रेण्ड्स आफ डिटरमिनेट्स आफ इनफेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टीलिटी इन केरल, जनसंख्या वाल्यूम । नं0 2, नेज 125 ।

मृत्यु में पर्याप्त ह्रास हुआ है ।[10] क्योंकि भारत में यह कमी प्रति हजार शिशु के आधार पर 1989 में 91 हो गई है । इस सम्बन्ध में यह अनुमान है कि सन् 2000 ई0 तक लक्ष्य शिशु मृत्यु-दर 60 से कम प्रति हजार जीवित बच्चे तक पहुँच जायेगी । फिर भी, सम्पूर्ण विश्व के परिप्रेक्ष्य में आज भारत उन देशों में से एक है जहाँ शिशु मृत्यु की उच्च दर पायी जाती है । जब सम्पूर्ण विश्व में शिशु मृत्यु-दर प्रति एक हजार जीवित जन्मों पर 84 है, तथा विकसित देशों में यह मात्र 19 है, भारत में यह दर 105 है ।[11] पूर्व वर्षों में 1951-61 के दशक में शिशु मृत्यु-दर प्रति एक हजार जीवित जन्मों पर 146 तथा 1961-70 के दशक में यह लगभग 129 थी ।[12] यद्यपि इससे स्पष्ट है कि मृत्यु-दर में कमी आयी है तथापि भारत में शिशु मृत्यु की वर्तमान दर अन्य विकसित देशों की तुलना में बहुत अधिक है । चीन और पाकिस्तान में यह दर क्रमशः 44 तथा 124 है । भारत में लगभग 50 प्रतिशत शिशु पोस्ट नियोनेटल पीरिएड में मर जाते हैं ।

---

(10) सक्सेना; डी0एन0 एण्ड श्रीवास्तव, जे0एन0, (1980) बायो सोशल कोरिलेट्स आफ पेरीनेटल मार्टेलिटी, इक्सपीरियन्स आफ एन इण्डियन हास्पिटल, जनरल आफ बायो सोशल साइंसेज 12, 69 ।

(11) दि हिन्दुस्तान टाइम्स : 1987, सर्वे आन दि इन्फेन्ट मार्टेलिटी, नई दिल्ली, फरवरी 8 ।

(12) सेन्सस आफ इण्डिया (1961-1971) लाइफ टेबिल, आफिस आफ दि रजिस्ट्रार जनरल नई दिल्ली, एस0आर0 1, इण्डिया पेपर 1 आफ 1977 ।

(13) पार्क, जे0ई0 एण्ड पार्क, के0, (1991) पार्क्स टेक्स्ट बुक आफ प्रिवेन्टीव एण्ड सोशल मेडिसिन, बनारसी दास भनार, जबलपुर, पेज 273 ।

(14) पाठक, के0वी0मूर्थी : पी0के0, (1985) सोशियो इकोनोमिक डिटरमिनेट्स आफ फर्टेलिटी एण्ड मार्टेलिटी डिक्लाइन इन इण्डिया ; डेमोग्राफी इण्डिया : वाल्यू 12 नं0 11, पेज 171 ।

(15) दि हिन्दुस्तान टाइम्स; 1987 फरवरी, 8 ।

(16) दि रजिस्ट्रार जनरल, (1981) सर्वे आन इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टेलिटी, 1979, नई दिल्ली, मिनिस्ट्री आफ होम एफेयर्स ।

सम्पूर्ण देश के ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में शिशु मृत्यु-दर में पर्याप्त भिन्नतायें हैं । इसके अतिरिक्त यह भिन्नतायें विभिन्न प्रान्तों में दृष्टि गोचर होती हैं । भारत के नगरीय क्षेत्रों में शिशु मृत्यु-दर 65 है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में यह 114 है । जहाँ तक प्रान्तों का प्रश्न है, केरल में यह सबसे कम (प्रति एक हजार जीवित जन्मों पर 30 है) जो कि उस लक्ष्य की भी आधी है जिसे कि भारत इस शताब्दी के अन्त तक प्राप्त करना चाहता है । राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के आधार पर यह तय किया गया था कि शिशु मृत्यु-दर जो 1947 में प्रति एक हजार जीवित बच्चों पर 160 थी वह 1978 में 125 हो गई, 1981 में 114, 1991 में 87, उसे 2000 ई0 तक 60 तक करना है । दूसरी तरफ, उत्तर प्रदेश में यह सबसे अधिक 147 है । मध्य प्रदेश एवं उड़ीसा क्रमशः दूसरे एवं तीसरे नम्बर पर हैं, क्योंकि वहाँ पर शिशु मृत्यु-दर प्रति एक हजार 134 एवं 132 है[17] ।

स्वतन्त्र भारत में शिशु मृत्यु की दर को कम करने के लिये बहुत सी नीतियों का प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन किया गया है । फिर भी उच्च शिशु मृत्यु-दर अब भी विद्यमान है । स्वाभाविक रूप से यह सामान्य चिन्ता का विषय है । यह समस्या इस परिप्रेक्ष्य में और भी महत्वपूर्ण हो जाती है कि जब तक शिशु मृत्यु-दर को व्यापक स्तर पर कम नहीं किया जाता, प्रजनन-दर तथा जनसंख्या बृद्धि में आशानुरूप ह्रास करना सम्भव नहीं है । इससे भी अधिक यह समस्या परिवार नियोजन को स्वीकार करने वाले दम्पत्तियों के दृष्टिकोण के कारण और भी जटिल हो जाती है । सामान्य तौर पर वे अपने परिवार को सीमित करने की तभी सोंचते हैं जब उनके अधिक बच्चे हो जाते हैं । इस दृष्टिकोण के पीछे कौन से कारण हैं इस पर वैज्ञानिक अनुसंधान की आवश्यकता है ।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से, शिशु मृत्यु-दर में धीमी गिरावट के कारणों का गहन अध्ययन एक दिलचस्प विषय हो सकता है । यह परिकल्पित है कि जनस्वास्थ्य सेवाओं, महामारियों पर नियन्त्रण आदि की तुलना में कुछ सामाजिक सांस्कृतिक कारक शिशु मृत्यु की दर निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं ।

मृत्यु-दर के अन्वेषण में सांख्यकीय कारकों की भी महत्वपूर्ण भूमिका है । जिन देशों में जन्म एवं मृत्यु के पंजीकरण की विकसित व्यवस्था है वहाँ पर शिशु मृत्यु का प्रत्यक्ष मापन करना अत्यधिक सरल है । परन्तु भारत सहित विश्व के अधिकांश विकासशील देशों में जहाँ पर कि पंजीकरण की विकसित व्यवस्था नहीं है, पर्याप्त तथा सही आंकड़ों का अभाव है । इस परिप्रेक्ष्य में दीर्घस्तरीय अध्ययनों की तुलना में सूक्ष्मस्तरीय अध्ययनों के अधिक सही तथा उपयोगी होने की सम्भावना है ।

---

(17) दि हिन्दुस्तान टाइम्स : 1987, सर्वे आन दि इन्फेन्ट मार्टेलिटी, नई दिल्ली फरवरी 8।

उपर्युक्त तथ्यों के परिप्रेक्ष्य में तथा योजनाओं की सफलता के दृष्टिकोण से शिशु मृत्यु-दर तथा सूक्ष्म स्तर पर उसके कारणों की सही जानकारी प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है । भारत एक विशाल देश है जहाँ पर कि सामाजिक-सांस्कृतिक तथा आर्थिक विभिन्नतायें अधिक हैं । इस दृष्टि से भी सूक्ष्म स्तरीय अध्ययन अधिक महत्वपूर्ण है । साथ ही, जनसंख्या से सम्बंधित विभिन्न तथ्यों के बीच अन्तर्क्रिया की प्रकृति को समझने के लिये यह आवश्यक है कि विभिन्न तथ्यों का सूक्ष्म स्तर पर अध्ययन किया जाय ।

प्रस्तावित अध्ययन उक्त उद्देश्यों की पूर्ति का एक प्रयत्न है जिसमें शिशु मृत्यु-दर तथा उसके कारणों का सूक्ष्म स्तर पर अध्ययन करने की योजना है । साथ ही, नीतियों के निर्धारण में उक्त अध्ययन सुझाव भी प्रस्तुत करेगा ।

उद्देश्य -

वर्तमान अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य हैं :-

(1) शिशु मृत्यु-दर का आंकलन ।

(2) शिशु मृत्यु की विभिन्नताओं को ज्ञात करना ।

(3) शिशु मृत्यु के स्तर को प्रभावित तथा निर्धारित करने वाले सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक कारकों का पता लगाना तथा,

(4) शिशु मृत्यु पर नियन्त्रण पाने के लिये सुझाव प्रस्तुत करना ।

अध्ययन का महत्व -

पूर्व अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि भारत में शिशु मृत्यु-दर विश्व के अन्य विकसित एवं विकासशील देशों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक है । इसके अतिरिक्त शिशु मृत्यु-दर बहुत धीरे-धीरे कम हो रही है, कहने की आवश्यकता नहीं कि जब तक शिशु मृत्यु-दर में तीव्र गति से ह्रास नहीं होगा तब तक प्रजनन दर तथा जनसंख्या बृद्धि को नियंत्रित कर पाना सम्भव न हो सकेगा । शिशु मृत्यु की अधिक दर, अधिक प्रजनन दर के लिये उत्तरदायी है क्योंकि दम्पत्ति शिशुओं के जीवित रहने की कम सम्भावनाओं के कारण अधिक बच्चे पैदा करना चाहते हैं । अतः उक्त तथ्यों का अध्ययन अपेक्षित है ।

भारत में अब तक किये गये अधिकांश अध्ययन देश के विकसित क्षेत्रों में किये गये हैं, वर्तमान अध्ययन देश के अत्यधिक पिछड़े तथा उपेक्षित क्षेत्र में किया जायेगा । इसके अतिरिक्त, भारत जैसे देश में जहाँ पर कि क्षेत्रीय तथा सांस्कृतिक विविधितायें हैं इस प्रकार का सूक्ष्म स्तरीय तथा भिन्न सांस्कृतिक समूहों में तुलनात्मक अध्ययन योजना निर्माताओं तथा जनसंख्या नियन्त्रण के क्षेत्र में कार्य करने वाले लोगों के लिये अत्यधिक महत्व का होगा ।

विश्व में चीन के पश्चात भारत ही दूसरा देश है जो कि जनसंख्या की तीव्र बृद्धि से से ग्रसित है । 1991 की जनगणना के अनुसार देश की जनसंख्या 85 करोड़ से भी अधिक है, इससे और अधिक बृद्धि हो रही है । अब राष्ट्र के सामने यह यह अहम् प्रश्न है कि इस जनसंख्या बृद्धि को कैसे रोका जाय । जनसंख्या बृद्धि से सम्बंधित जितने भी कारक सुझाये गये हैं उनमें शिशु मृत्यु, जैसा कि हम अनुभव करते हैं, जनसंख्या बृद्धि को समझने में विशेष सहायक हो सकता है ।

नीति निर्धारण के महत्वपूर्ण कार्य में भी वर्तमान अध्ययन सहायक होगा । क्योंकि इसके द्वारा सूक्ष्म स्तर पर शिशु मृत्यु के वास्तविक स्तर की जानकारी प्राप्त होगी तथा इसके निर्धारक कारकों का भी पता चल सकेगा ।

परिकल्पनायें :

सामाजिक सर्वेक्षण एवं सामाजिक शोध दोनों के अन्तर्गत तथ्यों का नियंत्रित और वस्तुनिष्ठ अध्ययन करने में परिकल्पना की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । यह सच है कि सामाजिक सर्वेक्षण के लिये परिकल्पना का निर्माण करना प्रत्येक स्थिति में आवश्यक नहीं होता लेकिन कुछ विशेष अध्ययनों में परिकल्पना का निर्माण करना उपयोगी अवश्य होता है । प्रस्तुत अध्ययन में पाँच परिकल्पनायें ली गई हैं, जिनमें स्पष्टता, अनुभवसिद्धता तथा विशिष्टता के गुण विद्यमान हैं ।

पूर्व अध्ययनों के निष्कर्षों तथा शिशु मृत्यु की वर्तमान सामाजिक प्रस्थिति के सन्दर्भ में हमारी विशिष्ट परिकल्पनायें निम्नलिखित हैं :-

(1) शिशु मृत्यु-दर ह्रास की ओर उन्मुख है ।

(2) नवजात शिशुओं की मृत्यु-दर की तुलना में पश्च-नवजात शिशुओं की मृत्यु-दर अधिक है ।

(3) जनांकिकीय कारकों, जैसे कि प्रसव के समय माँ की आयु, का शिशु मृत्यु से सकारात्मक सह-सम्बन्ध है ।

(4) सामाजिक- सांस्कृतिक कारक, जैसे कि माता-पिता का साक्षरता स्तर, उनकी जाति, धर्म, परिवार का स्वरूप, तथा सामाजिक- आर्थिक स्तर, शिशु मृत्यु के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं ।

(5) प्रसव तथा शिशुओं की देख रेख सम्बन्धी कारक, जैसे कि शिशु जन्म का स्थान, प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित प्रसव सहायक, नाल काटने के लिये प्रयुक्त किये गये यंत्र का प्रकार आदि का शिशु मृत्यु से घनिष्ठ सम्बन्ध है ।

पूर्व अध्ययन :

सामान्यतः प्रस्तुत समस्या से सम्बंधित दो प्रकार के अध्ययन किये गये हैं ।

(1) शिशु मृत्यु की प्रवृत्ति ज्ञात करने से सम्बंधित अध्ययन ।

(2) उन कारकों को ज्ञात करने से सम्बंधित अध्ययन जो कि शिशु मृत्यु का निर्धारण करते हैं ।

यदि सम्पूर्ण विश्व तथा विश्व के अन्य विकसित एवं विकासशील देशों के परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो भारत में शिशु मृत्यु-दर बड़ी भयावह है । जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि भारत में शिशु मृत्यु-दर विश्व औसत से भी कहीं अधिक है । यदि इसकी विकसित देशों से तुलना की जाती है तो भारत में शिशु मृत्यु-दर और भी अधिक है । "शिशु मृत्यु-दर का विश्व औसत 84 तथा विकसित देशों में यह 19 है तथा भारत में यह 105 प्रति एक हजार जीवित जन्म है [18] ।

भारत में शिशु मृत्यु-दर कुछ विकासशील देशों की तुलना में अधिक है, तथा कुछ की तुलना में कम भी है । "द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात मात्र एक दशक के संक्षिप्त अन्तराल में श्रीलंका, कोरिया तथा ताईवान ने मृत्यु-दर पर बहुत अधिक नियन्त्रण पा लिया है[19] ।

उपलब्ध वर्तमान साक्ष्यों से स्पष्ट है कि "इण्डोनेशिया में शिशु मृत्यु में कमी आई है और यह एक हजार जीवित जन्मों पर वर्तमान में 100 से भी कम है परन्तु शिशु मृत्यु के ह्रास की दर गिर गई है"[20]। आर0डी0अग्रवाल के अध्ययन से स्पष्ट है कि भारत में उच्च शिशु मृत्यु-दर एवं उच्च प्रजनन दर में धनात्मक सह-सम्बन्ध पाया जाता है । भारत में शिशु मृत्यु-दर 1920 में गिर गई थी । यहाँ शिशु मृत्यु-दर प्रत्येक राज्य में भिन्न-भिन्न है, यद्यपि यह बहुत अधिक है । 1960 के मध्य जब परिवार कल्याण कार्यक्रम की शुरूआत हुयी जन्म दर में कमी आई किन्तु जन्मदर पुनः उच्च हो गई । इस समयन्तराल में शिशु मृत्यु एवं जन्म दर दोनों में कमी आयी[21] ।

---

(18) दि हिन्दुस्तान टाइम्स : 1987, सर्वे आन दि इन्फेन्ट मार्टेलिटी, नई दिल्ली, फरवरी 8

(19) अग्रवाल, एस0एन0 ; 1981, इण्डियाज पापुलेशंन प्राब्लम्स, नई दिल्ली, टाटा समसी ग्रा-हिल पब्लिसिंग कं0 लि0 ।

(20) दास वर्मा, जी0एल0, 1986, इन्फेन्ट मार्टेलिटी इन इण्डोनेशिया : ए रिब्यू आफ रीसेन्ट एवीडेन्स, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 1 पेज 81 ।

(21) अग्रवाल, आर0डी0, (1975) इनफ्ल्यूएन्स आफ इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टेलिटी इन इण्डिया इन कमेटी फार इण्टरनेशनल कोआर्डिनेशन आफ नेशनल रिसर्च इन डेमोग्राफी ; सेमिनार आन इन्फेन्ट मार्टेलिटी इन रिलेशन टू दि लेविल आफ फर्टेलिटी, बैंकाक, मई 6-12, 1975, पेरिस, सी0आई0सी0आर0ई0डी0 ।

इसी प्रकार वाई0एल0 अरोरा ने शिशु मृत्यु का स्तर एवं प्रवृत्ति का अध्ययन बम्बई नगर निगम के 1960-76 के आँकड़ों के आधार पर किया और यह पाया कि विविध मृत्यु दरों में इस अन्तराल में कमी आई, सामान्य मृत्यु दरों में गिरावट के साथ-साथ शिशु मृत्यु-दर में गिरावट नहीं आयी यह क्रमशः बढ़ती गई और सम्पूर्ण मृत्यु की यह 22 प्रतिशत तक हो गई । उन्होंने आयु एवं लिंग के आधार पर विभिन्नताओं को भी स्पष्ट करते हुये कहा है कि जन्म के प्रथम छः दिनों में पुरुष लिंग की शिशु मृत्यु-दर क्रमशः बढ़ती जाती है । तथा विविध आयु समूहों में यह घटती है[22] ।

नेपाल में शिशु मृत्यु के आँकड़े इस तथ्य को दर्शाते हैं कि यह भूतकाल में बहुत अधिक थी परन्तु इसके पश्चात इसमें गिरावट हो रही है । विविध अनुसंधानों से यह स्पष्ट है कि "शिशु मृत्यु 1950 तक बहुत अधिक थी जो कि प्रति हजार जीवित जन्मों पर 250 थी । 1961-71 के दशक में यह 190 हो गई और 1971 की जनगणना के अनुसार यह 170 हो गयी थी"[23]। 1992 की एक रिपोर्ट के आधार पर यह मृत्यु-दर 125 हो गई[24]।

अन्य विकासशील देशों की तरह बांगलादेश में वर्तमान दशकों में शिशु मृत्यु-दर में कमी आई है यद्यपि यह कमी एशिया के अन्य विकासशील देशों की तुलना में कम पायी गई है । राष्ट्रीय अनुसंधान परिषद 1981 के अनुसार बांगलादेश में स्त्रियों की जीवित रहने की क्षमता का स्तर 49.7 था जबकि थाईलैण्ड में यह 60.9 था[25]। इसी प्रकार बांगलादेश में मतलब प्रोजेक्ट के परिणाम भी यह दर्शाते हैं कि 1980, 1981 तथा 1982 में विशेष रूप से शिशु मृत्यु की दरें कम हो गई हैं[26]।

---

(22) अरोरा, वाई0एल0, "इन्फेन्ट मार्टेलिटी एण्ड इट्स कोरिलेट्स इन ग्रेटर बाम्बे : हेल्थ एण्ड पापुलेशन, प्रास्पेक्टिव एण्ड इसूज, 12 (4) अक्टूबर 1979 ।

(23) गुभाजू, भक्त बी0, 1986, लेविल एण्ड ट्रेण्ड आफ इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टेलिटी इन नेपाल, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम15 नं0 1, पेज 57 ।

(24) स्वतन्त्र भारत: 20 मई, 1992 ।

(25) अमीन,आर,0मरियम, ए0जी0एण्ड फारूकी, आर0 1986 इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टेलिटी इन बांगलादेश, 1959-1976, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 1,पेज 35 ।

(26) चौधरी, ए0आई0, फिलिप्स, जे0एफ0 एण्ड शेख, ए0के0, 1986, दि ट्रेण्ड्स इन नियोनेटल, इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टेलिटी इन मतलब प्रोजेक्ट पीरिएड, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 1 ,पेज 30 ।

जब हम शिशु मृत्यु के कारणों से सम्बंधित अध्ययनों का अवलोकन करते हैं तब हमें विभिन्न प्रकार के विचार मिलते हैं । जकारिया एवं पटेल ने केरल राज्य के अपने अध्ययन में यह निष्कर्ष दिया है कि सामाजिक आर्थिक कारक शिशु मृत्यु के संदर्भ में सूक्ष्म महत्व के हैं । इसके साथ ही, उनके अनुसार सामाजिक कारकों, जैसे- माँ की शिक्षा अथवा उसकी जाति, की तुलना में आर्थिक कारकों, जैसे- भूमि-स्वामित्व, का अपेक्षाकृत कम महत्व है[27]। पाठक तथा मूर्थी एवं परमार इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि शिशु मृत्यु तथा प्रजननता के बीच सकारात्मक सह-सम्बन्ध है । उन्होंने यह निष्कर्ष भी दिया है कि शिशु मृत्यु-दर तथा प्रजनन दर दोनों में ही सामाजिक एवं आर्थिक विकास के साथ ही स्वास्थ्य सुविधाओं को बढ़ाकर ही परिवर्तन लाना सम्भव है[28]। प्रभाकर ने भी इसी प्रकार के विचार व्यक्त किये हैं[29]। श्रीवास्तव एवं सक्सेना ने अपने अध्ययन से स्पष्ट किया है कि सामाजिक, आर्थिक स्तर शिशु मृत्यु के सम्बन्ध में अत्यधिक महत्व का है । उनके अनुसार शिशु मृत्यु एवं हिन्दू जाति स्तर में विपरीत क्रम का सम्बन्ध है अर्थात् जैसे-जैसे जाति स्तर ऊँचा होता है शिशु मृत्यु-दर घटती जाती है एवं जाति स्तर नीचा होने के साथ ही शिशु मृत्यु-दर बढ़ती जाती है इसके अतिरिक्त माँ की शिक्षा, पिता की आय एवं उसका व्यवसाय भी शिशु मृत्यु को प्रभावित करती है[30]। एक सर्वे के आधार पर रुजिका एवं कानिटकर ने अपने विचार स्पष्ट करते हुये बताया है कि माँ का शैक्षिक स्तर शिशु मृत्यु को प्रमुख रूप से प्रभावित करता है उन्होंने पाया कि जहाँ मातायें निरक्षर हैं वहाँ शिशु मृत्यु-दर सर्वाधिक है तथा माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं में यह सबसे कम है एवं प्राथमिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं में यह मध्यम है । इसके साथ ही माँ का धर्म, बच्चे का जन्म स्थान, और परिवार का सामाजिक, आर्थिक स्तर

---

(27) जकारिया, के0सी0 एण्ड पटेल, एस0, 1983, ट्रेण्डस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स आफ इनफेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन केरला, जनसंख्या, वाल्यूम 1 नं0 2, पेज 125 ।

(28) पाठक, के0बी0 एण्ड मूर्थी, पी0के0, 1983, लेविल एण्ड ट्रेण्ड्स आफ मारटेलिटी इन सम सेलेक्टेड कन्ट्रीज आफ एशिया, इन श्री निवासन, के0 मुखर्जी, एस0 (एडीटेड), डायनेमिक्स आफ पापुलेशन एण्ड फैमिली वेलफेयर, 1983, बाम्बे: हिमालयन पब्लिसिंग हाउस, 246-277 ।

परमार, एस0बी0सिंह, 1987, स्त्रियों की प्रजनन-दर निर्धारण में शिशु एवं बाल मृत्यु की भूमिका, मानव, वर्ष 15 अंक 1, पेज 7 ।

(29) प्रभाकर, एन0आर0, 1983, मारटेलिटी डिक्लाइन इन इण्डिया एण्ड कर्नाटक, 1951-71: डेवलेपमेंट वर्सेस, पब्लिक हेल्थ प्रोग्राम हाईपोथीसिस डेमोग्राफी इण्डिया वाल्यूम 15 नं0 1 पेज 238 ।

(30) श्रीवास्तव, जे0एन0 एण्ड सक्सेना, डी0एन0, इनफेन्ट मार्टेलिटी डिफ्रेन्सियल एन इण्डियन सेटिंग: फालो अप आफ हास्पिटल डिलेवरीज, जनरल आफ बायोसोशल साइंस, 13 (4) अक्टूबर 1981, 467-478 ।

भी शिशु मृत्यु-दर को प्रभावित करता है[31]। के0पी0 सिंह ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है[32]।

यह एक ज्ञात तथ्य है कि परिवार की आय ही परिवार के आहार की पौष्टिकता के स्तर को निर्धारित करती है, विशेष तौर पर माँ के संदर्भ में जो कि शिशु मृत्यु-दर को प्रभावित करती है[33]। एम0ई0खांन ने अपने अध्ययन में यह पाया कि शिशु मृत्यु-दर माँ की आयु, शिशु के जन्म का अन्तराल आदि से प्रभावित होती है साथ ही, जन्म के समय प्रसव सहायक की भी भूमिका महत्वपूर्ण होती है[34]।

एच0बी0चन्ना ने 1963-67 के मध्य दिल्ली में शिशु मृत्यु-दर की प्रवृत्ति एवं विभिन्नताओं के अध्ययन के आधार पर स्पष्ट किया है कि जो कारक शिशु मृत्यु-दर को प्रभावित करते हैं उनमें प्रसव के समय माँ की आयु, एवं बच्चे के लिंग कारक अत्यधिक महत्व का है[35]। वैद्यनाथन ने अपने "विकासशील देशों में शिशु मृत्यु और विभिन्नतायें" पर अध्ययन के आधार पर स्पष्ट किया है कि शिशु मृत्यु और सामाजिक-आर्थिक स्तर, परिवार की आय, माँ की शिक्षा एवं पिता के व्यवसाय में विपरीत क्रम का सम्बन्ध है[36]। गुप्ता और राव ने अपने अध्ययन में पाया है कि शिशु मृत्यु का पति के शैक्षिक स्तर से ऋणात्मक सह-सम्बन्ध है । निम्न जाति स्तर के हिन्दुओं में शिशु मृत्यु की दर उच्च जातीय हिन्दुओं की अपेक्षाकृत ज्यादा पायी जाती है । इसी प्रकार उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि शिशु मृत्यु का जन्म अन्तराल से ऋणात्मक सह-सम्बन्ध है अर्थात शिशुओं का जन्म अन्तराल जैसे-जैसे घटता है शिशु मृत्यु बढ़ती जाती है तथा जैसे-जैसे अन्तराल बढ़ता जाता है शिशु मृत्यु-दर घटती जाती है[37]।

---

(31) रुजिका, एल0टी0 एण्ड कानिटकर, टी: "इनफेन्ट मार्टीलिटी इन ग्रेटर बाम्बे" डेमोग्राफी इण्डिया, 2 (1) जून 1973, 41-55 ।

(32) सिंह, के0पी0 "चाइल्ड मारटीलिटी, सोशल स्टेट्स एण्ड फर्टीलिटी इन इण्डिया " सोसल बाइलोजी, 24(4) 1974, 385-88 ।

(33) स्वामी, अमृतलाल एण्ड मंगोल सुदर्शन, इकोनोमिक इम्पलीकेशन आफ इन्फेन्ट मारटीलिटी, दि जनरल आफ फेमिली वेलफेयर 7(4), जून 1961, 35-39 ।

(34) खांन, एम0ई0, डिटरमिनेन्ट्स आफ इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन उत्तर प्रदेश "ए माइक्रो लेविल स्टडी" 1984, अक्टूबर 1-4 ।

(35) चन्ना, एच0बी0, "ए स्टडी आफ इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन रूरल देलही" डेमोग्राफी इण्डिया, 8 (1-2), जनवरी- दिसम्बर, 1979, 217-225 ।

(36) वैद्यनाथन, के0ई0: "सम इन्डीकेट्स आफ डिफेन्सियल्स मार्टीलिटी इन इण्डिया" इन: स्टडीज आन मार्टीलिटी इन इण्डिया बाई वैद्यनाथन, के0ई0 दि गाँधी ग्राम इन्स्टीट्यूट आफ रूरल हेल्थ एण्ड फेमिली प्लानिंग, 1972 145-160 ।

(37) गुप्ता, के0सी0 एण्ड राव, आर0के0, "चाइल्ड लास इक्सपीरिएन्स इन ए रूरल एरिया" जनरल आफ फेमिली वेलफेयर, 23(1) सितम्बर, 1976, 27-35 ।

एस0 गुनाशेषरन ने अपने एक अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष दिया है कि कुछ कारक जैसे रख-रखाव पर ध्यान, दुग्ध सम्बन्धी आहार की परिपूर्णता, बच्चे का रोगमुक्त होना, भोजन सामग्री पर कम खर्च करना, धर्म और जन्म के समय के मौसम का शिशु मृत्यु से घनिष्ठ सम्बन्ध है । उन्होंने नियोनेटल एवं पोस्ट-नियोनेटल मृत्यु का विश्लेषण करते हुये स्पष्ट किया है कि नियोनेटल मार्टीलिटी को प्रभावित करने वाले कारक जैसे, रखरखाव पर ध्यान, गैस्टेसन पीरियड, जन्म का स्थान, प्रसव के समय कार्यकर्ता, स्वास्थ्य कर्मचारि की उपलब्धता, आहर की परिपूर्णता एवं जन्म का महीना आदि महत्वपूर्ण हैं जबकि पोस्ट-नियोनेटल मार्टीलिटी को जन्म का स्थान, दुग्ध सम्बन्धी आहार की पूर्णता और बच्चे का रोग मुक्त होना आदि कारक प्रभावित करते हैं[38]।

एस0 गुनाशेषरन ने अपने एक अन्य अध्ययन प्रजननता सर्वेक्षण के आधार पर यह निष्कर्ष दिया है कि नियोनेटल मार्टीलिटी ज्यादातर जन्म के प्रथम दो सप्ताह में अधिक होती है । उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि शिशु मृत्यु-दर उन शिशुओं में जिनमें जन्म के समय माँ की आयु 15 से 19 वर्ष के मध्य थी, सर्वाधिक पायी गई एवं सबसे कम उनमें पायी गई जिनमें शिशुओं के जन्म के समय माँ की आयु 20-24 वर्ष के मध्य थी । इसके अतिरिक्त जैसे-जैसे माँ की आयु बढ़ती जाती है शिशु मृत्यु-दर बढ़ती जाती है [39]।

इसी प्रकार करमाकर ने भी अपने अध्ययन से स्पष्ट किया है कि प्रजननता एवं शिशु मृत्यु-दर एक दूसरे को प्रभावित करती है । उनके अनुसार विकासशील देशों में प्रजननता शिशु मृत्यु-दर को अत्यधिक प्रभावित करती है [40]। आन्ध्र प्रदेश के एक अध्ययन में संध्या ने इस तथ्य को उद्घाटित किया है कि सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक कारक जैसे परिवार का प्रकार, शिक्षा, माता पिता का व्यवसाय एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं आदि का शिशु मृत्यु की दर के निर्धारण में महत्वपूर्ण योगदान है । उनके अनुसार जाति कारक का शिशु मृत्यु के साथ सम्बन्ध महत्वपूर्ण नहीं है [41]।

---

(38) गुनाशेषरन, एस0 : डिटरमिनेन्ट्स आफ इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन रूरल एरिया आफ तमिलनाडु, पेपर सबमिटेड टू ए सेमिनार आन " डिटरमिनेट्स आफ इनफेन्ट मार्टीलिटी इन इण्डिया" स्पान्सर्ड बाई दि गुजरात इन्स्टीट्यूट आफ एरिया प्लानिंग एण्ड पापुलेशन कौंसिल (न्यूयार्क), अहमदाबाद, अक्टूबर 1-4, 1984 ।

(39) गुनाशेषरन, एस0: "ए नोट आन इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन अथूर ब्लाक, 1964-69" सी0ए0आर0सी0 गाँधीग्राम, 1974 ।

(40) करमाकर, आर0 "टाइम सिरीज कैजुवल्टी बिटवीन इनफेन्ट मार्टीलिटी एण्ड फर्टीलिटी इन लेस डेवलेप्ड कन्ट्रीज" डाक्टोरल डेजरटेशन, सबमिटेड टू सिटी यूनीवर्सिटी आफ न्यूयार्क, 1982 ।

(41) संध्या, एस0, 1986 सोशियो-कल्चरल एण्ड इकोनोमिक कोरिलेट्स आफ इन्फेन्ट मार्टीलिटी: ए केश स्टडी आफ आन्ध्र प्रदेश, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 1, पेज 86 ।

एशिया के अन्य विकासशील देशों में होने वाले अध्ययनों में सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक कारकों को शिशु मृत्यु के निर्धारण में अत्यधिक महत्व प्रदान किया है । अमीन, मरियम एवं फारूकी ने बांगलादेश के अपने अध्ययन में यह पाया है कि वे शिशु जो कि उच्च सामाजिक, आर्थिक स्तर के हैं, नगरीय परिवेश में रहते हैं तथा जिनके माता-पिता के पास बेहतर सुविधायें हैं उनमें शिशु मृत्यु की दर कम है [42]। इसी प्रकार दास एवं वर्मा ने अपने इण्डोनेशिया में किये गये अध्ययन के आधार पर इस तथ्य पर बल दिया है कि लोगों के जीवन को पौष्टिक आहर देकर अच्छा बनाने की आवश्यकता है । जिससे सामाजिक-आर्थिक पर्यावरण का विकास हो सके । उनके मतानुसार- केवल जनस्वास्थ्य सेवाओं को बढ़ाकर शिशु मृत्यु को कम करने का उद्देश्य पूरा नहीं होगा[43]।

मृत्यु सम्बन्धी समंकों का विकास :

मृत्यु सम्बन्धी सूचनाओं के पंजीकरण का प्रारम्भ कब हुआ यह एक विचारणीय प्रश्न है । इतना तो निश्चित है कि मृत्यु सम्बन्धी पंजीकरण प्रथा सदियों पुरानी है । यह माना जाता है कि प्रारम्भिक काल में मृत्यु सम्बन्धी सूचनाओं को एकत्र करने का कार्य कुछ धार्मिक तथा कुछ आर्थिक पहलुओं पर आधारित था । धार्मिकता के पीछे उस समय मृत्यु के उपरान्त धार्मिक प्रथायें एवं परम्परायें मानी जाती थीं जबकि आर्थिक इसलिये कि मृत्यु के उपरान्त सम्पत्ति के उत्तराधिकारी का प्रश्न पैदा होता था क्योंकि मृत्यु एक पीढ़ी से सम्पत्ति दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित कर देती है । रोमन साम्राज्य के तीसरी सदी के कुछ अभिलेखों को मृत्यु-क्रम सम्बन्धी प्राचीनतम अभिलेख माना जा सकता है जिसमें जीवन तालिका तथा एक पीढ़ी की औसत आयु के सम्बन्ध में सूचनायें उपलब्ध हैं । उत्तरी इटली ने इन्हीं सूचनाओं का उपयोग अनेक सदियों तक किया [44]।

इटली में चौदहवीं सदी से जन्म एवं मृत्यु सम्बन्धी सूचनायें निरन्तार एकत्र की जाती रही हैं । जन्म मृत्यु एवं विवाह सम्बन्धी सूचनाओं का एकत्रीकरण चर्च में किया जाता था । इसी क्रम में समस्त यूरोप जन्म, मृत्यु एवं विवाह सम्बन्धी सूचनायें एकत्र करने लगा । सन् 1558 में थामस क्रामवैल ने हेनरी अष्टम के शासन काल में जन्म, विवाह एवं मृत्यु सम्न्धी सूचनायें एकत्र करने के आदेश दिये ।

---

(42) अमीन, आर0 मरियम, ए0जी0 एण्ड फारूकी, आर0, 1986, इनफेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टैलिटी इन बांगलादेश, 1959-1976, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 1, पेज 43 ।

(43) दास वर्मा, जी0एल0, 1986, इनफेन्ट मार्टैलिटी इन इण्डोनेशिया: ए रिव्यू आफ रीसेन्ट एवीडेन्स, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 1, पेज 81 ।

(44) हाउजरः फिलिप एम0 एण्ड डंकनः ओरीस डूडले, (1959), दि स्टडी आफ पापुलेशनः ऐन [illegible] शिकागो विश्वविद्यालय शिकागो प्रेस पेज 437 ।

कालान्तर में महामारियां एवं बीमारियां फैलने से मृत्यु का दबाव बढ़ा अतः मृतकों की सूचियां, कारण, आयु आदि सम्बन्धी सूचनायें समय-समय पर प्रकाशित की जाने लगीं । सन् 1582 में इस प्रकार के आँकड़ों को एकत्रित कर व्यवस्थित रूप से प्रकाशित किया गया । मृत्यु सम्बन्धी सूचनाओं को आधुनिक रूप से एकत्र करने, वर्गीकरण एवं विश्लेषण करने का श्रेय जान ग्राउण्ट को है । जिन्होंने सन् 1662 में अपनी पुस्तक "नेचुरल एण्ड पोलिटिकल आब्जरवेशन मेन्सण्ड इन दि फालोइंग इण्डेक्स एण्ड मेड अपान दि विल्स आफ मार्टेलिटी प्रकाशित की"[45] । ग्राउण्ट का यह अध्ययन न केवल मृत्यु क्रम एवं जीवन प्रत्याशा का प्रारम्भ है वरन् समस्त जनांकिकी शास्त्र का उद्गम स्थान यही पुस्तक है ।

इस पुस्तक के आधे भाग में मृत्यु के कारणों की व्याख्या की गई है तथा आधे भाग में प्रजनन, मृत्यु, देशान्तरण, विवाह एवं पारिवारिक समंकों का विश्लेषण किया गया है । जान ग्राउण्ट के समकालीन विलियम पेट्टी ने 1690 में "पोलीटिकल अर्थमैटिक" प्रकाशित की जिसमें उनहोंने अपने जनसंख्या के विस्तार, संरचना, शहरीकरण, श्रमिकों की संख्या, बेरोजगारी एवं राष्ट्रीय आय से सम्बंधित विचारों को व्यक्त किया है । जनांकिकी के इस प्रारम्भिक विकासकाल में इसे प्राकृतिक विज्ञान से सम्बद्ध माना गया, जैसा कि ग्राउण्ट महोदय ने 'नेचुरल' शब्द से प्रकट किया है तथा इसका उद्देश्य मुख्य रूपसे राजनैतिक माना गया ।

ग्राउण्ड एवं पेट्टी के काल के पश्चात जनसंख्या सम्बन्धी विचारों ने अन्य विज्ञानों के विद्वानों को भी आकर्षित किया । ज्योतिष विज्ञान के विद्वान एडमण्ड हैले ने ब्रेसलु के एक चर्च से प्राप्त जन्म एवं मृत्यु के समंकों के आधार पर जीवन तालिका का निर्माण किया । बाद में रिचार्ड प्राइस ने स्वीडन की जनसंख्या के आधार पर जीवन तालिका का संशोधित रूप प्रस्तुत किया लेकिन इसका और भी प्रमाणिक रूप 1783 में नार्थम्पटन तालिका में प्रकाशित मिलता है जो नार्थम्पटन क्षेत्र के मृत्यु समंको पर आधारित थी ।

सन् 1755-57 के काल की जन्म एवं मृत्यु सम्बन्धी सूचनाओं के आधार पर सर्वप्रथम स्वीडन ने जीवन तालिका का निर्माण किया । यह तालिका सारे देश की सूचनाओं पर आधारित थी जिसमें आयु एवं लिंग के अनुसार जनसंख्या का वर्गीकरण किया गया था । सन् 1748 में स्वीडन में एक अधिनियम पास किया गया जिसके आधार पर सारे देश में जन्म एवं मृत्यु सम्बन्धी सूचनाओं का पंजीकरण अनिवार्य कर दिया गया । अतः विश्व में स्वीडन प्रथम देश है, जिसने जनांकिकी घटनाओं को अधिनियम के माध्यम से पंजीकृत करना अनिवार्य किया । किन्तु विश्व के अन्य देशों में इस ओर विशेष प्रगति नहीं हुई । जब राष्ट्रीय सरकारें विकसित हुई तथा राष्ट्रीय समस्याओं की ओर सरकारों ने ध्यान देना

---

(45) राज, डा० हंस, (1978), फण्डामेन्टल्स आफ दि डेमोग्राफी, पापुलेशन स्टडीज विथ स्पेशल [illegible]

प्रारम्भ किया, तो जनसंख्या, जन्म एवं मरण सम्बन्धी आंकड़े, व्यापार, वाणिज्य, अपराध, गरीबी आदि सम्बन्धी सूचनाओं की आवश्यकता महसूस होने लगी । अतः एक निश्चित अवधि के बाद जनगणना किये जाने का विचार प्रारम्भ हुआ ।

1798 में माल्थस का जनसंख्या सम्बन्धी निबन्ध प्रकाशित हुआ जिसमें जनसंख्या बृद्धि एवं जीवन निर्वाह के साधनों में होने वाली बृद्धि को नियंत्रित करने के लियेनैतिक संयम पर बल दिया गया जिससे भुखमरी एवं प्राकृतिक प्रकोपों से बचा जा सके । माल्थस का यह निबन्ध समंकों पर आधारित नहीं था । इस लेख के प्रकाशन के पश्चात उन्होंने स्कैंडनेवियन देशों की जनांकिकीय समंकों के आधार पर अपने लेख का दूसरा संस्करण प्रकाशित किया । जनसंख्या के सम्बन्ध में इसी प्रकार के विचार चीन के दार्शनिक हुंग लियांग ची द्वारा भी प्रकट किये गये हैं । लेकिन मार्क्स इनविचारों से सहमत नहीं था। उसने इनकी कट आलोचना की, जनाधिक्य की समस्या को बेकारी एवं गरीबी के संदर्भ में विश्लेषित किया गया । मार्क्स के विचार में गरीबी और बेकारी की जड़ें सामाजिक संरचना में निहित पायी जाती हैं। सन् 1837 में ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने एक अधिनियम पारित कर विलियमफार को जीवन समंकों का दायित्व सौंपा । विलियम फार आंकड़ों के एकत्रीकरण एवं तालिका की अपेक्षा सूचनाओं के आधार पर समाज सुधार करने में अधिक रूचि रखते थे । अतः उन्होंने मृत्यु सम्बन्धी घटनाओं के कारण एवं परिणामों की खोज बीन प्रारम्भ कर दी [46]।

उत्तरी अमेरिका में जीवन समंकों का एकत्रीकरण देर से प्रारम्भ हुआ । 20वीं सदी से पूर्व 48 राज्यों में से केवल 14 राज्यों में इनके पंजीकरण की व्यवस्था थी । सन् 1902 में संयुक्त राज्य अमेरिका के जनगणना ब्यूरो को एक स्थाई संस्था बनाया गया । सन् 1933 में प्रथम बार जीवन समंकों ने सारे देश से सम्बन्धित सूचनायें एकत्र कीं ।

भारत में जन्म-मृत्यु समंकों का विकास :

प्राचीन भारतीय विचारों के इतिहास में जनसंख्या समंकों के संकलन के प्रमाण मिलते हैं । 'कौटिल्य काअर्थशास्त्र', ईशा पूर्व 321-269 की ऐसी मौर्यकालीन कृति है जो आर्थिक एवं कृषि सम्बन्धी जनसंख्या की गणना के लिये विभिन्न पद्धतियोंकी विशद् व्याख्या प्रस्तुत करती है । अकबर के काल में ऐसी ही एक दूसरी कृति 'आइने अकबरी' है जो जनसंख्या, उद्योग, सम्पत्ति, एवं अन्य विशेषताओं के आधार पर तथ्यों की समीक्षा प्रस्तुत करती है जिनका उद्देश्य प्रशासनिक प्रक्रियाओं के संचालन में सुविधा प्रदान करता था । जनसंख्या समंकों के संकलन के प्रमाण उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के पूर्व तक इसी प्रकार छिटपुट रूप से ही प्राप्त होते हैं ।

---

(46) हाउजर, फिलिप, एम0 एण्ड डंकन ओरिस डूडले, (1959) दि स्टडी आफ पापुलेशन, ऐन इन्वेन्ट्री एण्ड ए प्राइजल, शिकागो विश्वविद्यालय, शिकागो, प्रेस, पेज 38 ।

भारत में जनांकिकीय समंकों का श्रोत जन्म एवं मृत्यु सम्बन्धी घटनाओं के पंजीकरण को माना जाता है । जन्म एवं मृत्यु के पंजीकरण की प्रणाली भारत में सन् 1870 से शुरू हुई । यह पंजीकरण जनगणना से स्वतन्त्र तथा देश के प्रत्येक स्थान में निरन्तर सम्पन्न होने वाली प्रक्रिया है । प्रायः विभिन्न प्रकार के प्रशासकीय उद्देश्यों से जन्म एवं मृत्यु का पंजीकरण होता आ रहा है, गांव एवं शहरों में जन्म-मृत्यु का पंजीकरण भारत में अभी भी पूरी तरह से व्यवस्थित एवं संतोषप्रद नहीं है । डा0 एस0 चन्द्रशेखर ने लिखा है कि "भारत की जनगणना के आंकड़े तथा जीवन समंक पूर्ण रूप से ठीक नहीं है"। भारत सरकार के प्रयत्नों के बाद भी ये आंकड़े पूर्ण रूप से विश्वसनीय नहीं है । ये इन आंकड़ों को सही स्थिति दर्शाने के स्थान पर केवल प्रवृत्तियों को ही दर्शाते हैं[47]। समय-समय पर जीवन समंकों के इन पंजीकरणों को अधिक व्यवस्थित एवं उपयोगी बनाने के प्रयास किये गये किन्तु जिस प्रकार पंजीकरण सथानीय प्रशासन का एक विशेष उत्तरदायित्व बन चुका है, वह प्रशासन की आवश्यकताओं की दृष्टि से अपेक्षाकृत आधुनिक एवं उपयुक्त नहीं है । 1946 में एक "स्वास्थ्य सर्वेक्षण एवं विकास समिति" का गठन सरकार ने किया था । इस समिति ने पंजीकरण प्रणाली को सुधारने के अनेक सुझाव दिये जिस पर सभी राज्यों एवं केन्द्र के स्वास्थ्य मंत्रियों ने विचार किया । इसके बाद भारत में "जीवन समंक समिति" गठित हुई जिसके सुझाव पर रजिस्ट्रार जनरल के कार्यालय का निर्माण हुआ । रजिस्ट्रार जनरल पदेन जनगणना प्रक्रिया का भी सर्वोच्च अधीक्षक तथा निदेशक होता है । रजिस्ट्रार जनरल ने जनसंख्या सलाहकार समिति का निर्माण कर उसकी सहायता से पूरे देश में जन्म एवं मृत्यु के समंकों को प्राप्त करने के लिये 1953-1954 में नमूना सर्वेक्षणों सेस्थानीय पंजीकरण की त्रुटियों तथा अव्यवस्था को कम करने में सहायता मिलती है । सन् 1960 में जीवन समंको का पंजीकरण विभाग स्वास्थ्य विभाग से रजिस्ट्रार जनरल के कार्यालय में स्थानान्तरित हुआ ।

रजिस्ट्रार जनरल के कार्यालय में जीवन समंक पंजिका विभाग एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में संगठित हुआ । सहायक रजिस्ट्रार जनरल विभिन्न क्षेत्रों में जाकर जीवन समंकों का समान तथा विश्वसनीय पद्धति से संकलित करने के लिये नियुक्त हुये । पंजीकार अधीक्षक तथा सहायक अधीक्षकों के 1961 के एक सम्मेलन में जीवन समंकों के पंजीकरण को अधिक सुदृढ़ बनाने के लिये कुछ आवश्यक कानून पारित करने के सुझाव केन्द्र सरकार को दिये गये ।

जीवन समंकों का नमूना सर्वेक्षण एक निरन्तर गणना की प्रक्रिया है । इसमें एक स्थानीय अंशकालीन गणक प्रत्येक स्थान में जन्म-मरण की घटनाओं का अंकन करता रहता है जिसकी जांच पड़ताल महीने या दो महीने पर एक जिला निरीक्षक द्वारा की जाती है । 1964 में इस नमूना सर्वेक्षण

---

(47) चन्द्रशेखर, एस0, (1959), एशियाज पापुलेशन प्राब्लम, शिकागो विश्वविद्यालय, शिकागो प्रेस, पेज 73 ।

प्रणाली को प्रायोगिक रूप में बिहार, गुजरात, केरल, महाराष्ट्र तथा कर्नाटक में लागू किया गया । 1966 में पूरे देश में उसी पद्धति का प्रयोग नियमित रूप से आरम्भ हुआ । नमूना सर्वेक्षण के इस देश व्यापी प्रबन्ध के कारण अब जन्म तथा मृत्यु सम्बन्धी आंकड़े आयु विशिष्टि जन्म तथा मृत्यु-दरें तथा बाल-मृत्यु समंक अधिक विश्वसनीय तथा नियमित रूप से उपलब्ध होने लगे हैं ।

मृत्यु समंकों की सीमायें :

यद्यपि मृत्यु समंक बहुत प्राचीन काल से एकत्र होते रहे हैं, किन्तु आज भी विश्व की केवल आधी जनसंख्या के ही मृत्यु सम्बन्धी आंकड़े विश्वसनीय पाये जाते हैं । जिन देशों में मृत्यु-दर ऊँची है उनमें ही ये आंकड़े अधिक दोषपूर्ण हैं । यह कितनी विडम्बना है कि जिन देशों मे इन आंकड़ों का सर्वाधिक महत्व हैं वहीं इनका एकत्रीकरण दोषपूर्ण है ।

यह देखा जाता है कि मृत्यु सम्बन्धी उन्हीं आंकड़ों की उपयोगिता होती है जिनमें मृत्यु की घटना के साथ मृतक की आयु उसकी जाति, व्यवसाय, मृत्यु के कारण आदि का उल्लेख हो । किन्तु विश्व के अधिकांश राष्ट्रों ने इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया है । यू0एन0ओ0 के तत्वावधान में प्रकाशित जनांकिकी वार्षिक अंक (डिमोग्राफिक इयर बुक) से ज्ञात होता है कि केवल विश्व की एक चौथाई जनसंख्या के विषय में मृत्यु क्रम की उचित सूचनायें मिलती हैं । विश्व के सभी राष्ट्रों की तुलना करने के लिये एक भी ऐसा समंक नहीं मिलता जिसे विश्वसनीय कहा जा सके । मृत्यु क्रम सम्बन्धी आंकड़ों का दोषपूर्ण होना कुछ कारणों पर निर्भर होता है जिनके सम्बन्ध में हाउजर, फिलिप एवं डंकन ने अपने मत इस प्रकार दिये हैं[48]।

1- समान परिभाषा को स्वीकार न किया जाना ।

2- आंकड़ों को एकत्र करने में सतर्कता न बरतना ।

3- सूचना देने वाले व्यक्ति द्वारा अशुद्ध सूचना देना ।

4- आंकड़ों के सारणीयन, वर्गीकरण एवं सम्पादन विधि में निरन्तर परिवर्तन करते रहना ।

5- पंजीयन विधि का बेलोच करना, समयानुसार अथवा अर्न्तराष्ट्रीय मान्यताओं को स्वीकार कर राष्ट्रीय नियमों में परिवर्तन करने की असमर्थता ।

उपरोक्त समस्त सीमाओं के बावजूद मृत्यु क्रम सम्बन्धी प्राप्त सूचनायें काफी महत्वपूर्ण एवं उपयोग होती हैं ।

---

(48) हाउजर, फिलिप, एम0 एण्ड डंकन ओरिस डूडले, (1959), दि स्टडी आफ पापुलेशन, शिकागो विश्वविद्यालय, शिकागो प्रेस, पेज 484 ।

मृत्यु समंकों का महत्व :

मानव ज्ञान के विकास में मृत्यु ने बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । चिकित्साशास्त्र का विकास मृत्यु पर विजय पाने के लिये किये गये परिश्रम का परिणाम है । नीतिशास्त्र एवं धर्मशास्त्र मृत्यु के भय एवं सत्य को उजागर करते हैं तथा अनैतिक आचरण से सचेत करते हैं । दर्शनशास्त्र मृत्यु के रहस्य को खोजता है । मृत्यु वास्तव में कुछ व्यक्तियों की चाह होती है । थोड़े से व्यक्ति मृत्यु के द्वारा पीड़ा मुक्त हो जाते हैं किन्तु यह प्रत्येक शरीर का अन्त है । यद्यपि मृत्यु एक जीव की आयु की समाप्ति की स्वाभाविक प्रक्रिया है तथा यह जीवन की एक अनिवार्य घटना भी है किन्तु दीर्घायु के उपरान्त ही देहावसान स्वाभाविक लगता है । मृत्यु यद्यपि सत्य है तथा अपरिहार्य है किन्तु इसका समय निश्चित होते हुये भी अनिश्चित होता है तथा हर क्षण मृत्यु की सम्भावना बनी रहती है । यही कारण है कि जनांकिकी ने मृत्यु को एक रहस्य, ईश्वरीय अंकुश आदि के रूप में नहीं देखा वरन् इसे एक जनांकिकीय घटना माना तथा इसे प्रजनन की भाँति जनसंख्या निर्धारण का एक घटक मात्र माना है ।

प्रायः यह देखा जा रहा है कि मृत्यु क्रम न केवल जनसंख्या के परिमाण को प्रभावित करता है वरन् उसके गठन एवं स्वरूप तथा रीति-रिवाजों तक को प्रभावित करता रहता है ।

जनांकिकी विषय की सर्वाधिक विकसित शाखा मृत्यु-दर को मापने की विधियां है । यह एक ऐसा विषय है जिस पर पर्याप्त अध्ययन हो चुका है, क्योंकि यह विषय व्यवहारिक उपादेयता की दृष्टि में महत्वपूर्ण है । व्यापारिक कम्पनियां विशेषकर बीमा कम्पनी का समस्त व्यवसाय मृत्यु सम्बन्धी समंक ही है । बीमे के प्रीमियम की किस्त मृत्यु की सम्भाविता पर निर्भर करती है जैसे-जैसे मृत्यु-दर घटती है या तो प्रीमियम की दर घटती है या बोनस की दर बढ़ती है[49] ।

मृत्यु सम्बन्धी सूचनायें जीवन प्रत्यासा को प्रभावित करती हैं या मृत्यु-दर की भूत-कालीन मृत्यु सम्बन्धी प्रवृत्तियों को बताती हैं । वर्तमान एवं भूतकालीन मृत्यु सम्बन्धी सूचनाओं के आधार पर भविष्य की दर का अनुमान लगाया जा सकता है । जिससे भविष्य की जनसंख्या का प्रक्षेपण किया जा सकता है ।

मृत्यु सम्बन्धी सूचनायें किसी समाज में उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं पर प्रकाश डालते हैं, ये मृत्यु के कारणों का भी पंजीकरण करते हैं । अतः स्वास्थ्य विभाग इनसे लाभ उठाकर उस दिशा में विशेष कदम उठा सकता है । जिन कारणों से मृत्यु अधिक हो रही है, जैसे - मलेरिया के कारण मृत्यु, चेचक, हैजा आदि से मृत्यु की घटनायें बढ़ने पर स्वास्थ्य विभाग उनके रोक-थाम के लिये विशेष कदम उठा सकता है ।

---

(49) बर्कले, जी0डब्लू0 (1958), टेक्निक्स आफ पापुलेशन एनालिसिस, न्यूयार्क, जान वेली एण्ड

अन्त में यह कहा जा सकता है कि मृत्यु-दर किसी देश या समाज की जन्मदर को भी प्रभावित करती है । यदि मृत्यु-दर ऊँची होती है तो जन्म दर भी ऊँची होती है । नीची मृत्यु-दर वाले समाज में जन्म-दर भी निम्न होती है । भारत में जन्म-दर ऊँची होने का एक प्रमुख कारण ऊँची शिशु मृत्यु-दर है । शिशु मृत्यु-दर, मृत्यु का एक महत्वपूर्ण सूचक है । वास्तव में मृत्युदर में अधिकांश परिवर्तन शिशु मृत्यु-दर में परिवर्तन के फलस्वरूप ही होते हैं ।

मौलिक प्रत्ययों की परिभाषा :

शिशु मृत्यु :

मृत्यु सम्बन्धी आँकड़ों का पंजीकरण वैज्ञानिक औपचारिकताओं को पूरा करने के लिये किया जाता है । जबकि जनगणना के आकार सम्बन्धी सूचनाओं को केवल सांख्यकीय उद्देश्य के लिये एकत्र किया जाता है । मृत्यु सम्बन्धी सूचना देना सम्पत्ति एवं उत्तराधिकार की दृष्टि से बहुत आवश्यक हो जाता है । अतः मृत्यु का प्रमाण पत्र एकसांख्यकीय प्रपत्र की अपेक्षा एक विधि प्रपत्र अधिक होता है । अतः इस प्रपत्र को निर्गमित करने से पूर्व अनेक सूचनायें एकत्र की जाती हैं लेकिन प्रश्न मृत्यु एवं शिशु मृत्यु को परिभाषित करने का है ।

अधिकांशतः मृत्यु उस शरीर का अंत है जिसका जन्म हुआ था । किन्तु जीवित प्रसव के सम्बन्ध में मतभेद है । स्पेन, क्यूबा, इक्वाडोर तथा हौन्डरास में एक नवजात शिशु जो 24 घण्टे से अधिक जीवित नहीं रहता है, को गर्भ समापन में शामिल किया जाता है । अतः न वह जीवित प्रसव में शामिल किया जाता है तथा उन उसकी मृत्यु को मृत्यु में शामिल किया जाता है । कुछ देशों में जीवित जन्म उन्हीं बच्चों का माना जाता है जो पंजीकरण के दिन जीवित थे । पंजीकरण जन्म से बहुत दिन बाद तक भी किया जा सकता है । जो बच्चे पंजीकरण के पूर्व मर जाते हैं उन्हें भ्रूण-मृत्यु की संज्ञा दी जाती है[50]। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अर्न्तराष्ट्रीय उपयोग के लिये जीवित प्रसव की परिभाष देते हुये कहा है कि जब किसी गर्भाधान के फलस्वरूप कोई शिशु जन्म लेता है तथा उसमें जीवन होता है, जीवन का प्रमाण उस शिशु के स्वांस लेने, हृदय गति अथवा नाड़ियां अथवा शरीर के किसी अंग की हरकत से मिलता है । ऐसे शिशु कि गर्भावधि चाहे कितनी ही कम हो, चाहे उसकी नाल काटी गई हो अथवा नहीं, ऐसे प्रसव को जीवित प्रसव कहा जाता है[51]। इस जीवित प्रसव को आधार मानकर विश्व स्वास्थ्य

---

(50) यूनाइटेड नेशन (1953), दि हिस्ट्री आफ पापुलेशन थियरी, न्यूयार्क, पेज 53। ।

(51) ब्रोकिंगठन, सी0 एफ0, (1967) वर्ड हेल्थ चर्चिल, लन्दन, पेज 18 ।

संगठन ने मृत्यु को परिभाषित करते हुये कहा है कि यदि जीवित पैदा हुआ बच्चा पंजीकृत कर लिया गया है, उसके बाद ही उसकी मृत्यु क्यों न हो जाय वह मृत्यु की श्रेणी में रखा जायेगा [52]।

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा दी गई परिभाषा को सभी देशों द्वारा अपनाये जाने में समय लगेगा क्योंकि देशोंकीअपने विधान में परिवर्तन करना होगा । चूँकि भ्रूण मृत्यु की परिभाषा के सम्बन्ध में मतैक्य नहीं है, अतः मृत्यु के पंजीकरण के आंकड़े तुलनीय नहीं हो पाते हैं । विश्व स्वास्थ्य संगठन ने सभी प्रकार के भ्रूण मृत्युओं को मृत्यु-क्रम से बाहर माना है[53]।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की धारणा है कि ऐसी समस्त भ्रूण मृत्यु को भी अलग से पंजीकृत किया जाना चाहिए । यदि यह सम्भव न हो सके तो कम से कम 28 सप्ताह जिसने गर्भ में पूरे किये हैं उसकी भ्रूण मृत्यु का पंजीकरण करना आवश्यक होना चाहिए । विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भ्रूण मृत्यु के पंजीकरण के सम्बन्ध में निम्न वर्गीकरण अपनाया है ।

(1) वे भ्रूण-मृत्यु जो 20 सप्ताह पूरे होने से पूर्व हो जाती है ।

(2) 20 से 28 सप्ताह के दौरान हुयी भ्रूण मृत्यु ।

(3) 28 सप्ताह पूरे होने के उपरान्त हुयी भ्रूण मृत्यु ।

(4) वे भ्रूण मृत्यु जो उपर्युक्त वर्गीकरण में न आ सकी हो ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने यह विचार व्यक्त किया है कि जब तक जीवित प्रसव एवं भ्रूण-मृत्यु की एक ही परिभाषा विश्व के सभी देशों द्वारा नहीं अपनाई जायेगी, मृत्यु सम्बन्धी सूचनायें तुलनीय नहीं हो सकेगी ।

अपने प्रयोजन के लिये हमारा शिशु मृत्यु से आशय उन जीवित जन्मों के समापन से है जो अपनी पहली वर्षगांठ मनाने से वंचित रह जाते हैं अर्थात अपने जीवन का पहला वर्ष पूरा करने से पूर्व ही काल के मुँह में चले जाते हैं ।

---

(52) हाउजर, फिलिप एम0 एण्ड डंकन, ओरिस डूडले, दि स्टडी आफ पापुलेशन (1959), पेज 442 ।

(53) हाउजर, फिलिप एण्ड डंकन, 1959, 442 ।

मृत्यु-दर :

मृत्यु-दर का मापन इस बात पर निर्भर करता है कि मृत्यु किस घटना से सम्बंधित है इसका आंकलन मृत्यु प्रमाण पत्र कार्यालय से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर किया जाता है । इस कार्यालय में जीवन के अंतिम संस्कार पूर्ण होने से पूर्व सूचना दे दी जाती है । जहाँ सम्बंधित अधिकारी मृत्यु का रजिस्ट्रेशन करके उसे प्रमाण पत्र प्रस्तुत करता है । इन आंकड़ों के आधार पर मृत्यु सम्बन्धी घटनाओं के प्रमापन के लिये विभिन्न मृत्यु-दरों की स्थापना की जाती है । जिस समय मृत्यु-दर निकालने की प्रक्रिया शुरू की जाती है उस समय निम्नांकित बातों पर विशेष रूप से ध्यान देना आवश्यक होता है ।

(1) मृत्यु सम्बन्धी घटनाओं को किसी निश्चित क्षेत्र की समग्र जनसंख्या के समस्त अनुपात में देखा जाता है ।

(2) मृत्यु की घटनायें कुछ विशिष्ट आयु समूहों से विशेष प्रकार से सम्बंधित होती है । इसलिए मृत्यु-दरों के निर्धारण में आयु समूहों का भी ध्यान रखा जाता है ।

(3) विभिन्न समाजों अथवा समूहों की मृत्यु सम्बंधी घटनाओं की तुलना के लिये किसी एक प्रमाणित जनसंख्या की कल्पना की जाती है तथा इसी के अनुरूप, आयु, लिंग, वैवाहिक स्थिति, शैक्षिक स्थिति आदि के संदर्भ में निर्धारित मृत्यु-दर तुलनात्मक अध्ययन के लिये ठोस आधार प्रदान करती है ।

(4) मृत्यु की घटनायें कुछ विशिष्ट आयु समूहों में कुछ विशिष्ट कारणों अथवा बीमारियों के माध्यम से घटित होती है । इसलिए मृत्यु-दर के निर्धारण में ऐसे कारणों पर भी ध्यान देना होता है ।

मृत्यु का जनसंख्या पर दबाव मापने के लिये मृत्यु-दरों का प्रयोग किया जाता है । मृत्यु-दरें दो अथवा दो से अधिक देशों, स्थानों, शहरों, अथवा समयों के बीच मृत्यु के दबाव का तुलनात्मक अध्ययन करती है । ये मृत्यु दरें, मृत्यु सम्बन्धी घटनाओं के प्रमापन के लिये अनेक प्रकार से निकाली जाती हैं ।

(1) अशोधित अथवा अपरिष्कृत मृत्यु-दर ।

(2) आयु विशिष्ट मृत्यु-दर ।

(3) प्रमापित अथवा मानकीकृत मृत्यु-दर ।

(4) विशिष्ट मृत्यु-दर ।

(5) शिशु मृत्यु-दर ।

यहाँ पर हमारा प्रयोजन केवल शिशु मृत्यु से है अतः केवल उसी की मापन दर को लिया जा रहा है ।

शिशु मृत्यु-दर :

शिशु मृत्यु-दर को ज्ञात करने के लिये एक वर्ष की आयु अवधि में मृतक शिशुओं की संख्या तथा उसी वर्ष की सम्पूर्ण सजीव जन्म लिये बच्चों की संख्या के साथ स्थापित प्रति हजार के अनुपात का आधार मानते हैं ।

अर्थात एक वर्ष की आयु अवधि के अन्दर मरने वाले शिशुओं की सम्पूर्ण संख्या को उस वर्ष की सम्पूर्ण जन्म सम्बन्धी घटनाओं से भाग देकर और उसमें (1000) से गुणा करके इस दर को प्रति हजार व्यक्तियों के आधार पर ज्ञात करते हैं ।

यही आधार गर्सिया वाई गारमा ने भी अपनाया है[54]।

$$\text{शिशु मृत्यु-दर} = \frac{\text{एक वर्ष में शिशु मृत्यु की कुल संख्या}}{\text{एक वर्ष में नवजातों की कुल संख्या}} \times 1000$$

शिशु मृत्यु को भी दो भागों में विभक्त किया गया है । यह विभाजन सामान्यतः मृत्यु के कारणों पर ही आधारित है । कुछ बच्चे जन्म से ही शारीरिक रूप से अपरिपक्व होते हैं अतः उनकी मृत्यु अतिशीघ्र हो जाती है । दूसरी तरफ कुछ बच्चे शारीरिक रूप से पुष्ट होकर जन्म तो लेते हैं परन्तु सामाजिक परिवेश में विकृति के कारण नाना प्रकार की व्याधियों से ग्रस्त हो कर मर जाते हैं । शिशु मृत्यु के इन दोनों प्रकारों की जो परिभाषा इस अध्ययन में स्वीकार की गई है, वह निम्न है :-

नियोनेटल मृत्यु :

जन्म के प्रथम दिन से चार सप्ताह तक हुई मृत्यु नियोनेटल कहलाती है ।

पोस्ट-नियोनेटल मृत्यु :

चौथे सप्ताह के उपरान्त एवं 365 दिन के अन्दर हुई मृत्यु को पोस्ट-नियोनेटल मृत्यु कहते हैं ।

सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति :

सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति का शिशु मृत्यु से निकट का सम्बन्ध है । ऐसा परिकल्पित है कि उच्च सामाजिक आर्थिक प्रस्थिति वाले व्यक्तियों में शिशु मृत्यु-दर कम तथा निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के लोगों में यह अपेक्षाकृत उच्च होती है ।

---

(54) गार्सिया, वाई गारमा, एण्ड इरमा, ओलाया, (1983) सम फैक्ट्स एसोसिएटेड विथ इन्फेन्ट मार्टैलिटी इन दि वर्ड, पेज 98 ।

सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति अनुमाप के लिये संध्या[55] द्वारा प्रयुक्त प्रमापक का उपयोग किया गया है । इस प्रमापक में समाहित सामाजिक तथा आर्थिक पक्षों तथा प्रत्येक को दिये गये अंको का विवरण सारणी 1.3 में प्रस्तुत है ।

सारणी 1.3

सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति में सामाजिक-आर्थिक चरों का समूहीकरण

परिवार की आय	जाति	मकान का स्वरूप	कच्चा/कोई मकान नहीं			मिश्रित			पक्का		
		शिक्षा का स्तर	निम्न	मध्यम	उच्च	निम्न	मध्यम	उच्च	निम्न	मध्यम	उच्च
0-10,000	निम्न		1	1	2	1	2	3	2	3	4
	मध्यम		1	2	3	2	3	4	3	4	5
	उच्च		2	3	4	3	4	5	4	5	6
10,000-20,000	निम्न		1	2	3	2	3	4	3	4	5
	मध्यम		2	3	4	3	4	5	4	5	6
	उच्च		3	4	5	4	5	6	5	6	7
20,000-अधिक	निम्न		4	5	6	5	6	7	6	7	8
	मध्यम		5	6	7	6	7	8	7	8	9
	उच्च		7	8	9	8	9	10	9	10	11

(55) संध्या, एस0, 1986, सोशियो-कल्चरल एण्ड इकोनोमिक कोरिलेट्स आफ इनफेन्ट मारटेलिटी, ए केश स्टडी आफ आन्ध्र प्रदेश, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 1, पेज 89 ।

विविध चरों और उन्हें दिये गये अंकों के आधार पर कुल पाँच वर्ग प्राप्त हुये जिनका विवरण सारणी 1.4 में प्रस्तुत है ।

सारणी 1.4

प्राप्तांक के आधार पर स्त्रियों के वर्ग प्रतिशत में ।

वर्ग	प्राप्तांक	स्त्रियां
1- उच्च वर्ग	9, 10, 11	4.25
2- उच्च मध्यम वर्ग	7, 8	11.25
3- निम्न मध्यम वर्ग	5, 6	24.25
4- निम्न वर्ग	3, 4	28.5
5- अतिनिम्न वर्ग	1, 2	31.75

सांख्यकीय दृष्टि से शिशु मृत्यु के साथ सम्बन्ध देखने के लिये केवल तीन वर्ग रखे गये हैं

(1) उच्च वर्ग को उच्च वर्ग का ही नाम दिया गया है ।

(2) उच्च मध्यम एवं निम्न मध्यम को एक साथ मिलाकर उसे मध्यम वर्ग कहा गया है और

(3) निम्न और अति-निम्न को एक साथ मिलाकर निम्न वर्ग कहा गया । इस प्रकार सुविधा जनक विश्लेषण के लिये तीन वर्ग श्रेणियां रह गयीं । उच्च, मध्यम एवं निम्न वर्ग । इन्हें सारणी 1.5 में दर्शाया गया है ।

सारणी 1.5

स्त्रियों कीवर्ग-श्रेणी प्रतिशत में ।

वर्ग श्रेणी	स्त्रियों का प्रतिशत
1- उच्च वर्ग	4.25
2- मध्यम वर्ग	35.5
3- निम्न वर्ग	60.25

शोध अभिकल्प :

योजनानुसार कार्य करना सम्पूर्ण प्रक्रिया पर नियंत्रण प्रदान करता है । यही योजना अभिकल्प है । अभिकल्प में पहले से ही उन निर्णयों को लिया जाता है जिनके लिये बाद में उपयुक्त वातावरण जुटाया जाता है और जिनका तथ्यात्मक परीक्षण किया जाता है ।

रीति विधान, अभिकल्प से अधिक व्यापक प्रत्यय है । शोध के निर्णयों (उपकल्पनायें) का पूर्व मूल्यांकन अभिकल्प की कथा वस्तु है । रीति विधान में निर्णयों का पूर्व मूल्यांकन तो होता ही है उन विधियों का भी मूल्यांकन होता है जिनसे शोध की सामग्री एकत्रित की गई है । शोध का 'कैसे' अभिकल्प है तथा शोध का 'क्यों' रीति विधान है । गृह निर्माण से पूर्व नीला नक्सा बनाना अभिकल्प है, किन्तु नीले नक्से का आवश्यकताओं के अनुसार मूल्यांकन करना तथा निर्माण योजना की भी परीक्षा करना रीति-विधान है[56]।

अभिकल्प तथा रीति विधान शोध के प्राण हैं । अच्छे अभिकल्प तथा रीति विधान के अभाव में वैज्ञानिक मूल्य के परिणाम पा लेना असम्भव बात है । अभिकल्प तथा रीति विधान में आशातीत उन्नति होने से ही आज मन का विज्ञान जिसे पहले विज्ञान का स्तर प्रदान करने में संकोच होता था, विज्ञान हो चला है । विज्ञान के निरन्तर एवं तीव्र विकास ने, विशेषकर सांख्यकीय विधियों ने अभिकल्प तथा रीति विधान को विकसित करने में बड़ी सहायता की है[57] ।

शोध अभिकल्प के चरण :

(अ) आदर्श पक्षः-

शोध की समस्या निश्चित होने पर शोधकर्ता इस स्थिति में आ जाता है कि समस्याध्ययन का उचित मार्ग खोज निकाले । खोज के इस लम्बे किन्तु स्पष्ट मार्ग में, समस्या निर्धारण के पश्चात आदर्श अभिकल्प निश्चित करना होता है । आदर्श अभिकल्प शोध के भभ्यतम् रूप के विषय में शोध कार्य का सुनहला स्वप्न होता है । इसमें शोधकर्ता को यह अवसर मिलता है कि यदि वह एकदम मुक्त तथा समर्थ रहा होता तो शोध का कौन सा भभ्यतम् रूप उसके आगे होता । किस प्रकार का शोध करके परमानन्द आता ? इसे बाल कल्पना नहीं मानना चाहिए वरन् शोध प्रक्रिया का यह महत्वपूर्ण

---

(56) चैपिन, एफ0 एस0 (1947), इक्सपेरीमेन्टल डिजाइन इन सोशियोलाजिकल रिसर्च: न्यूयार्क, हारपर एवं रो पब्लिशर्स पेज- 39 ।

(57) चैपिन, 1947: 39 ।

गुणात्मक मानदण्ड है । इसे आधार तथा उद्देश्यमान कर शोध की व्यावहारिक प्रक्रिया का मूल्यांकन हो सकता है और उसे अधिक से अधिक भभ्यतम् बनाने का यत्न हो सकता है । इससे कार्यात्मक पक्ष की सीमायें तथा न्यूनतायें ज्ञात हो सकती हैं और शोध के प्राप्त परिणामों को इन सबसे समन्वित किया जा सकता है[58] ।

आदर्श अभिकल्प में, शोध की परम प्रभावकारी परिस्थितियां, प्राविधियां, व्यक्ति तथा व्यवहार लिये जा सकते हैं । जो शोध को सुन्दरतम् स्तर पर ले जाने में समर्थ हो, इसलिए इस अभिकल्प में चार बातों पर पर्याप्त बल दिया जाता है[59]।

1- अवलोकनीय व्यक्ति ।

2- अवलोकनीय परिस्थितियां ।

3- अवलोकनीय उत्तेजन ।

4- अवलोकनीय प्रतिक्रियायें ।

इन चारों में से प्रथम तीन (व्यक्ति, परिस्थितियां तथा उत्तेजन) मुक्तचर हैं तथा चौथा (प्रतिक्रियायें) आश्रित चर है ।

आदर्श अभिकल्प शोध की एक प्रतीकात्मक संरचना है । शोध के सभी तत्व इसमें बीज के रूप में अवस्थित रहते हैं । सारा कार्य इसमें प्रत्ययों के माध्यम से चलता है । अतः उपयुक्त प्रत्ययों का चयन अत्यन्ता ही आवश्यक है । शोध के प्रसंग में हमें जिन व्यक्तियों, घटनाओं तथा लक्षणों का प्रत्यय चाहिए, इसे निश्चित करने के उपरान्त आवश्यक है कि इन प्रत्ययों की परिभाषा दी जाय । इस प्रकार दो वस्तुयें आवश्यक होती हैं[60] ।

1- प्रत्यय चयन के लिये उचित कसौटी ।

2- सिद्धान्त जो वैज्ञानिक परिभाषा देने में निर्देशन प्रदान कर सके ।

---

(58) गुडे, डब्ल्यू0जे0, एण्ड हाट, पी0एफ0, (1952) मेथड इन सोशल रिसर्च, न्यूयार्क, मैकग्रा-हिल पब्लिसिंग कम्पनी, पेज 69-132 ।

(59) गुडे एण्ड हाट, 1952: 69-132 ।

(60) ग्रानउड: अर्नेस्ट, 1945, इक्सपेरीमेन्टल सोशियोलाजी, ए स्टडी इन मैथड, न्यूयार्क, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, पेज 103 ।

प्रत्यय चयन उन्हीं वस्तुओं के लिये उपयोगी रहता है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शोध की मूल समस्या के समाधान पर प्रभावक रहते दिखायी देते हैं । प्रत्ययों के चयन में गत शोध का अनुभव, साहित्य व गाहन, आदि पर्याप्त सहयोग प्रदान करते हैं । प्रत्ययों के उपयुक्त चयन में वास्तविक सहायक पुस्तकालय ही है फिर भी व्यक्ति की अपनी सीमायें हैं, हो सकता है समस्या के बारे में बड़े महत्व की बातें अन्य ज्ञान क्षेत्रों में उपलब्ध हो । ऐसी बातें कभी-कभी तब मिल जाती हैं जब शोध प्रकाशित होता है तथा उसकी समालोचना बाहर के व्यक्ति करते हैं । यदि यही समालोचनायें शोध के प्रारम्भ में विशेषकर, अभिकल्प, निर्माण के समय उपलब्ध हो जाया करें तो बड़ा काम बन सकता है । ऐसा तभी हो सकता है जब ज्ञान सीमाओं को ढ़ीला किया जाय और दो प्रकार का सहयोग मिलता रहे[61] ।

1- अर्न्तक्षेत्रीय सहयोग ।

2- परस्पर क्षेत्रीय सहयोग ।

प्रत्यय चयन के पश्चात दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि उनकी परिभाषा प्रस्तुत करना । प्रत्यय का उचित अर्थ प्राप्त करना आवश्यक है । पुराने प्रत्ययों के विषय में विशेष कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता । नये प्रत्ययों में कठिनाई रहा करती है । दुर्भाग्य से सामाजिक विषयों में अधिकांश प्रयुक्त प्रत्यय स्पष्ट परिभाषित नहीं है । परिभाषा प्रसंग पर इस प्रकार ध्यान देना चाहिए[62]।

(1) सभी प्राप्त प्रत्ययों का विश्लेषण किया जाय और व्याख्या की जाय । मस्तिष्क में प्रत्ययों की परिभाषाओं का ऐतिहासिक क्रम बना रहे ।

(2) अर्थ की तह में जाने का प्रयत्न किया जाय ।

(3) काम चलाऊ परिभाषा को निरन्तर सोउद्देश्य बनाते रहना चाहिए ।

(4) परिभाषाओं को बहुमुखी आलोचनायें आवश्यक हैं ।

(5) परिभाषा संरचनात्मक तथा कार्यात्मक दोनों ही प्रकार की होनी चाहिए ।

वैज्ञानिक परिभाषा ही काम की वस्तु है । उसके लिये चार बातों का होना आवश्यक है । इन्हें 'ना' 'रा' 'य' 'ण' शब्द से जानते हैं[63]।

---

(61) फिशर आर0, 1951, दि डिजाइन आफ इक्सपेरीमेन्ट, हाफनर, पेज 30 ।

(62) फिशर, 1951, 32 ।

(63) लिण्ड क्वीस्ट: जी0, 1953 डिजाइन एण्ड एनालिसिस आफ एक्सपेरीमेन्ट इन साइकोलोजी एण्ड एजेकेशन, हंगसन, पेज, 16-18 ।

ना- वस्तु जिसमें लक्षण सम्बंधित है ।

रा- वातावरण जिसमें ना का अवलोकन किया जाय ।

य- वे उत्तेजक जिनके सम्मुख 'ना' का वातावरण 'रा' में उपस्थित होना चाहिए ।

ण- उत्तेजनों 'य' के प्रति 'ना' की वातावरण 'रा' में प्रतिक्रिया ।

लक्षणों की परिभाषा में वस्तुओं, घटनाओं की परिभाषायें भिन्न होती है । परिभाषा क्रम की समाप्ति पर तीसरा चरण है, यह तय करना कि आदर्श अभिकल्प की सीमा में किन चरों को स्थिर तथा किन्हें बदलने देना है। इस दिशा में उचित निर्देशन शोध के उद्देश्यों तथा उपकल्पनाओं से मिल सकता है ।

शोध में लक्षणों या चरों के पारस्परिक सम्बन्धों को महत्व दिया जाता है । यह सम्बन्ध तीन प्रकार के हो सकते हैं [64]।

(1) कार्य कारण ।

(2) उत्पादन उत्पाद्य ।

(3) सह गुणकत्व ।

(1) कार्य कारण :

कार्य कारण सम्बन्ध में 'ख' की उत्पत्ति में क पर्याप्त होता है अर्थात जब भी क होगा तो ख अवश्य ही होगा । दोनों में निश्चित सम्बन्ध है । किन्तु सभी सम्बन्ध वातावरण पर आश्रित हैं अतः कारण कभी भी कार्य के लिये पर्याप्त नहीं होता [65]।

(2) उत्पादक उत्पाद्य :

उत्पादक उत्पाद्य सम्बन्ध में जैसे घण्टा पीटा जाय तो ध्वनि होगी । पीटना ध्वनि के लिये आवश्यक है । उत्पादन के लिये दो बातें अवश्य ही होनी चाहिए [66]

(1) ऐसा वातावरण (रा) हो कि जब उसमें (क) को रखा जाय तो (ख) उसका अनुसरण करें । ऐसा वातावरण हो जहाँ शिक्षा प्राप्ति में उन्नति होने पर आय-बृद्धि दिखाई दे ।

(2) वातावरण (रा) ऐसा हो कि यदि उसमें (क) का अभाव हो तो (ख) भी लुप्त बना रहे ।

---

(64) लिण्ड क्वीस्ट, 1953: 21 ।

(65) सोलेमनः आर0, 1949, एन एक्सटेन्सन आफ कन्ट्रोल ग्रुप डिजाइन साइक्लोजिकल बुलेटिन, पेज 91 ।

(66) सोलेमन, 1949: 93 ।

(3) सह गुणकत्व :

सह गुणकत्व में चरों का पारस्परिक सम्बंधित होना तो दिखाई देता है किन्तु यह सम्बन्ध न तो कारण कार्य का होता है और न ही उत्पादक-उत्पाद्य का[67]।

आदर्श अभिकल्प में प्रयुक्त चर के मूल्यों को निश्चित करना एक बड़ी समस्या है । यदि चर मूल्य को स्थिर रखना है तो उसका एक ही मूल्य होना चाहिए । यदि चर के मूल्यों को बदलना है तो निर्देश स्पष्ट होना चाहिए ।

जहाँ तक चरों की गुणात्मकता, मात्रात्मकता का सवाल है, वहाँ यह नहीं भूलना चाहिए कि समस्या जितनी अधिक विशिष्ट होगी, उसे उतना ही अधिक मात्रात्मक होना होगा । वैज्ञानिक मात्रात्मकता केअन्तर्गत चर को मात्रा प्रदान करने के पीछे एक तर्क हुआ करता है और पाये जाने वाले परिणामों में उपयोगिता वर्तमान रहा करती है । इससे प्रयोग में प्रवीणता का समारम्भ होता है और मात्रात्मकता सही-सही रहा करती है ।

गुणात्मकता वस्तु के गुणों, लक्षणों के वर्गीकरण से सम्बंधित है । यथा संगठित, असंगठित, होड़, सहयोग । शोध के आदर्श अभिकल्प में गुणात्मक चरों का वर्गीकरण एकदम स्पष्ट होना चाहिए । वर्गीकरण जहाँ पर क्रमिक विकास का संकेत करता है जैसे- बहुत कम, कम, साधारण, अधिक, बहुत अधिक । ऐसे वर्गीकरण को स्तरित कहा जाता है । स्तरण, चर की संरचना तथा उसके कार्यों के बारे में होना चाहिए ।

(ब) अवलोकन पक्ष :

शोध का प्रारम्भ करने पर शीघ्र ही यह अनुभव करना पड़ता है कि आदर्श अभिकल्प का ब्यूह ज्यों का त्यों नहीं चल सकता । परिस्थितियों की वास्तविकतायें शोधके सपनों में नहीं उतर पातीं और परिणाम स्वरूप आदर्श अभिकल्प में यत्र-तत्र कुछ परिवर्तन करने होते हैं । शोध का यह नया स्तर है और इसे अवलोकन पक्ष कहते हैं[68]।

अवलोकन करते समय कुछ व्यक्ति अपेक्षित सहयोग नहीं प्रदान करते । कुछ मिलते नहीं, कुछ मनाकर देते हैं तब उनसे सहयोग कैसे प्राप्त किया जाय, सहयोग की समस्या व्यक्तियों, वातावरण तथा उत्तेजना के प्रसंग में उठा करती है ।

---

(67) सोलेमन, 1949: 95

(68) कार्ल, एन0 लेलवेनि, (1953), लीगल ट्रेडीसन एण्ड सोशल साइंस मैथड इन बुकिंग इन्स्टीट्यूट कमेटी आन ट्रेनिंग एसाइन रिसर्च मैथड इन दि सोसल साइंस, पेज 113, 114 ।

व्यक्तियों का असहयोग तीन रूप लेना है ।

(1) अप्राप्त होना ।

(2) असहयोग ।

(3) त्रुटिपूर्ण उत्तर ।

इन्हें एक बड़ी सीमा तक दूर भी किया जा सकता है । जैसे पहले समय निश्चित कर लेना, प्रशिक्षित व्यक्तियों को तथ्य संकलन को भेजना । बार-बार मिलने का यत्न करना आदि । यदि बिल्कुल ही अप्राप्य हो तो अन्य समीप के व्यक्तियों से सूचना प्राप्त की जाय । असहयोग दूर करने में योजना का पहले प्रकाशन तथा सहयोग की अपील प्रकाशित करना अच्छा रहता है ।

त्रुटिपूर्ण उत्तरों के लिये आवश्यक है कि उन्हें खोज निकाला जाय मिलान करना आवश्यक है । यदि उत्तरों में समानता दिखाई दे तो उसे अच्छा मानना चाहिए । वातावरण तथा उत्तेजनों के बारे में दोषों का निराकरण के लिये आवश्यक है कि सूचना-पत्री बड़ी सावधानी से बनायी जाय । उसमें विश्वसनीयता तथा वैधता हो[69]।

(स) **कार्यात्मक पक्ष :**

इस पक्ष का उद्देश्य होता है कि जो बातें विशेष रूप में प्रतिदर्श, सांख्यकी तथा अवलोकन पक्षों में रखी गई हैं उन्हें आगे बढ़ाया जाय । शोध के कार्यों, निर्देशों तथा उपकरणों में समाविष्ट विशेष बातों को कार्य रूप में परिणित किया जाय । कार्यात्मक पक्ष में व्यवहृत सावधानियों से शोध योजना पर वास्तविक नियन्त्रण प्राप्त होता है ।

वास्तविक शोध कार्य से पहले उसे परिस्थितियों से सटा देने के लिये तीन प्रकार की कार्य योजनायें महत्वपूर्ण होती हैं ।

(1) मार्गदर्शी अध्ययन ।

(2) पूर्व परीक्षण ।

(3) योजना परीक्षण ।

(1) **मार्गदर्शी अध्ययन :**

मार्गदर्शी अध्ययन स्वभाव से वर्णनात्मक होता है । उसका उद्देश्य होता है शोध कर्ता के सम्मुख उन परिस्थितियों का ज्ञान रखना जो शोध के दौरान विरोध के रूप में रूकावटों के रूप में आ सकती हैं ।

---

(69) मरटन, आर0के0, 1949, सोशल थियरी एण्ड सोशल स्ट्रक्चर, टू वर्ड कोडिफिकेशन आफ थियरी एण्ड रिसर्च, कोलम्बिया यूनीवर्सिटी प्रेस, पेज 55 ।

[2] पूर्व परीक्षण :

पूर्व परीक्षण मूल्यांकन होता है । उसमें शोध के एक या अनेक कार्यात्मक विधियों का परीक्षण होना होता है । इससे उस विधि विशेष के उपयोगी होने का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है ।

[3] योजना परीक्षण :

योजना परीक्षण में समूची कार्यात्मक योजना का मूल्यांकन होना होता है जिससे साफ-साफ पता चल जाता है कि कार्यात्मक योजनाओं में से कौन-कौन सी आगे बढ़ने योग्य है ।

शोध अभिकल्प के प्रकार :-

सभी प्रकार के शोधों का उद्देश्य ज्ञान प्राप्त करना होता है, किन्तु उद्देश्यों की पूर्ति विभिन्न प्रकार से हो सकती है इसी प्रकार शोध अभिकल्प भी अलग-अलग हो सकते है । शोध अभिकल्प चार प्रकार की होती है ।

[1] अन्वेषणात्मक अथवा निरुपणात्मक शोध अभिकल्प

जब किसी शोध कार्य का उद्देश्य किन्ही सामाजिक घटना में अन्तर्निहित कारणों को खोज निकालना होता है तो सम्बंधित रूपरेखा को अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प कहते हैं । इस प्रकार के शोध अभिकल्प में शोध कार्य की रूपरेखा इस प्रकार प्रस्तुत की जाती है कि घटना की प्रकृति व उसकी वास्तविकताओं को खोज निकाला जा सके । अध्ययन विषय के चुनाव के पश्चात उपकल्पनाओं का सफलतापूर्वक निर्माण करने के लिये इस प्रकार के शोध अभिकल्प का अत्यधिक महत्व होता है क्योंकि इसकी सहायता से अध्ययन विषय या समस्या का कार्य कारण सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है । अर्थात अन्वेषणात्मक शोध अभिकल्प कारकों के खोज निकालने की एक योजना है । यह उन आधारों को प्रस्तुत करता है जो कि एक सफल शोध कार्य के लिये महत्वपूर्ण होते हैं ।

[2] वर्णनात्मक शोध अभिकल्प :

किसी विषय या समस्या के संदर्भ में वास्तविक तथ्यों के आधार पर वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत करना वर्णनात्मक शोध अभिकल्प कहलाता है । इसकी आवश्यक शर्त है कि विषय के सम्बन्ध में यथार्थ तथा पूर्ण सूचनायें प्राप्त हों, क्योंकि इनके बिना अध्ययन विषय या समस्या के सम्बन्ध में जो भी वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत किया जायेगा वह वैज्ञानिक न होकर दार्शनिक होगा । क्योंकि वैज्ञानिकता का आधार वास्तविक एवं विश्वसनीय तथ्य ही होते हैं । इस प्रकार के शोध अभिकल्प में तथ्यों का संकलन वैज्ञानिक प्रविधियों के द्वारा किया जाता है ।

(3) निदानात्मक शोध अभिकल्प :

जब किसी शोध कार्य का उद्देश्य किसी समस्या के कारणों के सम्बन्ध में वास्तविक ज्ञान प्राप्त करके उस समस्या के समाधानों को प्रस्तुत करना हो तो इस प्रकार के शोध अभिकल्प को निदानात्मक शोध अभिकल्प कहते हैं । इस प्रकार के शोध में शोधकर्ता समस्या का हल प्रस्तुत करता है, न कि स्वयं समस्या को हल करने का प्रयत्न करता है । शोधकर्ता वैज्ञानिक पद्धतियों के माध्यम से समस्या के कारणों को ज्ञात करने के बाद यह जानने का प्रयास करता है कि समस्या का समाधान किस तरीके से हो सकता है । इसीलिए निदानात्मक शोध कार्य में समस्या का पूर्ण एवं विस्तृत अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से करके समस्या की गहराईमें पहुंचने का प्रयास किया जाता है ।

(4) परीक्षणात्मक शोध अभिकल्प :

समाजशास्त्र भी भौतिक विज्ञानों की भाँति अपने शोध कार्यों में परीक्षण प्रणाली का प्रयोग कर अधिकाधिक यथार्थता लाने का प्रयत्न कर रहा है, भौतिक विज्ञानों में विषयों का अध्ययन नियंत्रित अवस्थाओं में रखकर किया जाता है । समाजशास्त्र में सामाजिक घटनाओं का व्यवस्थित अध्ययन नियंत्रित दशाओं में रखकर निरीक्षण परीक्षण के द्वारा करने की रूपरेखा को परीक्षणात्मक शोध अभिकल्प कहते हैं चैपिन ने लिखा है "समाजशास्त्रीय शोध में परीक्षणात्मक प्ररचना की अवधारणा नियंत्रण की दशाओं के अन्तर्गत निरीक्षण द्वारा मानवीय सम्बन्धों के व्यवस्थित अध्ययन की ओर संकेत करती है"[70] । अर्थात अति संक्षेप में कह सकते हैं कि प्रयोगशाला पद्धति के द्वारा विषय का अध्ययन परीक्षणात्मक शोध का दूसरा नाम है ।

परीक्षणात्मक शोध तीन प्रकार का होता है ।

1- पश्चात परीक्षण

2- पूर्व-पश्चात परीक्षण

3- कार्यात्तिर तथ्य परीक्षण

1- पश्चात परीक्षण :

इसके अन्तर्गत समान विशेषताओं व प्रकृति वाले दो समूहों को चुन लिया जाता है जिनमें से एक नियंत्रित समूह एवं दूसरा परीक्षणात्मक समूह कहलाता है । नियंत्रित समूह में किसी प्रकार का

---

(70) चैपिन: <u>एक्सपेरीमेन्टल डिजाइन इन सोशिलाजिकल रिसर्च</u>, पेज नं0 28 ।

परिवर्तन नहीं लाया जाता जबकि परीक्षणात्मक समूह में किसी एक कारक के द्वारा परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया जाता है, इस प्रकार प्रथम समूह दूसरे समूह से भिन्न हो जाता है तो उसी कारक को परिवर्तन का कारण मान लिया जाता है ।

2- **पूर्व-पश्चात परीक्षण :**

इसमें अध्ययन के लिये केवल एक ही समूह का चुनाव किया जाता है और उसी का अध्ययन एक अवस्था विशेष के पहले और बाद में किया जाता है । इन दोनों अध्ययनों के अन्तर को देखा जाता है और उसे ही परिवर्तित परिस्थिति का परिणाम मान लिया जाता है ।

3- **कार्यान्तर तथ्य परीक्षण :**

इस प्रकार का परीक्षण किसी ऐतिहासिक घटना का अध्ययन करने के लिये किया जाता है चूँकि ऐतिहासिक घटनाओं को दोहराना शोधकर्ता के वश में नहीं होता है अतः दो समूहों का चुनाव किया जाता है जिनमें से एक में वह घटना घटित हो चुकी हो जबकि दूसरे में नहीं । दोनों समूहों की पुरानी परिस्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन करके यह पता लगाने का प्रयत्न किया जाता है कि जिससमूह में वह घटना घटित हुई है वह किन कारणों से हुई है । संक्षेप में ऐतिहासिक घटनाक्रमों का परीक्षण कर वर्तमान घटनाओं या अवस्थाओं के कारणों की खोज कार्यान्तर तथ्य परीक्षण कहलाता है ।

प्रस्तुत शोध का अभिकल्प :

उपर्युक्त विवरण के संदर्भ में, प्रस्तुत शोध का अभिकल्प अन्वेषणात्मक, वर्णनात्मक तथा निदानात्मक है । इसका मुख्य उद्देश्य नगरीय परिवेश में शिशु मृत्यु के स्तर तथा विभिन्नताओं का अन्वेषणात्मक अध्ययन करना है । साथ ही, कुछ परिकल्पनाओं, जिनका कि निर्माण भारतीय समाज में प्रचलित दशाओं तथा उपलब्ध अनुसंधान सामग्री पर आधारित है, का परीक्षण भी करना है । इसके अतिरिक्त अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर समस्या के समाधान के लिये सुझाव प्रस्तुत करना भी वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य है ।

समग्र तथा प्रतिदर्श :

प्रस्तावित अध्ययन उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड प्रभाग के हमीरपुर जनपद में स्थित "मौदहा" नगर में किया गया है । अध्ययन के उद्देश्यों को दृष्टि में रखते हुये उक्त अध्ययन क्षेत्र का चयन किया गया है । इस अध्ययन में दो सांस्कृतिक समूहों- हिन्दू तथा मुस्लिम- के बीच शिशु मृत्यु का

NUMBER OF SELECTED RESPONDENT
FROM BOTH COMMUNITIES
NO. OF RESPONDENT
300
250
200
150
100
50
0
200
200
HINDU
MUSLIM
COMMUNITIES
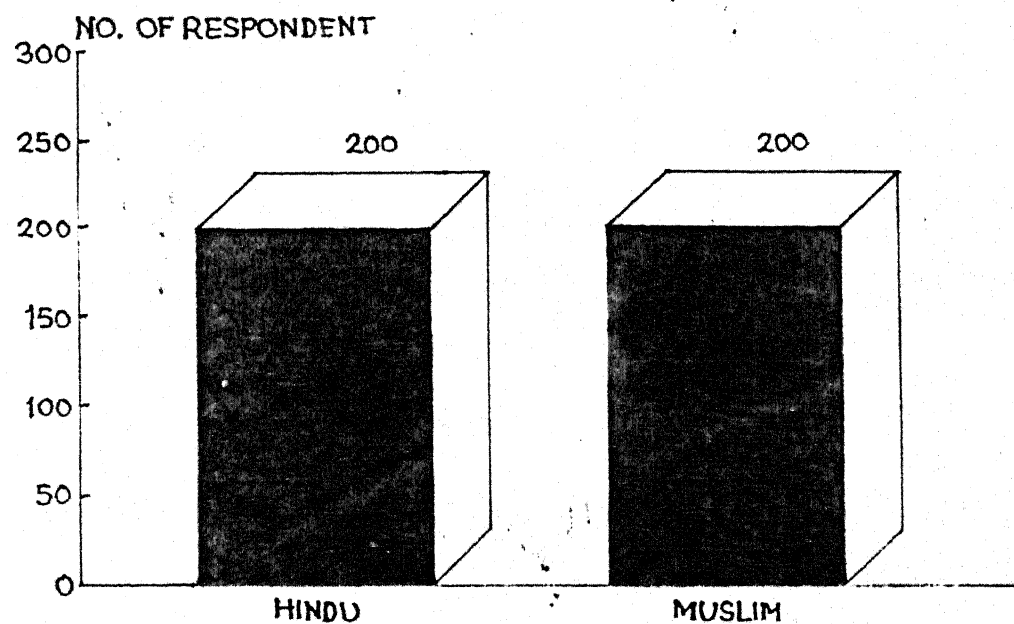
TABLE 1·6

तुलनात्मक स्वरूप प्रस्तुत किया गया है । उक्त संदर्भ में मौदहा एक ऐसा नगर है जिसमें हिन्दुओं तथा मुसलमानों की जनसंख्या लगभग समान है । एक ही परिवेश में दोनों सांस्कृतिक समूहों का समान रूप से मिलना अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने में अत्यधिक उपयोगी है ।

नगर के पूर्व सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों के अनुसार नगर में कुल परिवारों की संख्या 4734 है, जिसमें हिन्दू परिवारों की संख्या 2443 तथा मुस्लिम परिवारों की संख्या 2291 है । नगर में उर्वर आयु समूह (15 से 45वर्ष) में स्त्रियों की कुल संख्या 4045 है जिसमें हिन्दू समुदाय की महिलाओं की संख्या 1985 तथा मुस्लिम समुदाय में यह संख्या 2060 है । उक्त स्त्रियाँ ही प्रस्तुत अध्ययन की इकाइयां हैं तथा इन्हीं के जीवित जन्मों तथा मृत शिशुओं पर हमारे निष्कर्ष आधारित हैं ।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि समग्र में अध्ययन की जाने वाली सम्पूर्ण इकाइयों की संख्या 4045 है जिसमें दोनों सम्प्रदायों- हिन्दू तथा मुस्लिम-की स्त्रियों की संख्या लगभग समान है । अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से प्रत्येक समुदाय से 200 महिलाओं का चयन दैव निदर्शन प्रविधि के द्वारा किया गया है जो समग्र की सम्पूर्ण इकाइयों का प्रतिनिधित्व करती है । इस प्रकार कुल 400 इकाइयों का चयन किया गया है । यही हमारा प्रतिदर्श है । प्रतिदर्श, समग्र की सम्पूर्ण इकाइयों का लगभग 10 प्रतिशत अंश है । सम्पूर्ण विवरण सारणी 1.6 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 1.6

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदायों की समग्र तथा प्रतिदर्श में सम्मिलित इकाइयों की संख्या का विवरण

सम्प्रदाय	परिवार संख्या	उर्वर आयु समूह की कुल महिलायें	प्रतिदर्श में महिलाओं की कुल संख्या
हिन्दू	2443	1985	200
मुस्लिम	2291	2060	200
योग:-	4734	4045	400

आधार सामग्री संग्रह तथा क्षेत्र कार्य :

सामान्यत: नगर की अधिकांश स्त्रियाँ या तो अपढ़ हैं अथवा बहुत कम पढ़ी लिखी हैं । अत: वांछित सूचना का संग्रह साक्षात्कार अनुसूची की प्रविधि का उपयोग करते हुये किया गया है । इस

तथ्य को ध्यान में रखते हुये कि क्षेत्र की महिलायें पुरानी परम्पराओं की पोषक हैं, साक्षात्कार के लिये महिला साक्षात्कार कर्ता के सहयोग से तथ्यों का संकलन किया गया । साक्षात्कार अनुसूची में समस्या के सभी पक्षों से सम्बंधित प्रश्नों का समावेश किया गया । साक्षात्कार अनुसूची के तैयार हो जाने पर उसकी शुद्धता व व्यवहारिकता का मापन करने के लिये उसे कुछ स्त्रियों पर प्रयुक्त किया गया । इस परीक्षण में जिन कठिनाइयों का अनुभव हुआ उन्हीं के आधार पर अनुसूची में सुधार कर उसे अंतिम रूप दिया गया सांख्यकीय आंकड़ों के साथ ही साक्षात्कार के समय अवलोकन प्रविधि का उपयोग करते हुये गुणात्मक तथ्यों का भी संग्रह किया गया ।

तथ्यों का वास्तविक संग्रह करने से पहले शोधकर्ता ने सम्पूर्ण नगर क्षेत्र का भ्रमण किया तथा नगर निवासियों, जिनमें उत्तरदाता भी सम्मिलित हैं, नगर प्रभावशाली व्यक्तियों के सहयोग से सम्पर्क किया तथा उनसे घनिष्ठता स्थापित की । इसके पश्चात ही वास्तविक साक्षात्कार प्रारम्भ किया गया जिससे वांछित सूचनायें संग्रहित की जा सकीं । तथ्यों के संग्रह के पश्चात आंकड़ों का वर्गीकरण व सारणीयन किया गया । तत्पश्चात श्रेणीबद्ध आंकड़ों का विश्लेषण करते हुये निष्कर्ष प्रस्तुत किये गये ।

विगत विवरण में अध्ययन क्षेत्र तथा पद्धति पर प्रकाश डाला गया है । प्रथमतः, समस्या का निरूपण करते हुये अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्यों का उल्लेख किया गया, तदुपरान्त परिकल्पनाओं को प्रस्तुत कर सम्बन्धित सहित की समीक्षा की गई जिसमें मृत्यु सम्बन्धी समंकों के विकास का भी उल्लेख किया गया, मौलिक प्रत्ययों की परिभाषा के पश्चात शोध-अभिकल्प का विवरण प्रस्तुत किया गया । इसी तारतम्य में, समग्र तथा उसकी इकाइयों, प्रतिदर्श, तथ्य तथा संकलन प्रविधि, क्षेत्र-कार्य आदि को स्पष्ट किया गया ।

द्वितीय अध्याय

सामुदायिक परिवेश :

विगत अध्याय में अध्ययन क्षेत्र तथा अनुसंधान अभिकल्प का विवरण प्रस्तुत किया गया । इस अध्याय में उस सामुदायिक परिवेश पर ध्यान केन्द्रित किया जायेगा जहाँ प्रस्तुत शोध से सम्बंधित तथ्यों को एकत्र किया गया है । भौगोलिक दशाओं तथा सामाजिक संस्थाओं का समुदाय की सामाजिक संरचना तथा संस्कृति पर प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार का प्रभाव देखा गया है । माण्टेस्क्यू, हिप्पोक्रटीज, क्वेटलेट आदि ने भौगोलिक कारकों के मानव जीवन पर प्रभाव का उल्लेख किया है । माण्टेस्क्यू का मत है कि भौगोलिक पर्यावरण ही मानव के शारीरिक एवं मानसिक गुणों को विकसित करता है तथा मानव व्यवहार भी भौगोलिक पर्यावरण की देन है । हिप्पोक्रेटीज का मत है कि मानव प्रकृति जलवायु से प्रभावित होती है । यूरोप एवं एशिया में भिन्न-भिन्न व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषतायें होने का कारण वहाँ की भिन्न भौगोलिक विशेषतायें हैं । क्वेटलेट ने कहा है कि मानव का चरित्र एवं नैतिकता भौगोलिक परिस्थितियों से प्रभावित होती है । यद्यपि भौगोलिक वादियों के विचार अतिशयोक्तिपूर्ण हैं, फिर भी, उनकी आंशिक सत्यता से इन्कार नहीं किया जा सकता है । भौगोलिक तथा सामाजिक संस्थाओं के महत्व को ध्यान में रखकर अध्ययन के सामुदायिक परिवेश का विवरण प्रस्तुत किया गया है ।

प्रस्तुत अध्ययन भारत वर्ष के उत्तर प्रदेश राज्य में स्थित हमीरपुर जनपद के एतिहासिक नगर "मौदहा" की हिन्दू तथा मुस्लिम महिलाओं पर किया गया है । भारत का क्षेत्रफल 32.87 लाख वर्ग किलोमीटर है तथा 1991 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 84 करोड़ 90 लाख थी । वार्षिक बृद्धि दर 1981 और 1991 के बीच 23.50 प्रतिशत रही [1]।

कुल जनसंख्या का 82.64 प्रतिशत हिन्दू, 11.35 प्रतिशत मुसलमान, 2.43 प्रतिशत ईसाई, 1.96 प्रतिशत सिक्ख, 0.71 प्रतिशत बौद्ध, 0.48 प्रतिशत जैन तथा 0.43 प्रतिशत अन्य धर्मो के लोग थे । भारत की समस्त जनसंख्या में 23.51 प्रतिशत अनुसूचित जाति व जनजाति के लोग थे [2]।

---

(1) मनोरमा ईयर बुक, 1993, मलयाता मनोरमा कोट्टयम, केरल, पृष्ठ 231 ।

(2) मनोरमा ईयर बुक, 1993, मलयाला मनोरमा कोट्टयम, केरल, पृष्ठ 246-47 ।

जनपद हमीरपुर

जनपद कानपुर

जनपद फतेहपुर

जनपद जालौन

सुमेरपुर

सरीला

मुस्करा

गोहाण्ड

राठ

चरखारी

पनवाड़ी

जैतपुर

मध्य प्रदेश
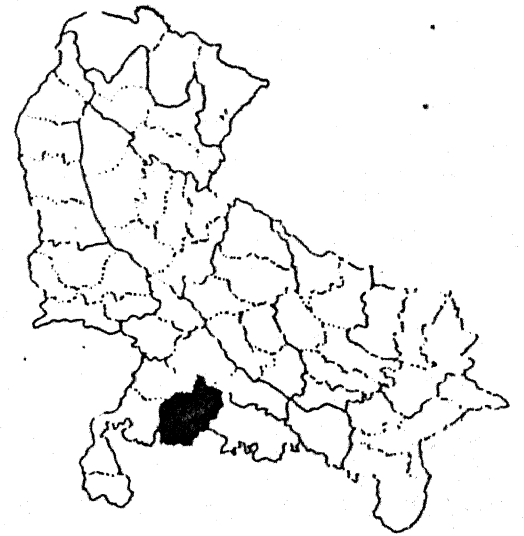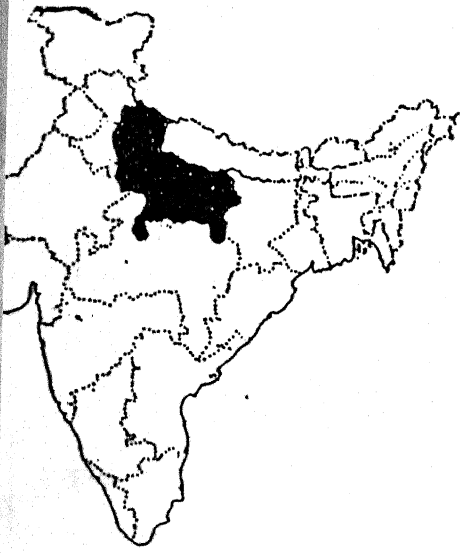
भारत 25 राज्यों में विभाजित है, जिसमें से एक राज्य उत्तर प्रदेश भी है जिसका क्षेत्रफल 2,94,411 वर्ग किओमीओ है, जनसंख्या 13,87,60,417 है जिसमें 7,37,45,994 पुरूष तथा 6,50,14,423 स्त्रियां हैं । साक्षरता 41,71 प्रतिशत है । उत्तर प्रदेश में 63 जिले हैं [3]। जिसमें हमीरपुर भी एक जिला है ।

हमीरपुर जनपद प्रदेश के दक्षिण में 25° 58' अक्षांश एवं 80° 9' देशान्तर पर स्थित है । इसकी लखनऊ से दूसरी 140 किओमीओ तथा कानपुर से 68 किओमीओ है [4]। कहा जाता है कि हमीरदेव नामक राजा करचुल राजपूत जाति के थे । यहाँ पर अलवर से आकर बसे थे इसलिये इसका नाम हमीरपुर पड़ गया [5]।

हमीरपुर जिले को बुन्देलखण्ड का प्रवेश द्वारा कहा जाता है । यह जनपद चारों तरफ से नदियों से घिरा हुआ है । इसके दक्षिण में बेतवा, उत्तर में यमुना, पूर्व दिशा में केन तथा पश्चिम में धसान नदी बहती हैं ।

राजनैतिक स्तर पर जिले की सीमा इस प्रकार है :-

उत्तर में कानपुर देहात एवं फतेहपुर, दक्षिण में मध्य प्रदेश प्रान्त का छतरपुर जिला, पूर्व में बाँदा एवं पश्चिम दिशा की सीमायें झाँसी एवं जालौन जिलों से मिलती हैं ।

हमीरपुर जनपद उत्तरी गोलार्ध के पूर्वी भाग में स्थित है । यह जनपद उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम तक 136 किओमीओ लम्बा एवं दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम तक 80 किओमीओ चौड़े घेरे में अपने को समेटे हुये हैं । इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 7166 वर्ग किओमीओ है ।

हमीरपुर जनपद की कुल जनसंख्या 1981 की जनगणना के अनुसार 11,94,000 थी जिसमें 6,43,000 पुरूष व 5,51,000 स्त्रियां थी तथा जनसंख्या का घनत्व 167 व्यक्ति प्रति वर्ग किओमीओ था[7]।

---

(3) मनोरमा ईयर बुक : 1993, पृष्ठ 179 ।

(4) गजेटियर जनपद हमीरपुर, अध्याय XIX पेज 267 ।

(5) वही, पृष्ठ 267 ।

(6) अपना जनपद हमीरपुर, द्वितीय संस्करण, सरस्वती मुद्रणालय, हमीरपुर 1990 ।

(7) सूचना एवं जनसम्पर्क कार्यालय, जनपद हमीरपुर, 1992 ।

1991 की जनगणना के अनुसार जनपद की जनसंख्या 14,65,707 हो गयी है जिसमें 7,95,666 पुरूष व महिलायें 6,70,041 हैं । जिले की ग्रामीण जनसंख्या 12,21,576 तथा नगरीय जनसंख्या 2,44,031 है । यहाँ की कुल जनसंख्या में 53.5 प्रतिशत लोग कृषक वर्ग के हैं जबकि अपनी आजीविका के लिये 81.8 प्रतिशत लोग किसी न किसी रूप में कृषि पर ही निर्भर हैं । धार्मिक आधार पर जनसंख्या का विभाजन इस प्रकार है :-

हिन्दू 13,46,917 मुसलमान 91,304 तथा अन्य धर्मो को मानने वाले 27,486 लोग हैं[8]।

प्रशासनिक विभाजन :

(1) तहसीलें :

हमीरपुर जनपद की कार्य प्रणाली को सुचारू रूप से संचालित करने के लिये इसे छः तहसीलों में बाँटा गया है ।

1- हमीरपुर

2- राठ

3- कुलपहाड़

4- चरखारी

5- मौदहा

6- महोबा

तहसीलों की जनसंख्या[9]

क्र0	तहसील	पुरूष	महिला	योग
1-	हमीरपुर	140748	116032	257780
2-	राठ	145758	148028	323786
3-	कुलपहाड़	131855	111526	243381
4-	चरखारी	066293	056452	122745
5-	मौदहा	164753	138040	302793
6-	महोबा	116259	098963	215222

(8) जिला सांख्यकीय पत्रिका, 1993, जिला संख्या अधिकारी कार्यालय, हमीरपुर ।

(9) जिला सांख्यकीय पत्रिका, 1993, संख्या अधिकारी कार्यालय, हमीरपुर ।

(2) विकास खण्ड :

समस्त तहसीलों को 11 विकास खण्डों में विभाजित किया गया है ।

1- सुमेरपुर
2- कुरारा
3- मुस्करा
4- मौदहा
5- सरीला
6- राठ
7- गोहाण्ड
8- कबरई
9- पनवाड़ी
10-चरखारी
11-जैतपुर

(3) न्याय पंचायतें तथा ग्राम सभायें :

हमीरपुर जनपद में सभी विकास खण्डों के अन्तर्गत कुल 98 न्याय पंचायतें हैं । सभी न्याय पंचायतों के अन्तर्गत कुल 693 ग्राम सभायें हैं ।

तहसील, विकास खण्ड, न्याय पंचायतें एवं ग्राम सभायें एक दृष्टि में ।[10]

तहसील	विकास खण्ड	न्याय पंचायतें	ग्राम सभायें
हमीरपुर	सुमेरपुर	10	63
	कुरारा	06	43
मौदहा	मुस्करा	07	39
	मौदहा	12	95
राठ	सरीला	09	48
	राठ	08	49
	गोहाण्ड	09	57
महोबा	कबरई	11	90
चरखारी	पनवाड़ी	09	78
	चरखारी	08	57
कुलपहाड़	जैतपुर	09	74
6	11	98	693

(10) अपना जनपद हमीरपुर, सरस्वती मुद्रणालय, हमीरपुर पृष्ठ 27, वर्ष 1990 ।

(4) नगरपालिकायें तथा टाउन-एरिया :

जनपद में कुल नगरपालिकायें 5 हैं एवं टाउन-एरिया की कुल संख्या 7 है ।

नगरपालिका	टाउन-एरिया
1- हमीरपुर	1- सुमेरपुर
2- राठ	2- कुरारा
3- महोबा	3- मुस्करा
4- मौदहा	4- सरीला
5- चरखारी	5- गोहाण्ड
	6- कबरई
	7- जैतपुर

साक्षरता :

जनपद में साक्षरता के प्रतिशत को निम्न सारणी में प्रस्तुत किया गया है ।

हमीरपुर जनपद में 1981 तथा 1991 की जनगणना के अनुसार साक्षरता प्रतिशत[11, 12]

जनगणना वर्ष	पुरूष	स्त्री	औसत
1981	38.94	11.57	27.31
1991	45.40	16.71	32.14

तालिका से स्पष्ट है कि सन् 1981 की जनगणना के अनुसार हमीरपुर जनपद की साक्षरता 27.31 प्रतिशत थी जिसमें 38.94 प्रतिशत पुरूष एवं 11.57 प्रतिशत स्त्रियां थीं । सन् 1991 की जनगणना के अनुसार साक्षरता में बृद्धि हुयी है । जनपद की साक्षरता सन् 1991 में 32.14 प्रतिशत हो गयी है, जिसमें 45.40 प्रतिशत पुरूष एवं 16.71 प्रतिशत स्त्रियाँ हैं ।

---

(11) जिला सांख्यकीय पत्रिका, 1990 कार्यालय जिला संख्या अधिकारी, हमीरपुर ।

(12) जिला सांख्यकीयपत्रिका, 1993, कार्यालय जिला संख्या अधिकारी, जनपद हमीरपुर ।

शिक्षा केन्द्र :

जनपद में 1989-90 एवं 1990-91 में कार्यरत मान्यता प्राप्त शिक्षण संस्थायें[13, 14]।

वर्ष	महाविद्यालय	उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	सीनियर बेसिक स्कूल	जूनियर बेसिक स्कूल
1989-90	04	47	199	892
1990-91	04	51	280	1191

जनपद में वर्ष 1989-90 में 4 महाविद्यालय (हमीरपुर, महोबा, राठ, चरखारी), 47 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, 199 सीनियर बेसिक स्कूल एवं 892 जूनियर बेसिक स्कूल थे। वर्ष 1990-91 में महाविद्यालय 4, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय 51, सीनियर बेसिक स्कूल 280 एवं जूनियर बेसिक स्कूल 1191 कार्यरत थे।

इनके अतिरिक्त, सरस्वती शिशु मन्दिर 20, सरस्वती विद्या मन्दिर 6, शिक्षा प्रशिक्षण केन्द्र 2, बहु औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र 1, औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र 1, एवं लेखपाल प्रशिक्षण केन्द्र 1 हैं[15]।

स्वास्थ्य सेवायें :

स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं में यहाँ 50 एलोपैथिक चिकित्सालय, 25 आयुर्वेदिक एवं 17 होम्योपैथिक चिकित्सालय हैं। जनपद में कुल 58 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 1 क्षयरोग चिकित्सालय, 1 कुष्ठ रोग निवारण केन्द्र एवं 305 मातृशिशु कल्याण केन्द्र हैं।

पशुओं के लिये भी चिकित्सा की जनपद में समुचित व्यवस्था है। यहाँ पर 38 पशु सेवा केन्द्र एवं 23 पशु चिकित्सालय हैं। पशुओं की नस्ल सुधार हेतु कृतिम गर्भाधान केन्द्र भी खोले गये हैं[16]।

---

(13) जिला सूचना कार्यालय, जनपद हमीरपुर (1990)

(14) जिला सूचना कार्यालय, जनपद हमीरपुर (1992)

(15) जिला सूचना कार्यालय, जनपद हमीरपुर (1992)

(16) जिला सूचना कार्यालय, जनपद हमीरपुर, (1993)

अन्य सुविधायें :

जनपद में 13 पुलिस स्टेशन, 23 पुलिस चौकी, 13 रेलवे स्टेशन, 155.2 कि0मी0 रेलवे लाइन, राष्ट्रीयकृत बैंक 42, सहकारी बैंक 18, ग्रामीण बैंक 47 एवं 4 भूमि विकास बैंक हैं ।

जनपद में नहरों की लम्बाई 908 कि0मी0, राजकीय नलकूप 418, निजी नलकूप 5453, राजकीय कृषि रक्षा इकाई 12, एग्रोकेन्द्र 3 एवं 443 गोबर गैस संयंत्र हैं ।

यहाँ संचार सुविधा के नाम पर 11 टेलीफोन केन्द्र, 10 तारघर, 255 डाकघर हैं । मनोरंजन के नाम पर 9 सिनेमा गृह हैं ।

जनपद में सस्ते गल्ले की दूकानें 762, सहकारी दुग्ध समिति 17, मिट्टी के तेल की दूकाने 831 एवं 1 शीत भण्डार गृह हैं ।[17]

हमीरपुर जिले में कुल पाँच नगरपालिकायें आती हैं जिनमें से एक 'मौदहा' भी है । 'मौदहा' नगरपालिका प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र है ।

मौदहा नगर :

मौदहा हमीरपुर जनपद का एक महत्वपूर्ण नगर है । हमीरपुर जनपद के परिवेश का उल्लेख करने के पश्चात मौदहा नगर का सामाजिक परिवेश प्रस्तुत किया जा रहा है ।

भौगोलिक एवं ऐतिहासिक स्थिति :

उत्तर प्रदेश के दक्षिणांचल में स्थित हमीरपुर जनपद का मौदहा नगर अपने मुख्यालय से 32 कि0मी0 दूर, 25° 46' अक्षांश एवं 80° 7' देशान्तर पर स्थित है । प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर महोबा यहाँ से 48 कि0मी0 दूर है ।

किंवदन्तियों एवं प्राप्त साक्ष्यों के अनुसार बहुत समय पहले यहाँ कोल-भीलों के डेरे थे । मिश्र के मोदी सईद ने यहाँ आकर परिहार राजपूतों की सहायता से कोल-भीलों को भगा दिया । धीरे-धीरे ये राजपूत भी मुसलमान बन गये । मौदहा का नाम बाबा मोदी सईद के नाम से हो गया । मोदी सईद के दो पुत्र थे, हैदर और हुसैन । इन दोनों के नामों पर दो मोहाल निर्मित हुये जिन्हें आज

---

(17) जिला सूचना कार्यालय, जनपद हमीरपुर, 1993 ।

(18) गजेटियर जनपद हमीरपुर, अध्याय XIX पेज 278 ।

हैदरिया एवं हुसैनिया के नाम से जाना जाता है । नगर में दो और मोहाल भी हैं जिनका नाम करण भी परम्परागत भौगोलिक आधार लिये हुये प्रतीत होता है । इनमें से उपरौस मोहाल, तरौस मोहाल से ऊँचाई पर स्थित है । मोदी सईद बाबा की मजार कजियाना में 20 फुट जमीन की सतह से नीचे बनी है । इसके अतिरिक्त नगर के विभिन्न स्थानों पर चार और बड़ी मजारे हैं जैसे -

1- हजारी पीर बाबा ।

2- दीवान सईद बाबा ।

3- सुखपीर बाबा ।

4- शेख चाँद बाबा ।

इन मजारों पर हिन्दू एवं मुसलमानों की बराबर श्रद्धा है । नगर में एक बड़ा तालाब है । कहा जाता है कि इस तालाब को मराठों ने बनवाया था[19]। इसी के नाम से एक और मोहाल निर्मित हुआ जिसका नाम मराठीपुरा है । यहाँ पर एक किला है जिसे कहते हैं कि बाँदा के नवाब अली बहादुर ने बनवाया था[20]। परन्तु उसमें एक पत्थर लगा है जिससे पता चलता है कि उसका निर्माण 1645 ई0 में शाहजहाँ ने करवाया था ।

क्षेत्रफल :

मौदहा नगर का क्षेत्रफल 2.46 वर्ग किO मीO है । नगर की पूर्व से पश्चिम की लम्बाई 4 किOमीO एवं उत्तर से दक्षिण की लम्बाई 3.5 किOमीO है[21]।

जनसंख्या :

वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार नगर की कुल जनसंख्या 26,520 थी जिसमें पुरूष 14,307 तथा स्त्रियाँ 12,213 थीं । नगर में अनुसूचित जातियों की कुल जनसंख्या 3,989 थी जिसमें कि पुरूष 2,247 तथा स्त्रियाँ 1,742 थी । नगर की कुल जनसंख्या के लगभग 47 प्रतिशत हिन्दू, एवं 53 प्रतिशत मुसलमान थे । नगर में कुल परिवारों की संख्या 4,734 है[22]।

---

(19) गजेटियर जनपद हमीरपुर, अध्याय XIX, पेज 279 ।

(20) गजेटियर जनपद हमीरपुर, अध्याय XIX, पेज 278 ।

(21) गजेटियर जनपद हमीरपुर, अध्याय XIX, पेज 279 ।

(22) सांख्यकीय पत्रिका (1993), संख्या अधिकारी कार्यालय, जनपद हमीरपुर ।

साक्षरता तथा शिक्षा केन्द्र :

नगर में कुल साक्षर व्यक्तियों की संख्या 13,463 है, जिसमें पुरूष 8,921 एवं स्त्रियां 4,542 थी । कुल साक्षरता 49.37 प्रतिशत पाई गई ।

यहाँ शिक्षा के लिये 3 हायर सेकेण्डरी स्कूल बालकों के लिये, एक हायर सेकेण्डरी स्कूल बालिकाओं के लिये हैं । उच्च शिक्षा के लिये नगर में कोई व्यवस्था नहीं है । उच्च शिक्षा गृहण करने वाले छात्र-छात्रायें हमीरपुर मुख्यालय में स्थित महाविद्यालय में जाते हैं या फिर बाँदा मुख्यालय, जो मौदहा नगर से 41 कि0मी0 दूर है, में आकर शिक्षा गृहण करते हैं । नगर में सीनियर बेसिक स्कूल 5 व जूनियर बेसिक स्कूलों की संख्या 11 है । 3 मान्टेसरी तथा 7 नर्सरी स्कूल कार्यरत हैं[23] ।

स्वास्थ्य सुविधायें :

स्वास्थ्य सुविधाओं में एक एलोपैथिक स्वास्थ्य केन्द्र, एक यूनानी चिकित्सालय, 1 मातृ शिशु कल्याण केन्द्र एवं उपकेन्द्र है । इसके अतिरिक्त यहाँ पर गैर सरकारी स्वास्थ्य केन्द्र भी हैं ।

नगर में पशु चिकित्सा, पशुपालन केन्द्र, कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र एवं उपकेन्द्र भी हैं[24] ।

अन्य सुविधायें :

आधुनिकीकरण की दृष्टि से नगर में आधुनिक सुविधायें भी उपलब्ध हैं । नगर में 200 टेलीफोन, 3 डाकघर, 1 तारघर, 1 सार्वजनिक टेलीफोन केन्द्र हैं । 3 कृषि सेवा केन्द्र, 2 राष्ट्रीयकृत बैंक शाखायें, एक ग्रामीण बैंक शाखा, एक सहकारी बैंक शाखा व एक भूमि विकास बैंक स्थित हैं । नगर में विद्युत की उपलब्धता एवं नल द्वारा पेय जल सुविधा भी उपलब्ध है । नगर में शीत गोदाम, बीज गोदाम, उर्वरक भण्डार गृह व सस्ते गल्ले की सरकारी दूकानें हैं । यहाँ ब्लाक मुख्यालय एवं पुलिस स्टेशन भी है[25]।

सामाजिक संरचना :

बुन्देलखण्ड के अन्य क्षेत्रों की तरह मौदहा नगर की सामाजिक संरचना है । इसमें जाति व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान है । दोनों समुदायों (हिन्दू तथा मुस्लिम) में जाति व्यवस्था का आधार अलग-अलग ढंग से है ।

---

(23) जिला सांख्यकीय पत्रिका, 1993, कार्यालय संख्या अधिकारी, जनपद हमीरपुर ।
(24) जिला सांख्यकीय पत्रिका, 1993, जनपद हमीरपुर ।
(25) जिला सांख्यकी पत्रिका, 1993, जनपद हमीरपुर ।

(क) हिन्दू जाति व्यवस्था :

हिन्दू जाति व्यवस्था का आधार वर्ण व्यवस्था ही है । वर्ण एवं जाति में अन्तर है । वर्ण रंग तथा वृत्तिपरक सामाजिक स्थिति का बोध कराता है, जाति व्यक्ति के जन्म के आधार पर उसकी सामाजिक स्थिति का परिचय कराती है ।

ऋग्वेद के दशम् मण्डल के अन्तर्गत ही रूपक का आश्रय लेकर इन आर्य इकाइयों तथा अनार्य समुदायों को चार प्रमुख इकाइयों में विभिक्त एवं चित्रित किया गया है[26]। यह इकाइयां वर्ण के नाम से जानी जाती हैं तथा ये वर्ण थे- ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र । ब्रम्हा के मुख से ब्राम्हणों की उत्पत्ति, बाहुओं से क्षत्रिय का प्रादुर्भाव, कटि प्रदेश अथवा जंघाओं से वैश्य की उत्पत्ति तथा पैरों से शूद्रों का जन्म हुआ ऐसा माना गया है । सम्पूर्ण समाज का यह व्यक्ति परक रूपक इस ओर संकेत करता है कि व्यवसायों की श्रेष्ठता के आधार पर इन चारों वर्णों को समाज रूपी शरीर के अवयवों के रूप में स्वीकारा गया था । धर्मशास्त्रों की यह मान्यता है कि वर्णों के सम्मिश्रण के फलस्वरूप अनेक व्यावसायिक सामाजिक इकाइयों का जन्म हुआ । इस सम्मिश्रण के मूल में अनुलोम-प्रतिलोम तथा वर्ण-संकरता के कारकों को ही प्रमुख गिना गया ।

आदि कालीन वर्ण व्यवस्था हमें मुक्त सामाजिक वर्गों अथवा स्थितियों का परिचय कराती है। यही मुक्त वर्ग कालान्तर में बन्द वर्ग अथवा जाति के रूप में उदित हुये । परवर्ती युगों में वर्णों के अन्तर्मिश्रण ने न केवल नये सामाजिक समूहों को जन्म दिया, वरन् नये व्यवसायों का भी प्रादुर्भाव हुआ । सामाजिक स्थिति का निर्धारण व्यक्ति के जन्म तथा समूह के परम्परागत व्यवसाय के साथ अभिन्न रूप से जुड़ गया । प्रत्येक जाति जहाँ जन्म तथा व्यवसाय के आधार पर व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का निर्धारण करने लगी, वहीं अन्तर्विवाह, खान-पान विषयक प्रतिबन्ध एवं सामाजिक तथा धार्मिक विशेषाधिकारों एवं नियोक्ताओं ने भी इन जातियों के सामाजिक दृढ़ीकरण में अपना योगदान दिया । समाज का खण्डात्मक विभाजन तथा संस्तरीकरण इन उभय प्रक्रियाओं ने जाति व्यवस्था को एक बन्द वर्ग वाली सामाजिक व्यवस्था के रूप में विकसित कर दिया है[27]।

वर्ण व्यवस्था तथा जाति व्यवस्था के इन अखिल भारतीय आधारभूत तथा संरचनात्मक सिद्धान्तों पर ही मौदहा नगर की समाज व्यवस्था अवस्थित है । प्रत्येक वर्ण का प्रतिनिधित्व करने वाली

---

(26) मैकडोनल एवं कीथ : (1935) वैदिक इण्डेक्स, वाल्यूम I, लन्दन, अध्याय XXIII, पृष्ठ 202 ।

शास्त्री, राम, (1940), इवोल्यूशन आफ कास्ट, लन्दन, पृष्ठ 13-14 ।

(27) धुरिये, जी0एस0, (1957), कास्ट एण्ड क्लास इन इण्डिया, पापुलर प्रकाशन, बम्बई, पेज 93

अनेक जातियां, उपजातियां अथवा जाति समूह मौदहा के निवासियों में पाये जाते हैं । इनमें से कुछ यहाँ के मूल निवासी हैं तथा कुछ अन्य क्षेत्रों से आकर सुदूर भूतकाल में यहाँ बसे होंगे । चारों प्रमुख वर्णों के अन्तर्गत सम्मिलित की जाने वाली इन जातियों में कुछ के नाम नीचे दिये गये हैं । हिन्दू सम्प्रदाय की सभी जातियाँ हमारे 200 उत्तरदाताओं में सम्मिलित है ।

वर्ण	जातियाँ, उपजातियाँ
ब्राम्हण	भार्गव, सरयूपारी, कान्यकुब्ज, जुझौतिया, सनाढ्य इत्यादि ।
क्षत्रिय	ठाकुर, लोधी, ढाँगी, बुन्देला, परिहार, चन्देल, पटेल इत्यादि ।
वैश्य	नेमा, अग्रवाल, गहोई इत्यादि ।
शूद्र (स्पृश्य)	नाई, धोबी, कुम्हार, ढीमर, अहीर इत्यादि ।
(अस्पृश्य)	भागी, खंगार, बसोर, चमार, चढार इत्यादि ।

इस वैदिक सामाजिक व्यवस्था के आधार पर ब्राम्हण, क्षत्रिय को उच्च जाति, वैश्य को मध्यम जाति एवं शूद्र को निम्न जाति की कोटि में रखा गया है । उच्च, मध्यम एवं निम्न जातियों में आर्थिक आधार पर कुछ के स्तर ऊँचे पाये गये, कुछ मध्यम किस्म के थे तो कुछ निम्न कोटि के श्रेणी में आ रहे थे । इस आधार पर प्रत्येक जाति में आर्थिक स्तर को लेते हुये जब विभाजन किया गया तो पाँच वर्ग पाये गये ।

1- उच्च स्तर
2- उच्च मध्य
3- मध्य
4- निम्न एवं
5- अति निम्न

(ख) मुस्लिम जाति व्यवस्था :

भारतीय मुस्लिम समाज में जातिगत संस्तरण की विशेषताओं का अध्ययन एक नवीन घटना है । यद्यपि ब्रिटिशकाल में हिन्दू जातियों या मुस्लिम समाज के अध्ययनों एवं जनगणना रिपोर्टों में मुस्लिम जनसंख्या के जातिगत विभाजन का कुछ प्रारम्भिक विवरण प्राप्त होता है[28] तथापि इन अध्ययनों में

---

(28) क्रुक: डब्लू, (1986) ट्राइवल्स एण्ड कास्ट्स आफ नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज आफ आगरा एण्ड अवध, लन्दन ।
इस्लाम इन इण्डिया (1921) आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी ब्लण्ट, इ0ए0आर0 (1931) दि कास्ट सिस्टम आफ नार्दन इण्डिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, बेबन-जोन्स, बी0आर0 इत्यादि (1914), वीमेन इन इस्लाम, लखनऊ पब्लिसिंग हाउस ।
वे0स0ए0 (1912) इथनोग्राफी आफ इण्डिया स्टावर्ग वर्लाग कार्ल ट्रब्नर ।
अशरफ,के0एम0 (1932) लाइफ एण्ड कंडीशन आफ दि पीपुल्स आफ हिन्दुस्तान,लंदन,पेज 107

सैद्धान्तिकअस्पष्टता, सांख्यकीय भ्रान्तियाँ एवं अपूर्णता पायी जाती है । वास्तविक रूप में मुस्लिम जातियों के अध्ययन का कार्य, स्वतन्त्रता पश्चात किये गये समाजशास्त्रीय एवं मानव शास्त्रीय अध्ययनों से प्रारम्भ होता है । अंसारी, घौस, मेरियट मैकिम, जरीना, अहमद, उमा गुहा, सतीश मिश्र, इम्तियाज अहमद आदि के द्वारा किये गये अध्ययन इस क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं[29]।

इस्लाम धर्म के प्रवर्तन के पश्चात केरल एवं सौराष्ट्र के तटों पर सामुद्रिक व्यापारी के रूप में इस्लाम धर्म के अनुयायी सर्वप्रथम भारत वर्ष में आकर बस गये । परन्तु भारत में इनका मुख्य रूप से आगमन ।।वीं शताब्दी में सिन्धु पर अबू कासिम के आक्रमण से प्रारम्भ होता है । गोरी और गजनवी के आक्रमण ने इस आगमन को और अधिक विस्तृत किया । आरम्भ में आक्रमण कर्ता के रूप में आने वाले इस्लाम धर्म के अनुयायी भारत वर्ष में शासक के रूप में बस गये । मुसलमान शासक सैनिक, व्यापारी के साथ-साथ अनेक धर्म प्रचारक के रूप में भारत वर्ष में रहने लगे । एक ओर शासन की कठोरता के कारण धर्म परिवर्तन का कार्य व्यापक स्तर पर किया गया तो दूसरी ओर महान धार्मिक उपदेशकों एवं धर्म प्रचारकों के व्यक्तिगत करिश्मा एवं प्रेरणा के द्वारा भारतीय मूल के व्यक्तियों ने इस्लाम धर्म ग्रहण किया । व्यापक धर्म परिवर्तन के द्वारा मुस्लिम समाज में मोटे तौर पर दो वर्गों का उदय हुआ । प्रथम वर्ग अशरफ कहलाया । इस वर्ग के अन्तर्गत विदेशी मूल के मुस्लिम शासक, सैनिक व्यापारी और धर्म उपदेशक सम्मिलित थे । दूसरी वर्ग अजलफ कहलाया । इस वर्ष के अन्तर्गत भारतीय मूल के इस्लाम धर्म के अनुयायी एवं अन्त:विवाह के द्वारा उत्पन्न सन्तानों को सम्मिलित किया गया ।

---

(29) अंसारी, घौस. (1960) मुस्लिम कास्ट इन उत्तर प्रदेश, ए स्टडी आफ कल्चर कान्टैक्ट, लखनऊ ।

मेरियट, मैकिम. (1060) कास्ट, रैकिंग एण्ड कम्युनिटी स्ट्रक्चर इन फाइव रीजन्स आफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, पूना, पृष्ठ ।।

अहमद, जरीना (1062) मुस्लिम कास्ट इन उत्तर प्रदेश, दि इकोनोमिक वीकली, फरवरी 17, पृष्ठ 389 ।

गुहा, उमा. (1965) कास्ट एमंग रूरल बंगाल मुस्लिम मैन इन इण्डिया, राँची, पृष्ठ 167

मिश्र सतीश, (1061) मुस्लिम कम्यूनिटीज इन गुजरात बाम्बे, पृष्ठ 131 ।

अहमद, इम्तियाज (1966) दि इण्डियन इकोनोमिक्स एण्ड सोशल हिस्ट्री रिव्यु, सितम्बर, वाल्यूम-3, नं0 3 पृष्ठ 268 ।

सामाजिक प्रस्थिति विभाजन का यह स्वरूप प्रारम्भिक मुसलमान शासकों एवं अभिजात्य वर्ग की उस मनोवृत्ति का प्रतीक था कि वे अपने को भारतीय मूल के मुस्लिम एवं अन्य सम्प्रदायों की तुलना में श्रेष्ठ और पृथक मानते थे । कालान्तर में यह विभाजन अन्तः विवाह की अधिकता एवं धर्म परिवर्तन की प्रक्रिया के विस्तार के साथ-साथ अधिक जटिल एवं विस्तृत होता गया । इस प्रकार मुस्लिम समाज अनेक जातियों, समूहों में बंटता चला गया । व्यवसायों की बढ़ती हुयी विभिन्नता और राजनीतिक सत्ता के वितरण की प्रक्रिया ने भी इसको बढ़ावा दिया । इस आधार पर इन 200 उत्तरदाताओं की जातियों/उपजातियों को सामाजिक स्तर के आधार पर रखा गया है । जिनके नाम निम्नवत् हैं :-

इस्लाम धर्म के आधार पर	मुस्लिम जातियां/उप-जातियां
अशरफ	सैय्यद, शेख, पठान ।
अजलफ प्रथम वर्ग	आतिशबाज, भाँड़, भटियारा, डफाली, घोसी, जुलाहा, कस्साद ।
द्वितीय वर्ग स्पृश्य	चुड़िहारा, दर्जी, धुनिया, कुँजड़ा, रंगरेज ।
तृतीय वर्ग अस्पृश्य	धोबी, मिरासी, मेहतर, हलालखोर, बंजारा ।

इस इस्लाम धर्म की सामाजिक व्यवस्था के आधार पर अशरफ को उच्च जाति में रखा गया है, अजलफ के प्रथम वर्ग को मध्य जाति में एवं अजलफ के द्वितीय एवं तृतीय वर्ग को निम्न वर्ग में रखा गया है ।

अर्थ-व्यवस्था :

मौदहा नगर की अर्थ-व्यवस्था में कृषि का प्रमुख स्थान है । यहाँ के अधिकतर लोग कृषि व्यवसाय से सम्बंधित हैं । यहाँ की धरती अत्यन्त उपजाऊ एवं तीनों फसलें पैदा करने के लिये उपयुक्त है । इसके अतिरिक्त यहाँ विभिन्न प्रकार के व्यापार एवं गृह उद्योगों का भी अपना महत्वपूर्ण स्थान है पुरूष अपने अवकाश के समय में गृह उद्योगों में स्त्रियों को सहयोग प्रदान करते हैं । इनके प्रमुख गृह एवं लघु उद्योगीय कार्य हैं- चक्की चलाना, घास काटना, जंगल से जलाऊ लकड़ी लाना, जंगली फल लाकर शहरों में या अपने नगर के बाजार में बेंचना ।

यहाँ पुरूषों का प्रमुख गृह उद्योगीय कार्य सूत कातना, उसकी रस्सियाँ बनाकर बाजार में बेंचना है जो उनके जीविकोपार्जन में सहायक है । कृषि कार्य में भी ये रस्सियाँ विविध रूपों में उपयोगी

होती हैं । खाट बुनना भी एक कला है, महुवा बीनना, घास काटना, लकड़ी काटना, गाय, भैंस, बकरी पालना एवं मुर्गीपालन, मिट्टी के बर्तन बनाकर बाजार में बेंचना पुरूषों के लघु उद्योगीय कार्य हैं । प्लास्टिक के जूते चप्पल बनाना भी यहाँ का प्रमुख उद्योग है ।

सांस्कृतिक संरचना :

नगर के परिवारों में माता-पिता को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है । माता-पिता को सर्वोच्च मानकर उनकी सेवा करना कर्तव्य समझा जाता है । बिना पुत्र को जन्म दिये पितृ-ऋण से कोई भी मुक्त नहीं हो सकता है, ऐसा लोगों का विश्वास है । पुत्र का महत्व इस लोकोक्ति से स्पष्ट है - " कुल को दीपक पुत्र है, धड़ को दीपक प्रान" । पुत्र का महत्व केवल मौदहा नगर के परिवारों में ही नहीं, वरन् सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड एवं भारत में स्वीकारा गया है । पुत्र ही परिवार का भावी कर्ता-धर्ता है । परिवार में परम्परा एवं मर्यादा के अन्दर रहकर चलना पड़ता है । बुन्देली भाषा में "कुल में दाग लगाने वाले पुत्र को 'कपूत' व कुल की मर्यादा रखने वाले पुत्र को 'नाम कमाऊ' कहा जाता है"।

बड़े भाई को परिवार में पिता तुल्य स्थान प्राप्त है । पिता की मृत्यु के बाद वही घर की देख रेख करता है । बड़े पुत्र की पित्रवत् प्रतिष्ठा के कारण ही "बड़ी बहू के बड़े भाग" कहा जाता है यह जनश्रुति है कि भाई जैसा मित्र व भाई जैसा शत्रु संसार में नहीं होता । "बिन घरनी घर भूत का डेरा" लोकोक्ति से स्पष्ट है कि नारी का महत्व फैला हुआ है । बुन्देली समाज में भी पत्नी के रूप में उसका महत्व अधिक है जो कि रीति-रिवाज के अनुसार स्पष्ट प्रकट होता है ।

मौदहा नगर में स्त्री का कार्य क्षेत्र घर तो है ही, साथ ही पुरूषों के साथ भी वह कार्य करती हैं । यहाँ की स्त्री के लिये केवल दो कार्य वर्जित हैं- हल जोतना व छप्पर छाना । कृषि प्रधान इस क्षेत्र में बाकी सभी कार्यों में वह पुरूषों की सहायता करती है । वह पति के लिये केवल भोग्या मात्र नहीं वरन् एक अच्छे मित्र के रूप में भी सामने आती है । माँ के रूप में ही उसका पूर्ण विकास माना जाता है, सास-ससुर की सेवा उससे अपेक्षित है । विधवा होना नारी जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है । बुन्देली समाज में उसे विरक्त जीवन व्यतीत करना पड़ता है । कुछ उच्च जातियों में तो उसका पुनर्विवाह अकल्पनीय है ।

जब पुत्र जन्म होता है तब थाली बजाकर शोर किया जाता है, जिसका आशय है कि हर्षोल्लास की अभिव्यक्ति । किन्तु जब पुत्री पैदा होती है तब एक निराशा सी छा जाती है । उच्च वर्ग में कन्या को 'हुण्डी' समझा जाता है जो कि पिता को 10 से 24 वर्ष के मध्य भुगतान करनी पड़ती है । कन्या का पिता जीवन पर्यन्त उसके भार से मुक्त नहीं हो पाता । प्रायः कहा जाता है कि कन्या

की मृत्यु यद्यपि तत्काल दु:खकारी होती है किन्तु भविष्य में वह सुख को जन्म देती है । विवाह के बाद कन्या किसी का उतार तो किसी का श्रृंगार बन जाती है । अतः पत्नी के रूप में उसके महत्व को वर्णित नहीं किया जा सकता ।

यहाँ स्त्रियों की वेष-भूषा भिन्न-भिन्न देखने को मिलती है । स्त्रियाँ आधी बाँह का झुलौंवा तथा पूरी बाँह का सलूका पहनती हैं । कुछ स्त्रियाँ लहंगा व ओढ़नी पहनती हैं । मुसलमान स्त्रियाँ ज्यादातर सलवार कुर्ता पहनती हैं । शरीर पर आभूषण के रूप में पैजना, बिछिया, हाथों में पछिलवा तथा हरैया पहनती हैं । पैरों में महावर लगाती हैं ।

ज्यादातर पुरूष धोती-कुर्ता सर पर साफा तथा पाग, अंगरखा, दुपट्टा, सराई और पादुका पहनते हैं । किन्तु यह वस्त्र मात्र विवाह आदि के अवसरों पर ही प्रयोग में लाया जाता है । पढ़े लिखे लोग पैन्ट-शर्ट, कुर्ता-पायजामा आदि भी पहनते हैं ।

धार्मिक स्थानों में यहाँ पर भगवान राम, शिव एवं कृष्ण के मन्दिर हैं । सावन के महीने में कजलियों का जुलूस, कंस मेला प्रसिद्ध है । यहाँ पर 'चिलमन' नाम का स्थान है, जहाँ च्यवन ऋषि का आश्रम था । नगर के बाहर दुर्गा जी का मन्दिर है, जहाँ वर्ष में दो बार नवरात्रि में नौ दिन झाँकियां सजाई जाती हैं । यह नगर का रमणीक स्थल भी है ।

बुन्देली लोकगीतों में यहाँ के खान-पान का उल्लेख मिलता है । इन लोक गीतों के अनुसार यहाँ तीन समय के भोजन का उल्लेख है । प्रातः कालीन कलेऊ, दोपहर का भोजन और रात्रि की ब्यारी । तरह-तरह के व्यंजन प्रायः विशेष अवसरों पर बनाये जाते हैं । दूध, घी, दही आदि का प्रयोग अधिक किया जाता है ।

यहाँ का लोक संगीत ज्यादातर बुन्देली बोली में गाया जाता है । साथ ही, कुछ अवधी तथा कुछ ब्रजभाषा का मिश्रण लिये हुये संगीत भी प्रचलन में है । यहाँ की बोली मुख्यतः बुन्देली है, परन्तु कुछ लोग खड़ी बोली भी बोलते हैं ।

. प्रस्तुत अध्याय में अध्ययन क्षेत्र के सामुदायिक परिवेश का विवरण प्रस्तुत किया गया । इसके अन्तर्गत हमीरपुर जनपद की भौगोलिक स्थिति, कुल जनसंख्या, प्रशासनिक विभाजन, साक्षरता एवं शिक्षा केन्द्र, स्वास्थ्य सेवाओं साथ ही साथ, मौदहा नगर जहाँ कि अध्ययन किया गया है उसकी भौगोलिक एवं ऐतिहासिक स्थिति, क्षेत्रफल, जनसंख्या, साक्षरता तथा शिक्षा केन्द्र, स्वास्थ्य सुविधाओं एवं उपलब्ध अन्य सुविधाओं को प्रस्तुत किया गया है । इसके अतिरिक्त सामाजिक संचरना के अन्तर्गत हिन्दू जाति व्यवस्था एवं मुस्लिम जाति व्यवस्था को भी स्पष्ट किया गया है । इसी प्रकार आर्थिक व्यवस्था एवं सांस्कृतिक संरचना पर भी प्रकाश डाला गया है ।

तृतीय अध्याय

पूर्ववर्ती अध्याय में प्रतिदर्श की महिलाओं के सामुदायिक परिवेश का विवरण प्रस्तुत किया गया जिससे यह स्पष्ट हो सका कि महिलायें किस प्रकार के पर्यावरण में जीवन यापन कर रही हैं । इस अध्याय में महिलाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया जायेगा ताकि सूक्ष्म स्तर पर उस सामाजिक परिवेश का पता चल सके जिसमें महिलायें अभिशक्त हैं । यह एक सामान्यीकृत तथ्य है कि व्यक्ति के सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश का उसके व्यवहार से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है । व्यक्ति अपने सामाजिक पर्यावरण से जैसा सीखता है, वैसी ही उसकी जीवन पद्धति बन जाती है । जीवन स्वयं जीने की एक कला है जो कि मानव के सीखने के परिणाम स्वरूप ही विकसित होती है । यहाँ पर उत्तरदाताओं की उन सभी विशिष्टताओं का विवरण प्रस्तुत किया जायेगा जो कि उसके सामाजिक परिवेश से प्रभावित होती हैं तथा साथ ही, उसे समय-समय पर प्रभावित भी करती हैं ।

आयु :

यद्यपि आयु एक जैविक तथ्य है तथापि समाज में आयु के अनेक अभिप्रेत अर्थ है । आयु एक ऐसा जैविक तथ्य है जो पद एवं कार्य की सामाजिक परिभाषा की सीमा का निर्धारण करता है । किसी व्यक्ति को किस आयु में कौन सा पद प्रदान किया जायेगा तथा उसकी भिन्न-भिन्न सामाजिक समूहों में भूमिका क्या होगी, इसका निर्धारण सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश ही करता है । विभिन्न समाजों में पाये जाने वाले आयु वर्गीकरणों से आयु के महत्व का पता चलता है[1] । शैशवावस्था से युवावस्था तक विकास का क्रम जीवन चक्र में विभिन्नतायें उत्पन्न करता है । यह प्रकृति का एक ऐसा सत्य है जिससे बचा नहीं जा सकता[2]। विभिन्न संस्कृतियों में व्यक्तियों से उनकी आयु की विभिन्न अवस्थाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यवहार की अपेक्षा की जाती है[3]। साथ ही, समाज के एक ही आयु समूह के लोगों का व्यवहार वैसा ही होता है जैसा कि समाज उससे उस आयु में अपेक्षा करता है ।

---

(1) एस0एन0, आइजेनस्टाट, फ्राम जनरेशन टू जनरेशनः एज ग्रुप एण्ड सोशल स्ट्रक्चर (न्यूयार्क, दि फ्री प्रेस, 1956) ।

(2) पारसन्स, टाल्कट, 1942 एज एण्ड सेक्स इन दि सोशल स्ट्रक्चर आफ दि यूनाइटेड स्टेट्स, अमेरिकन सोसियोलाजिकल रिव्यू, 7 अक्टूबरः 604-616 ।

(3) बेनेडिक्ट, रुथ, 1938 कान्टीन्यूटीज, एण्ड डिसकान्टीन्यूटीज इन कल्चरल कण्डीशनिंग, साइकिट्री, वाल्यूम ।

महिलाओं के संदर्भ में आयु की महत्ता और भी बढ़ जाती है क्योंकि उनमें विवाह की आयु तथा प्रथम प्रसव के समय की आयु उनके भावी जीवन की सम्भावनाओं का निर्धारण करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । यह एक समाजशास्त्रीय तथ्य है कि कम आयु में विवाहित स्त्रियों की तुलना में अधिक आयु में विवाहित स्त्रियों के अपेक्षाकृत कम बच्चे पैदा होते हैं[4 5] । कम आयु में विवाह तथा कम आयु में प्रसव परिवार के आकार के साथ-साथ देश विशेष की जनसंख्या बृद्धि के लिये भी उत्तरदायी होती है, जो कि अन्ततः अनेक सामाजिक समस्याओं के जन्म का कारण बनती है जिसमें स्वयं स्त्रियों के विकास का अवरूद्ध हो जाना भी सम्मिलित है । उत्तरदाताओं के आयु विषयक तथ्य सारणी 3.1 में प्रस्तुत है ।

सारणी 3.1

दोनो सम्प्रदायों के उत्तरदाताओं की आयु, प्रतिशत में ।

आयु	हिन्दू	मुस्लिम	उत्तरदाताओं की संख्या	उत्तरदाताओं का प्रतिशत
15-24	32.5	30.00	125	31.25
25-34	47.5	47.00	189	47.25
35-44	20.0	23.00	86	21.50
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100
औसतआयु	28.75	27.00	-	26.87

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि दोनों सम्प्रदायों के सर्वाधिक उत्तरदाता 25-34 वर्ष आयु समूह के हैं (जिनका प्रतिशत 47.25 है) जिसमें हिन्दुओं के लिये यह प्रतिशत 47.5 तथा मुसलमानों के लिये 47.0 प्रतिशत है । सबसे कम उत्तरदाता (21.50 प्रतिशत) सबसे बड़े आयु समूह

(4) भाटिया, जे0सी0, 1983, एज ऐट मैरिज एण्ड फर्टीलिटी इन घाना (वेस्ट अफ्रीका), डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 12, नं0 2

(5) परमार, एस0बी0सिंह, 1986, स्त्रियों में विवाह की आयु तथा प्रजनन-दर निर्धारण, मानव, वाल्यूम 14 अंक 2-3 ।

35-44 वर्ष आयु समूह के हैं जहाँ पर इनका प्रतिशत हिन्दुओं तथा मुसलमानों के लिये क्रमशः 20.0 तथा 23.0 है । इसी क्रम में 15-24 वर्ष आयु समूह के दोनों सम्प्रदायों के उत्तरदाताओं की संख्या का प्रतिशत क्रमशः 32.5 तथा 30.0 है । उत्तरदाताओं की आयु का औसत 26.875 वर्ष है जिसमें हिन्दुओं के लिये यह 28.75 वर्ष तथा मुसलमानों के लिये 27.0 वर्ष है ।

धर्म :

धर्म एक सार्वभौमिक घटना के रूप में देखा जा सकता है । इसका अस्तित्व प्रायः संसार के प्रत्येक समाज में हैं चाहे वह आधुनिकता से ओत-प्रोत हो अथवा आदिम युगीन विशेषताओं वाला । धर्म अनेक महत्वपूर्ण सामाजिक भूमिकायें निभाता है । वह सामाजिक मूल्यों तथा व्यक्तियों के लिये आचरण संहिता का निर्धारण करता है । वैयक्तिक जीवन के लिये भी धर्म की महत्ता कम नहीं है[6] ।

धर्म व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है तथा साथ ही वह सामाजिक नियंत्रण की एक महत्वपूर्ण संस्था भी है । धर्म विश्वासों की एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें महिलाओं की प्रजननता तथा अन्य जनांकिकीय संघटकों तक को प्रभावित करने की क्षमता विद्यमान है । सारणी 3.2 में उत्तरदाताओं की धार्मिक पृष्ठभूमि का विवरण प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 3.2

उत्तरदाताओं की धार्मिक पृष्ठभूमि, प्रतिशत में ।

धर्म	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
हिन्दू	200	50
इस्लाम	200	50
योग	400	100

---

(6) टालकाट पारसन्स, 1952, रिलीजियस पर्सपेक्टिवस आफ कालेज टीचिंग इन सोशियोलाजी एण्ड साइकोलाजी, न्यू हेवेन दि हैजन फाउण्डेशन, पेज 15 ।

तालिका से स्पष्ट है कि दोनों समुदायों के कुल 400 उत्तरदाताओं में से 50 प्रतिशत उत्तरदाता हिन्दू धर्म से सम्बंधित हैं । शेष 50 प्रतिशत उत्तरदाता इस्लाम धर्म को मानने वाले हैं । प्रस्तुत अध्ययन में हमारा उद्देश्य समस्या को धार्मिक आधार पर तुलनात्मक रूप में विवेचित करना है । अतः दोनो सम्प्रदायों के उत्तरदाताओं की समान संख्या का चयन किया गया है । वैसे भी, चयनित समग्र में दोनो सम्प्रदायों की जनसंख्या भी लगभग समान है ।

पारिवारिक पृष्ठ-भूमि :

परिवार समाज की आधारभूत संस्थाओं में से एक है, जिसका व्यक्ति के समाजीकरण से सीधा सम्बन्ध है । परिवार व्यक्ति की प्रथम पाठशाला है जहाँ पर उसके विचार, विश्वास, धारणायें, भावनायें, सामाजिक मूल्य आदि जन्म लेते हैं तथा साथ ही पनपते भी हैं । इन सभी का व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास तथा उसकी भावी गति-विधियों से सीधा सम्बन्ध होता है । इसी से परिवार मानव समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई ही नहीं है बल्कि जीवन के लिये सबसे अधिक आवश्यक भी है[7] ।

भिन्न-भिन्न समाजों में परिवार भिन्न-भिन्न रूपों में पाया जाता है । कहीं पर पितृ सत्तात्मक पितृ वंशीय तथा पितृ स्थानीय है तो कहीं पर इसका स्वरूप मातृ सत्तात्मक मातृ वंशीय तथा मातृ स्थानीय है । किसी समाज में परिवार एक विवाही है तो किसी अन्य में बहुपति विवाही अथवा बहुपत्नी विवाही । हिन्दू समाज में संयुक्त प्रकार के परिवारों की प्रधानता है[8 9 10] तो किन्ही अन्य समाजों में एकाकी परिवारों की बहुलता है । संयुक्त परिवार जहाँ व्यक्ति में समष्टिवादी विचारों को जन्म देते हैं वहीं एकाकी परिवार उसे व्यष्टिवादी बना देते हैं ।

---

(7) ग्रीन, ए0डब्लू0, सोशियोलाजी, पेज 389 ।

(8) के0एम0 कपाड़िया, 1972, मैरिज एण्ड फेमिली इन इण्डिया, कलकत्ता, आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, पेज नं0 275 ।

(9) पी0एन0प्रभु, 1985, हिन्दू सोशल आर्गनाइजेशन, बाम्बे (पापुलर-बुक डिपो), पेज नं0 217

(10) के0एम0पानिक्कर, 1956, हिन्दू सोसाइटी ऐट दि क्रास रोड, न्यूयार्क, इन्स्टीट्यूट आफ पेसफिक रिलेशन, पेज नं0 56 ।

उक्त सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के पारिवारिक स्वरूप का विवरण सारणी 3.3 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 3.3

उत्तरदाताओं के परिवार का स्वरूप, प्रतिशत में

परिवार का स्वरूप	हिन्दू	मुसलमान	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
संयुक्त	62.5	39.5	204	51
एकाकी	37.5	60.5	196	49
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट है कि दोनों सम्प्रदायों में परिवार के स्वरूप में पर्याप्त भिन्नता है । जहाँ हिन्दू समाज में संयुक्त परिवारों की बहुलता (62.5 प्रतिशत) है, वहीं मुसलमानों में एकाकी बहुतायत (60.0प्रतिशत) से पाये जाते हैं । यह दोनों सम्प्रदायों की सांस्कृतिक भिन्नता की ओर स्पष्ट संकेत है ।

शैक्षिक स्तर :

व्यक्ति तथा समाज दोनों के ही दृष्टिकोण से शिक्षा का अपना विशिष्ट महत्व है । शिक्षा व्यक्ति को पशुत्व से मनुष्यत्व की ओर ले जाती है और इसी से समाज के लिये उसकी श्रेष्ठता का निर्धारण अपने आप हो जाता है । शिक्षा समाजीकरण की प्रक्रिया के साथ-साथ सांस्कृतिक मूल्यों के पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरण में भी सहायक होती है । सामाजिक जीवन की श्रेष्ठता का आधार शिक्षा ही है, चाहे वह प्राचीनकाल की परम्परागत शिक्षा हो अथवा आधुनिक काल की व्यावसायिक शिक्षा । शिक्षा ने आज औद्योगिक विकास, आर्थिक संरचना, राजनीतिक जीवन, सामाजिक पुनर्निर्माण और व्यक्तित्व के विकास को एक दूसरे से सम्बद्ध कर दिया है ।

शिक्षा का रूप प्रत्येक युग और स्थान में समान नहीं रहा है । कभी शिक्षा को नैतिक विचारों के विकास के लिये आवश्यक माना गया तो कभी इसे सांस्कृतिक विरासत से मिलाकर धार्मिक पृष्ठभूमि में स्पष्ट किया जाता रहा । आज शिक्षा को धर्म के दायरे से बाहर लाकर तर्क प्रधान बनाया जा रहा है । परन्तु हर स्थिति में इसका उद्देश्य ज्ञान का संग्रह ही है । परम्परागत समाज में शिक्षा

का स्वरूप अनौपचारिक था जिसका उद्देश्य व्यक्ति तथा समाज को नियंत्रित करना था, जबकि आधुनिक समाज में शिक्षा पूर्णतया विशेषीकृत है, जिसका प्रमुख उद्देश्य प्राकृतिक जगत पर नियन्त्रण पा लेना होता जा रहा है ।

शिक्षा के स्वरूप तथा अर्थ में भिन्नता के बावजूद इसके महत्व को नकारा नहीं जा सकता आधुनिक युग में शिक्षा के स्तर का जनांकिकीय संघटकों से निकट का सम्बन्ध देखने को मिलता है । जन्म-दर तथा मृत्यु-दर शैक्षिक स्तर से सीधे जुड़े हुये प्रतीत होते हैं । सारणी 3.4 में उत्तरदाताओं तथा सारणी 3.5 में उत्तरदाताओं के पति के शैक्षिक स्तर का विवरण प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 3.4

उत्तरदाताओं का शैक्षिक स्तर, प्रतिशत में

शैक्षिक स्तर	हिन्दू	मुसलमान	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
निरक्षर	57.5	65.0	245	61.25
हाईस्कूल से कम	26.5	23.0	99	24.75
हाईस्कूल व उससे अधिक	16.0	12.0	56	14.0
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उत्तरदाताओं में निरक्षरों का प्रतिशत सर्वाधिक (61.25) है । हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त करने वालों का प्रतिशत 24.75 है । हाईस्कूल तथा उससे अधिक शिक्षा प्राप्त करने वाली की संख्या सबसे कम है जो कि मात्र 14.0 प्रतिशत हैं । इनमें भी उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं की संख्या नाम मात्र की है ।

सारणी इस तथ्य को भी प्रगट करती है कि वैसे तो दोनों सम्प्रदायों में शिक्षा का स्तर पर्याप्त कम है फिर भी तुलनात्मक दृष्टि से हिन्दुओं की स्थिति कुछ बेहतर है । उत्तरदाताओं में, हाईस्कूल तथा उससे अधिक शिक्षा प्राप्त करने वाली स्त्रियों का प्रतिशत हिन्दुओं के लिये 16.0 तथा मुसलमानों के लिये 12.0 है । इसके विपरीत, निरक्षरता के क्षेत्र में मुस्लिम महिलायें आगे हैं जहाँ पर उनका प्रतिशत 65.0 है जबकि हिन्दू महिलाओं के लिये यह 57.5 प्रतिशत है । इसी क्रम में हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त महिलाओं का प्रतिशत हिन्दुओं के लिये 26.5 है जबकि मुसलमानों में

यह 23.0 है ।

सारणी 3.5

उत्तरदाताओं के पति की शिक्षा, प्रतिशत में

शैक्षिक स्तर	हिन्दू	मुसलमान	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
निरक्षर	18.5	50.5	138	34.50
हाईस्कूल से कम	21.5	32.0	107	26.75
हाईस्कूल व उससे अधिक	60.0	17.5	155	28.75
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100.00

तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि दोनों समुदायों के उत्तरदाताओं की साक्षरता के स्तर से उनके पतियों में साक्षरता का स्तर अधिक है । यदि दोनों समुदायों की निरक्षरता पर गौर करें तो इसका प्रतिशत हिन्दुओं में 18.5 तथा मुसलमानों में 50.5 है । हाईस्कूल से कम की शिक्षा में हिन्दुओं का प्रतिशत 21.5 है, जबकि मुसलमानों में यह 32 प्रतिशत रहा । इसीक्रम में, हाईस्कूल तथा उससे अधिक शिक्षा हिन्दुओं में 60 प्रतिशत है, जबकि मुसलमानों में यह 17.5 पायी गयी । कुल मिलाकर हिन्दुओं में शिक्षा का स्तर प्रत्येक दृष्टि से अच्छा है । उनमें जहाँ एक ओर निरक्षरता का प्रतिशत पर्याप्त कम है वहीं दूसरी ओर हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों की संख्या पर्याप्त अधिक है । मुसलमानों में इन दोनों ही शैक्षिक स्तरों में विपरीत स्थिति देखने में आती है ।

विवाह की आयु :

मानव की विभिन्न प्राणिशास्त्रीय आवश्यकताओं में यौन सन्तुष्टि एक आधारभूत आवश्यकता है । विवाह एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था ही नहीं बल्कि यह व्यक्तियों के यौन जीवन को सुचारू रूप से चलाने एवं सामाजिक-धार्मिक उद्देश्यों को पूरा करती है । हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार है इसके बिना कोई भी स्त्री-पुरूष गृहस्थ जीवन में प्रवेश नहीं कर सकते । विवाह स्त्री और पुरूष के पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की संस्था है ।[11] सामान्यतः विवाह वधू को वर के घर ले आना है ।[12]

(11) ई०एस० बोगार्ड्स, 1957, सोशियोलाजी, पेज 75 ।
(12) उद्वाहत्व-तेन भार्यात्व सम्पादकं ग्रहणं विवाहः । मनुस्मृति, 3/20 ।

यह स्त्री-पुरूष का ऐसा योग है, जिसमें स्त्री से जन्मा बच्चा वैध सन्तान माना जाय ।[13]

यह स्पष्ट है कि प्राचीन भारत में लड़कों एवं लड़कियों का विवाह उनकी परिपक्व आयु में होने की प्रथा थी । पी0एन0प्रभु ने हिन्दू शास्त्रों का उल्लेख करते हुये स्पष्ट किया है कि प्राचीन भारत में कम आयु में विवाह करना प्रचलन में नहीं था ।[14] लड़कियों में रजस्वला के बाद विवाह होने की प्रथा का विरोध कुछ हिन्दू लेखकों जैसे गौतम एवं विष्णु आदि द्वारा किया गया और रजस्वला के पूर्व विवाह करने पर बल दिया गया । जबकि वशिष्ट एवं बौधायन ने 400 बी0सी0 के आस-पास रजस्वला के बाद विवाह किये जाने पर बल दिया । इस वैचारिक संघर्ष का अन्त उस समय हो गया जबकि समाज ने रजस्वला के पूर्व विवाह करना स्वीकार कर लिया । 200 ए0डी0 के लगभग इस प्रकार के विवाह सामान्यतया होने लगे और धीरे-धीरे विवाह की आयु कम होती गई । मध्य काल में अंग्रेजी कानूनों के लागू होने के साथ ही साथ अधिकांश विवाहों में विवाह की आयु पाँच वर्ष से भी कम हो गई और कुछ विवाह तो बच्चों के जन्म के पूर्व ही इस आधार पर निश्चित हो जाया करते थे कि जन्म के बाद वह तुरन्त विवाह कर देगें । इरावती कर्वे ने उक्त सन्दर्भ में यह संकेत देते हुये लिखा है कि यह व्यक्ति के लिये सम्मान की बात थी कि वह अपनी कन्या के विवाह के लिये रजस्वला से पूर्व ही वर की तलाश कर ले । कुछ माता-पिता तो अपने बच्चों का विवाह उनके जन्म के पूर्व ही निश्चित कर लेते थे ।[15]

उपरोक्त विवरण इस बात का स्पष्ट संकेत करता है कि विवाह की आयु में स्थिरता नहीं थी । रॉस के अनुसार- भारत में लड़कों एवं लड़कियों के विवाह की आयु में समय-समय, स्थान-स्थान और यहाँ तक कि धर्म, जाति एवं भाषा के आधार पर भिन्नता पायी जाती रही है ।[16] यह कहने की आवश्यकता नहीं कि भारत में कम आयु में विवाह एक सामान्य बात हो चुकी थी । कुछ समाज सुधारकों जैसे- राजा राम मोहनराय एवं ईश्वर चन्द्र विद्यासागर आदि ने कम उम्र के विवाह के दोषों एवं दुष्परिणामों से समाज को अवगत कराया और लोगों में इसके प्रति चेतना पैदा करने का प्रयास किया और

---

(13) लूसी मेयर, सामाजिक नृ-विज्ञान की भूमिका, हिन्दी अनुवाद, पेज 90 ।

(14) पी0एन0प्रभु, 1963, हिन्दू सोशल आर्गनाइजेशन, बाम्बे, पापुलर प्रकाशन, पेज 151-52 ।

(15) कर्वे, आई0, 1965, किंगसिप आर्गनाइजेशन इन इण्डिया, बाम्बे, एशिया पब्लिसिंग हाउस, पेज 130 ।

(16) रॉस, ए0डी0, 1961, दि हिन्दू फेमिली इन इट्स अरबन सेटिंग, यू0एस0ए0: यूनीवर्सिटी आफ टोरन्टो, टोरन्टो प्रेस, पेज 236 ।

सरकार पर प्रभाव व दबाव डालकर 1929 में विवाह की आयु के संदर्भ में अधिनियम पारित कराया जिसमें लड़कों के विवाह की आयु 18 वर्ष व लड़कियों के विवाह की आयु 15 वर्ष निर्धारित की गई । 20वीं शताब्दी में कुछ महिला समाज सुधार आन्दोलन ने इस दिशा में और प्रगति की किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियाँ आज भी 18 वर्ष की आयु से पूर्व ही विवाह के बन्धन में बँध जाती हैं । भारत में अशिक्षित ग्रामीण कन्याओं को 13-17 वर्ष की आयु तक विवाह में दे देते हैं, उनका मानना है कि अधिक वयस्क कन्या समस्या बन जाती है ।

भारत में अब पहले की तुलना में विवाह अधिक आयु में होते हैं । प्रायः अधिक धनी व्यक्तियों के बच्चे अधिक आयु में ही विवाह करते हैं, या तो वह शिक्षा लेते रहते हैं या फिर उन्हें कोई जल्दी नहीं होती । शिक्षित लड़के-लड़कियां शिक्षा समाप्त होने, तद्नुसार रोजगार पाने तक विवाह नहीं करते हैं । नगरों में तो शिक्षा व देर से विवाह का प्रचलन बहुत अधिक है किन्तु गांवों में नगरों की तुलना में, बाल विवाह अधिक प्रचलित है । लड़कों की अपेक्षा लड़कियों का विवाह जल्दी कर दिया जाता है ।

महिलाओं के संदर्भ में विवाह के समय कम आयु होना अत्यधिक महत्व का विषय है क्योंकि कम आयु में विवाह और प्रथम प्रसव उनके आगे के जीवन को निर्धारित करता है । यदि विवाह के समय उम्र कम होगी तो बच्चे अधिक पैदा होंगे । साथ ही, उनके जीवित रहने की सम्भावनायें भी कम होती हैं । उत्तरदाताओं के विवाह की आयु विषयक विवरण सारणी 3.6 में प्रस्तुत है ।

सारणी 3.6

उत्तरदाताओं की विवाह की आयु, प्रतिशत में

विवाह की आयु	हिन्दू	मुसलमान	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
10-14	50.5	60.0	221	55.25
15-19	24.0	33.5	115	28.75
20-24	25.5	06.5	64	16.00
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100.00
विवाह की औसत आयु	26.25	23.86	--	25.06

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि दोनों सम्प्रदायों के सर्वाधिक उत्तरदाताओं 55.25 प्रतिशत का विवाह 10-14 वर्ष आयु समूह के अन्तर्गत हुआ है जिसमें हिन्दुओं के लिये यह 50.5 तथा मुसलमानों में 60 प्रतिशत है सबसे कम उत्तरदाताओं का विवाह (16 प्रतिशत) 20-24 वर्ष आयु में हुआ है । हिन्दुओं में जहाँ इसका प्रतिशत 22.5 है वहीं मुसलमानों में यह 6.5 है । इसी क्रम में ऐसे उत्तरदाता जिनका विवाह 15-19 वर्ष आयु समूह में हुआ है उसमें दोनों का प्रतिशत क्रमशः 24 एवं 33.5 रहा ।

उत्तरदाताओं के विवाह की औसत आयु 26.06 वर्ष है जिसमें हिन्दुओं के लिये यह 26.25 वर्ष तथा मुसलमानों के लिये 23.86 वर्ष पायी गयी ।

जातीय स्तर :

भारतीय सामाजिक संस्थाओं में जाति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । प्राचीनकाल से ही भारत में जाति प्रथा का अस्तित्व है जो कि सामाजिक संस्तरण का आधार रहा है । समाज में सभी जातियों की सामाजिक स्थिति समान नहीं होती वरन् ऊँच-नीच का एक संस्तरण पाया जाता है । यह जन्म पर आधारित होती है इसलिए इसमें सामान्यतः परिवर्तन सम्भव नहीं होता । पश्चिम में स्तरीकरण का आधार वर्ग रहा है किन्तु भारत में जाति एवं वर्ग दोनों ही । जाति एक ऐसा सामाजिक समूह है जिसकी सदस्यता जन्म पर आधारित होती है और जो अपने सदस्यों पर खान-पान, विवाह, व्यवसाय और सामाजिक सहवास सम्बन्धी प्रतिबन्ध लागू करता है । इस प्रकार जाति हिन्दू सामाजिक संरचना का मुख्य आधार है क्योंकि यह सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन को प्रभावित करती है ।[17] जाति एक राजनीतिक इकाई भी है क्योंकि प्रत्येक जाति व्यवहारिक आदर्श के नियम प्रतिपादित करती है और अपने सदस्यों पर उन्हें लागू भी करती है । जाति पंजायत, उसके कार्य और संगठन राजनीतिक पक्ष के प्रतीक हैं । जाति के द्वारा विधायिक एवं न्यायिक कार्य भी सम्पन्न होते रहे हैं जिसके कारण इसे राजनीतिक इकाई का रूप मिलता है ।[18]

वर्तमान में जाति प्रथा को एक निरर्थक एवं हानिप्रद संस्था कहना एक फैशन बन गया है । जाति प्रथा के विरोधी भावों में बृद्धि हो रही है, किन्तु प्राचीनकाल में जाति ने व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के लिये अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये हैं । भारत में जाति की व्यापकता एवं महत्व

---

(17) सक्सेना, डा0आर0एन0, भारतीय समाज तथा सामाजिक संस्थायें, पेज 45 ।

(18) डा0 सक्सेना, पेज 53 ।

को स्पष्ट करते हुये मजूमदार ने लिखा है "भारत में जाति व्यवस्था अनुपम है भारत विभिन्न सम्प्रदायों की परम्परात्मक स्थली है, यहाँ की हवा में जाति घुली हुई है, मुसलमान एवं ईसाई भी इससे अछूते नहीं है"।[19] महिलाओं के संदर्भ में जाति की महत्ता और भी बढ़ जाती है । के0एल0शर्मा, 1974 एवं आर0के0मुखर्जी, 1957 के अध्ययनों में संकेत दिया है कि जाति एवं पारिवारिक आर्थिक दशाओं का शिशु-मृत्यु से घनिष्ठ सम्बन्ध है[20, 21]। उत्तरदाताओं के जातीय स्तर सम्बन्धी विवरण सारणी 3.7 में प्रस्तुत किये गये हैं ।

सारणी 3.7

उत्तरदाताओं का जातीय स्तर, प्रतिशत में

जातीय स्तर	हिन्दू	मुस्लिम	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
उच्च	21.5	15.0	73	18.25
मध्य	28.5	30.0	117	29.25
निम्न	50	55.0	210	52.50
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि दोनों समुदायों में उच्च जाति की उत्तरदाताओं की संख्या (18.25 प्रतिशत) सबसे कम है जिसमें हिन्दुओं का प्रतिशत 21.5 तथा मुसलमानों का 15 है । निम्न जाति के उत्तरदाताओं की संख्या दोनों समुदायों में सर्वाधिक (52.50प्रतिशत) है जिसमें कि हिन्दुओं में इसका प्रतिशत 50 तथा मुसलमानों में 55है । इसी प्रकार, मध्यम जाति स्तर में हिन्दू उत्तरदाता 28.5 प्रतिशत तथा मुसलमान 30 प्रतिशत हैं । इस जातीय स्तर में कुल मिलाकर 29.25 प्रतिशत उत्तरदाता आते हैं ।

---

(19) मजूमदार एवं मदान, रेसेज एण्ड कल्चर इन इण्डिया"

(20) के0एल0शर्मा, 1964, दि चेंजिंग रूरल स्ट्रेटीफिकेशन सिस्टम, नई दिल्ली आरिमेन्ट लागमैन, लिमिटेड ।

(21) आर0के0 मुकर्जी , 1957, दि डायनामिक्स आफ रूरल सोसाइटी, बरलिन ऐकेडमिक विरलाज ।

पति का व्यवसाय :

व्यवसायों के वितरण में कुछ जातियों का सीधा सम्बन्ध होता है । कुछ जातियां ऐसी हैं जिनके पास अपनी स्वयं की भूमि होती है किन्तु वे स्वयं कृषि नहीं करते । कुछ भू-स्वामी स्वयं कृषि करते हैं । कुछ ऐसे भी होते हैं जिनके पास स्वयं की भूमि नहीं होती फिर भी वे कृषि कार्यो से किसी न किसी रूप में संलग्न होते हैं । कुछ लोग कृषि के अतिरिक्त कार्यो में संलग्न होते हैं ।

ग्राम्य समाज एवं नागरिक समाज में व्यवसाय का भेद विशेष महत्वपूर्ण है । भारत में ग्रामीण व्यक्तियों का मुख्य व्यवसाय कृषि है । किसान एवं ग्रामीण एक दूसरे के पर्याय माने जाते हैं । इसके विपरीत भारत के शहरी समाज में व्यक्तियों का एक ही व्यवसाय न होकर विभिन्न प्रकार के व्यवसाय होते हैं । अधिकांशतः लोग वाणिज्य-व्यापार तथा औद्योगिक व्यवस्था में लगे हुये हैं । यह एक मान्य तथ्य है कि व्यवसाय व्यक्ति की आर्थिक स्थिति का निर्धारण करता है । पति के व्यवसाय का महिलाओं पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है । कम आय वाले व्यवसाय के कारण उन्हें आवश्यक पोषक आहार प्राप्त नहीं हो पाता जिससे भी कुपोषण की शिकार हो जाती है । परिणाम स्वरूप शिशु व बच्चे भी कुपोषण के शिकार हो जाते हैं । इनकी अकाल मृत्यु शिशु मृत्यु-दर को बढ़ाती है ।

उत्तरदाताओं के पतियों के व्यवसाय सम्बन्धी विवरण को सारणी 3.8 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 3.8

उत्तरदाताओं के पति का व्यवसाय, प्रतिशत में

पति का व्यवसाय	हिन्दू	मुसलमान	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
कृषि से सम्बंधित	48.5	43.5	184	46.00
कृषि के अतिरिक्त	51.5	56.5	216	54.00
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100

सारणी 3.8 से स्पष्ट होता है कि दोनों समुदायों के 46 प्रतिशत उत्तरदाता नगरीय क्षेत्र से सम्बंधित होने के बावजूद भी कृषि से सम्बंधित व्यवसाय अपनाये हुये हैं जिसमें से हिन्दुओं के लिये इनका प्रतिशत 48.5 व मुसलमानों के लिये 43.5 है । इनके अतिरिक्त शेष दोनों समुदायों के 54 प्रतिशत उत्तरदाता कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसायों जैसे- कागज के गत्ते बनाना, साबुन बनाना, दूध, दही, घी बेंचना, मिट्टी के बर्तन बनाकर बेंचना, प्लास्टिक के जूते चप्पल व खिलौना बनाकर बेंचना इनके अतिरिक्त कपड़े की दुकानें, दालमिल, तेलमिल आदि अपनाये हुये हैं, जिसमें हिन्दुओं के लिये इसका प्रतिशत 51.5 व मुसलमानों के लिये इसका प्रतिशत 56.5 है ।

भू-स्वामित्व :

कृषि ही मुख्य व्यवसाय होने के कारण ग्रामवासियों का जीवन कृषि-भूमि के स्वामित्व से प्रभावित होता रहा है । व्यक्ति के पास भू-स्वामित्व होने के कारण आर्थिक सम्पन्नता के साथ वह समुदाय पर नियंत्रण भी करता है ।

भू-स्वामित्व स्थिति निर्धारण का एक कारक है । जिस व्यक्ति के पास अधिक भूमि होती है वह चाहे किसी भी जाति से सम्बंधित हो उसकी स्थिति प्रभावी होती है । चूंकि भू-स्वामित्व पारिवारिक होता है अतः इसका हस्तान्तरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में होता रहता है यद्यपि प्रस्तुत अध्ययन नगरीय परिवेश में किया गया है फिर भी व्यवहारिक स्तर पर वह गांव के जीवन के भी पर्याप्त निकट हैं । पिछले पृष्ठों में व्यवसाय के वितरण से पता चलता है कि लगभग आधे उत्तरदाताओं के परिवारों की जीविका का आधार कृषि है । ऐसे लोग या तो भू-स्वामी हैं अथवा कृषि मजदूरी करके अपना जीवन यापन करते हैं ।

उत्तरदाताओं के परिवार के भू-स्वामित्व सम्बन्धी विवरण को सारणी 3.9 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 3.9

उत्तरदाताओं के परिवार का भू-स्वामित्व, प्रतिशत में

भू-स्वामित्व	हिन्दू	मुसलमान	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
भूमिहीन	73.5	75.0	297	75.25
0-10 एकड़	15.0	9.5	49	12.25
10-20 एकड़	11.5	15.5	54	13.5
उत्तरदाताओं की कुलसंख्या	200	200	400	100

सारणी 3.9 के अवलोकन से पता चलता है कि दोनों समुदायों के सर्वाधिक 74.25 प्रतिशत उत्तरदाता भूमिहीन हैं जिसमें हिन्दुओं के लिये इनका प्रतिशत 73.5 व मुसलमानों के लिये 75.0 है । सारणी से यह भी स्पष्ट होता है कि 25.75 प्रतिशत उत्तरदाता कम अथवा अधिक भूमि के स्वामी हैं । इनमें से 12.25 प्रतिशत के पास 10 एकड़ अथवा उससे भी कम भूमि है जिसमें हिन्दुओं और मुसलमानों में इनका प्रतिशत क्रमशः 15.0 एवं 9.5 है । इसी प्रकार 10-20 एकड़ भू-स्वामित्व वाले उत्तरदाताओं का कुल प्रतिशत 13.5 है जिसमें हिन्दुओं के लिये इसका प्रतिशत 11.5 एवं मुसलमानों में यह 15.5 पाया गया ।

सामाजिक-आर्थिक स्तर :

सामाजिक-आर्थिक स्तर शिशु मृत्यु-दर को प्रभावित करता है । यह कहने की आवश्यकता नहीं कि परिवार की उच्च आय परिवार के खाद्य-पोषण के स्तर को निर्धारित करता है विशेष तौर पर माँ के संदर्भ में । इससे शिशु मृत्यु की दर का निर्धारण होता है ।[22] रूजिका एल0टी0 और टी0 कानिटकर का मत है कि परिवार का सामाजिक-आर्थिक स्तर शिशु मृत्यु की दर को प्रभावित करता है ।[23] के0पी0सिंह ने अपने अध्ययन "चाइल्ट मार्टेलिटी, सोशल स्टेट्स एण्ड फर्टेलिटी इन इण्डिया" के आधार पर यह निष्कर्ष दिया है कि सामाजिक-आर्थिक स्थिति एवं शिशु मृत्यु की दर में विपरीत क्रम का सम्बन्ध है अर्थात जैसे-जैसे सामाजिक-आर्थिक स्तर ऊँचा होता है शिशु मृत्यु की दर कम होती जाती है ।[24]

इसी प्रकार के0एल0शर्मा, 1974 एवं आर0के0मुकर्जी, 1957 के अध्ययनों ने संकेत दिया है कि जाति एवं पारिवारिक-आर्थिक दशाओं का शिशु मृत्यु से घनिष्ठ सम्बन्ध है ।[25 26]

---

(22) स्वामी, अमृतलाल एण्ड मंगोल सुदर्शन, 1961, इकोनोमिक इम्प्लीकेशन आफ इन्फेन्ट मार्टेलिटी, दि जनरल आफ फेमिली वेलफेयर, 7(4), पेज 35-36 ।

(23) रूजिका, एल0टी0 एण्ड कानिटकर टी0, "इन्फेन्ट मारटेलिटी इन ग्रेटर बाम्बे," डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 2 (1), जून 1973, पेज 41-45 ।

(24) के0पी0सिंह, 1974, चाइल्ड मार्टेलिटी, सोशल स्टेट्स एण्ड फर्टेलिटी इन इण्डिया, सोशल बाइलोजी, 21(4), पेज 385-388 ।

(25) के0एल0शर्मा, 1974, दि चेंजिंग रूरल स्ट्रेटीफिकेशन सिस्टम, नई दिल्ली, ओरिमेन्ट लागमैन लिमिटेड ।

(26) आर0के0मुकर्जी, 1957, दि डायनामिक्स आफ रूरल सोसाइ टी, बरलिन ऐकेडमिक विरलाज ।

उत्तरदाताओं का सामाजिक-आर्थिक स्तर सम्बन्धी विवरण सारणी 3.10 में प्रस्तुत है।

सारणी 3.10

उत्तरदाताओं के सामाजिक-आर्थिक स्तर का विवरण, प्रतिशत में

सामाजिक-आर्थिक स्तर	हिन्दू	मुसलमान	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
उच्च	12.5	9.0	43	10.75
मध्य	29.0	22.5	103	25.75
निम्न	58.5	68.5	254	63.50
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100.00

सारणी से स्पष्ट है कि दोनों समुदायों के सर्वाधिक उत्तरदाता 63.5 प्रतिशत, निम्न सामाजिक-आर्थिक स्थिति वाले हैं जिसमें हिन्दुओं के लिये यह प्रतिशत 58.5 व मुसलमानों के लिये यह 68.5 है। सबसे कम उत्तरदाता 10.5 प्रतिशत, उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर से सम्बंधित है जिसमें से हिन्दुओं के लिये यह 12.5 प्रतिशत व मुसलमानों के लिये 9.0 प्रतिशत है। इसी प्रकार, मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के दोनों समुदायों के कुल उत्तरदाताओं की संख्या 25.75 प्रतिशत है जिसमें से हिन्दुओं और मुसलमानों के लिये इनका प्रतिशत क्रमशः 29.0 व 22.5 पाया गया।

पारिवारिक सुविधायें :

(क) मकान का स्वरूप :

सामान्यतः सम्पत्ति का आधार मकान, आभूषण आदि को माना जाता रहा है। जिन व्यक्तियों के पास जितने मकान व आभूषण मौजूद होते हैं उसी के आधार पर उनकी स्थिति का निर्धारण किया जाता है। जिनके पास अच्छे, बड़े व कीमती मकान तथा आभूषण होते हैं उनकी स्थिति उच्च होती है, समाज में उनको उच्च स्तर प्राप्त होता है तथा जिनके आभूषण आदि नहीं होते व स्वयं झोपड़ी में रह रहे होते हैं उनकी स्थिति समाज में निम्न होती है।

उत्तरदाताओं के मकान के स्वरूप सम्बन्धी विवरण सारणी 3.11 में प्रस्तुत किया गया है।

सारणी 3.11

उत्तरदाताओं के मकान के स्वरूप का विवरण, प्रतिशत में

मकान का स्वरूप	हिन्दू	मुस्लिम	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
कच्चा	40.5	51.0	183	45.75
पक्का	30.5	17.0	95	23.75
मिश्रित	29.0	32.0	122	30.50
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100.00

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट है कि दोनों समुदायों के सर्वाधिक 45.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं के मकान कच्चे किस्म के हैं जिनमें हिन्दुओं के लिये इनका प्रतिशत 40.5 व मुसलमानों के लिये इनका प्रतिशत 51.0 है । सबसे कम 23.75 प्रतिशत मकान पक्के किस्म के हैं । इनका प्रतिशत हिन्दुओं के लिये 30.5 एवं मुसलमानों में 17.0 प्रतिशत पाया गया । जबकि मिश्रिम मकानों की संख्या पक्के मकानों से कुछ ज्यादा किन्तु कच्चे मकानों की अपेक्षा कम है जिसका प्रतिशत हिन्दुओं एवं मुसलमानों में क्रमश 29.0 एवं 32.0 है ।

(ख) **प्रकाश का साधन :**

आज के आधुनिक परिवेश में व्यक्ति की सामान्य एवं अति आवश्यक आवश्यकता का स्थान विद्युत ने ले लिया है । व्यक्ति के दैनिक जीवन में हर समय विद्युत उपलब्धता आवश्यक है विद्युत के बगैर को घर को पूर्ण नहीं माना जा सकता । प्रकाश का साधन व्यक्ति के सामाजिक स्तर का निर्धारण भी करता है । जिनके घरों में प्रकाश का साधन विद्युत है उनकी सामाजिक स्थिति उच्च मानी जाती है तथा जिनके यहाँ प्रकाश का अन्य साधन है उनकी स्थिति अपेक्षाकृत निम्न होती है ।

उत्तरदाताओं के मकान में पकाश के साधन सम्बन्धी विवरण को सारणी 3.12 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 3.12

उत्तरदाताओं के मकान में प्रकाश के साधन का विवरण, प्रतिशत में

प्रकाश का साधन	हिन्दू	मुस्लिम	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
बिजली	72.0	64.5	273	68.25
लानटेन	20.0	15.5	71	17.75
डिब्बी	08.0	20.0	56	14.00
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100.00

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट है कि दोनों समुदायों में प्रकाश के साधन के रूप में सर्वाधिक उपयोग बिजली का है । दोनों समुदायों के 68.25 प्रतिशत उत्तरदाता विद्युत का उपयोग करते हैं जिसमें हिन्दुओं का प्रतिशत 72.0 है तथा मुस्लिम में 64.5 है । इसी प्रकार लानटेन का उपयोग 17.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा किया जाता है जिसमें हिन्दुओं एवं मुसलमानों के लिये इसका प्रतिशत 20.0 एवं 15.5 है । इसी क्रम में डिब्बी का प्रयोग हिन्दुओं में 8.0 प्रतिशत एवं मुसलमानों में 20.0 प्रतिशत पाया गया ।

उपरोक्त आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि हिन्दुओं में जहाँ बिजली की उपयोगिता ज्यादा है वहीं मुस्लिम वर्ग भी इसके प्रति कम जागरूक नहीं है । दोनों समुदायों में लानटेन एवं डिब्बी की उपयोगिता धीरे-धीरे समाप्त हो रही है ।

[ग] पीने के पानी का साधन :

वर्तमान समय में नल द्वारा पेय जल की आपूर्ति व्यवस्था काफी प्रचलित हो गयी है । यह व्यवस्था व्यक्ति की सामाजिक-आर्थिक स्थिति की परिचायक भी है। नलकूप की उपयोगिता पीने के पानी के साधन के रूप में पूर्ण रूप से समाप्त हो रही है कुछ हैण्डपम्प के पानी एवं कुछ लोग कुंएं के पानी का प्रयोग करते हैं । अच्छे स्वास्थ्य के लिये एवं जीने के लिये हवा के बाद पानी की अनिवार्यता है । अच्छे स्वास्थ्य के लिये आवश्यक है साफ, स्वच्छ एवं जीवाणु रहित जल । प्रायः जीवाणु व कीटाणु पानी में एवं खुले रखे खाद्य-पदार्थों में पाये जाते हैं । यह पेय जल के माध्यम से शरीर के अन्दर पहुंच कर अनेक प्रकार की बीमारियां पैदा करते हैं । अतः बीमारियों से बचने के लिये स्वच्छ, साफ एवं जीवाणु रहित जल का उपयोग करना चाहिए ।

उत्तरदाताओं के पीने के पानी के साधन सम्बन्धी विवरण को सारणी 3.13 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 3.13

उत्तरदाताओं के पीने के पानी के साधन का विवरण, प्रतिशत में

	पानी का साधन	हिन्दु	मुसलमान	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
नल	व्यक्तिगत	45.0	40.0	170	42.5
	सार्वजनिक	28.5	36.5	130	32.5
कुँआ	व्यक्तिगत	8.0	5.0	26	6.5
	सार्वजनिक	18.5	18.5	74	18.5
	उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100.00

सारणी 3.13 से स्पष्ट है कि दोनों समुदायों के सर्वाधिक 75.0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के यहाँ पीने के पानी के साधन के रूप में नल हैं । जिसमें हिन्दू उत्तरदाताओं में 45.0 प्रतिशत के अपने स्वयं के नल हैं तथा 28.5 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जो सार्वजनिक नल का प्रयोग करते हैं । जबकि मुस्लिम उत्तरदाताओं में से 40.0 प्रतिशत के स्वयं के नल हैं तथा 36.5 प्रतिशत उत्तरदाता सार्वजनिक नल का प्रयोग करते हैं । इसी प्रकार, दोनों समुदायों के 25.0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के द्वारा कुँएं के जल का प्रयोग किया जाता है जिसमें से हिन्दुओं में 8.0 प्रतिशत के स्वयं के कुँएं हैं तथा 18.5 प्रतिशत उत्तरदाता सार्वजनिक कुँओं के पानी का प्रयोग करते हैं । जबकि मुसलमानों में 5.0 प्रतिशत उत्तरदाताओं के स्वयं के कुँएं हैं एवं 18.5 प्रतिशत सार्वजनिक कुँओं के पानी का प्रयोग करते पाये गये है ।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि दोनों समुदायों में नल व्यवस्था काफी प्रचलित है । कुँए की उपयोगिता पीने के पानी के साधन के रूप में कम होती जा रही है ।

सारणी से यह भी स्पष्ट है कि ज्यादातर लोग पीने के पानी का व्यक्तिगत साधन रखते हैं । इसके बाद दूसरा स्थान सार्वजनिक साधन के उपयोगिता का है । दूसरे के साधन पर निर्भर रहने वालों की संख्या एवं साझे के पानी का साधन रखने वालों की संख्या अत्यन्त कम है ।

(घ) शौचालय सुविधा :

उत्तरदाताओं के परिवार में शौचालय सुविधा का विवरण सारणी 3.14 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 3.14

उत्तरदाताओं के परिवार में शौचालय सुविधा का विवरण, प्रतिशत में

शौचालय सुविधा	हिन्दू	मुसलमान	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
है	51.0	29.5	161	40.25
नहीं है	49.0	70.5	239	59.75
उत्तरदाताओं की संख्या	200	200	400	100.00

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि ज्यादातर 59.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं के यहाँ शौचालय सुविधा उपलब्ध नहीं है, हिन्दुओं में इसका प्रतिशत 59.0 है जबकि मुसलमानों के लिये इसका प्रतिशत 70.5 है । इसी प्रकार दोनों समुदायों में जिनके यहाँ शौचालय सुविधा है उनका प्रतिशत 40.25 है जिसमें हिन्दुओं में इसका प्रतिशत 51.0 है तथा मुसलमानों में 29.5 पाया गया।

इस प्रकार शौचालय सुविधा का आँकलन करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि ज्यादातर लोक शौचालय सुविधा से वंचित हैं । दोनों समुदायों में से हिन्दुओं में मुसलमानों की अपेक्षा ज्यादा लोगों के पास शौचालय सुविधा उपलब्ध है ।

प्रस्तुत अध्याय में महिलाओं की सामाजिक पृष्ठ-भूमि का विश्लेषण किया गया है और सूक्ष्म स्तर पर उस सामाजिक परिवेश को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है जिसमें महिलायें निवास करती हैं । साथ ही, व्यक्ति के व्यवहार का सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश से सम्बन्ध और सामाजिक परिवेश से प्रभावित होने वाली तथा प्रभावित करने वाली विशिष्टताओं का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

चतुर्थ अध्याय

पूर्ववर्ती अध्याय में महिलाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया गया जिससे सूक्ष्म स्तर पर उस सामाजिक परिवेश का ज्ञान हो सका जिसकी महिलायें अभिशक्त हैं । इस अध्याय में विविध वर्षों में व दोनों सम्प्रदायों- हिन्दू तथा मुस्लिम -में शिशु मृत्यु-दर का आंकलन कर विवरण प्रस्तुत किया जायेगा । इसी प्रकार, विभिन्न वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात व विभिन्न सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु की दर का विश्लेषण भी प्रस्तुत किया जायेगा । साथ ही, भारत तथा उत्तर प्रदेश की शिशु मृत्यु-दर की तुलना वर्तमान अध्ययन से प्राप्त शिशु मृत्यु-दर सम्बन्धी निष्कर्षों से किये जाने की योजना भी है।

जन्म-मृत्यु सम्बन्धी आंकड़ों के अवलोकन से पता चलता है कि मृत्यु का दबाव समाज के सभी आयु वर्गों में समान नहीं होता । किसी आयु वर्ग में मृत्यु-दर कम तो किसी आयु वर्ग में मृत्यु-दर ज्यादा होती है । किसी जाति में कम तो किसी जाति में ज्यादा होती है तथा किसी सामाजिक व्यवस्था में मृत्यु-दर ज्यादा होती है तो किसी अन्य में कम होती है । मृत्यु का दबाव जन्म के आरम्भिक वर्षों में अधिक होता है आयु बढ़ने के साथ-साथ मृत्यु-दर कम होने लगती है लेकिन बृद्धावस्था में मृत्यु-दर बढ़ जाती है ।

बृद्धावस्था में होने वाली मृत्यु को स्वाभाविक मृत्यु कहा जाता है किन्तु शैशवावस्था की मृत्यु अस्वाभाविक मृत्यु है । इस आयु में मृत्यु का दबाव ऊँचा होना समाज के लिये घातक होता है इसीलिए जनांकिकीय विद्वानों द्वारा शिशु मृत्यु-दर का गम्भीरता पूर्वक अध्ययन किया गया है ।

प्रस्तुत अध्ययन में, शिशु मृत्यु-अथवा वे बच्चे, जिनकी मृत्यु प्रथम वर्षगांठ से पूर्व हो जाती है, का विश्लेषण किया गया है । शिशु मृत्यु-दर अन्य मृत्यु दरों की अपेक्षा (बृद्धावस्था को छोड़कर) काफी ऊँची होती है । शिशु मृत्यु-दर तथा बृद्धावस्था में हुई मृत्यु-दर लगभग बराबर या दोनों में से कोई भी अल्प मात्रा में कम ज्यादा हो सकती है । बृद्धावस्था की मृत्यु ज्यादातर स्वाभाविक होती है जबकि शिशु अवस्था में मृत्यु का कोई न कोई कारण अवश्य होता है । जब शिशु मृत्यु-दर ऊँची होती है तो उस समय उस देश, प्रदेश, नगर व गांव आदि की जन्म-दर भी ऊँची होती है क्योंकि एक कारक दूसरे को उसी गति से प्रभावित करता है अर्थात जन्म-दर जैसे-जैसे बढ़ती है मृत्यु-दर भी बढ़ती है । मृत्यु-दर में जैसे-जैसे कमी आती है जन्म-दर में भी ह्रास होता जाता है ।

सामान्यतः शिशु मृत्यु के पीछे अन्ध-विश्वास ज्यादा महत्वपूर्ण कारक होता है । चिकित्सीय दृष्टिकोण से शिशु मृत्यु-दर को दो भागों में विभाजित करके ज्ञात किया जाता है ।

(1) प्रथम दिन से चार सप्ताह तक हुये जन्म एवं मृत्यु को आधार मानकर, जिसे हम नवजात शिशु-मृत्यु कहते हैं ।

(2) चार सप्ताह से 365 दिन के अन्दर हुये जन्म एवं मृत्यु को आधार मानकर, इसे हम पश्च-नवजात शिशु-मृत्यु कहते हैं ।

प्रथम प्रकार की शिशु मृत्यु-दर ज्यादातर शारीरिक बनावट एवं संक्रामकता पर निर्भर करती है जबकि, द्वितीय प्रकार की शिशु मृत्यु-दर पर्यावरणीय प्रभाव, उचित पोषण का अभाव एवं चिकित्सीय सुविधा की कमी आदि पर निर्भर करती है । जैसे-जैसे आयु वर्ग बढ़ता है मृत्यु-दर कम होती जाती है अर्थात शिशु अवस्था से बृद्धावस्था के मध्य मृत्यु-दर का ग्राफ यदि खींचा जाये तो उसका आकार अंग्रेजी के अक्षर 'यू' ( ) का रूप धारण कर लेगा ।

विविध वर्षों में शिशु मृत्यु-दर :

वर्तमान अध्ययन से प्राप्त वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में शिशु मृत्यु-दर सम्बंधित विवरण सारणी 4.1 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 4.1

विभिन्न वर्षों में शिशु मृत्यु-दर (प्रति हजार)

वर्ष	कुल जीवित जन्मों की संख्या	कुल मृत शिशुओं की संख्या	शिशु मृत्यु-दर
1988	340	114	335.29
1989	269	77	286.24
1990	298	50	167.78
योग	907	241	263.01

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1988 में उत्तरदाताओं ने कुल 340 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 114 शिशुओं की उसी वर्ष के अन्त तक मृत्यु हो गयी इस प्रकार वर्ष 1988 में शिशु मृत्यु-दर 335.29 प्रतिहजार पायी गयी । इसी प्रकार, वर्ष 1989 में उत्तरदाताओं ने 269 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 77 शिशु उसी वर्ष मृत हो गये और शिशु मृत्यु-दर 286.24 थी । इसी क्रम में, वर्ष 1990 में कुल 298 शिशुओं का जन्म हुआ जिसमें से 50

INFANT MORTALITY RATE
(PER TH.) IN DIFFERENT YEAR
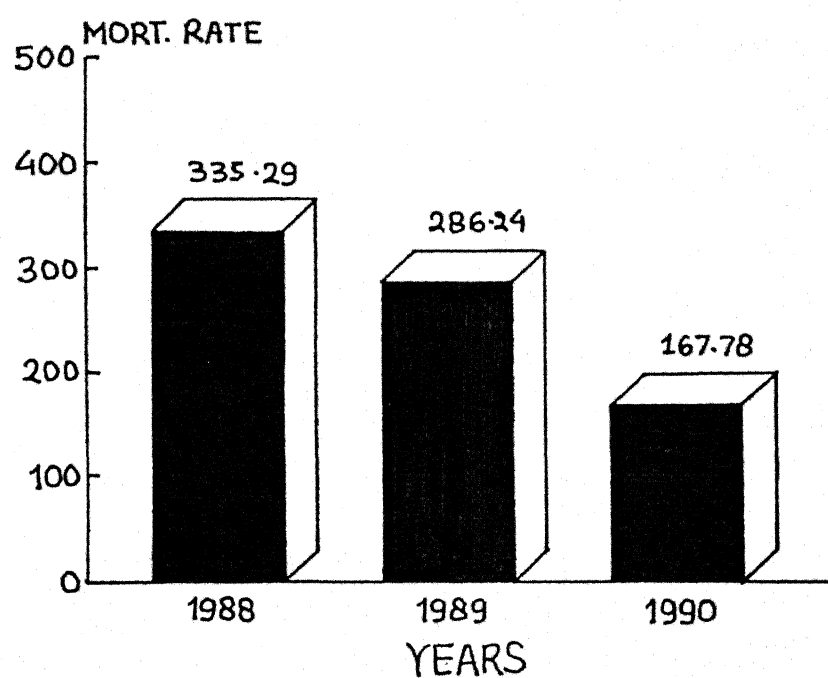
TABLE 4.1

शिशु एक वर्ष के भीतर ही मर गये और शिशु मृत्यु-दर 167.78 रही ।

इस प्रकार तीनों वर्षो- 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 907 शिशुओं ने जन्म लिया जिसमें से 241 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्दर हो गयी औसतन शिशु मृत्यु-दर 263.01 पायी गयी ।

सारणी के विश्लेषण से यह भी स्पष्ट होता है कि शिशु मृत्यु-दर प्रति वर्ष कम होती जा रही है । वर्ष 1988 एवं 1989 के बीच मृत्यु-दर में ह्रास 49.05 प्रतिहजार है जबकि 1989 एवं 1990 के मध्य यह कमी 118.46 प्रतिहजार देखने को मिली । स्वाभाविक रूप से मृत्यु-दर में यह कमी पर्याप्त उत्साह जनक है और ऐसा बढ़ती हुई स्वास्थ्य सुविधाओं (टीकाकरण आदि) तथा जनता के दृष्टिकोण में परिवर्तन के कारण प्रतीत होता है । इस प्रकार हमारी परिकल्पना- शिशु मृत्यु-दर ह्रास की ओर उन्मुख है परन्तु फिर भी यह अधिक है- की पुष्टि होती है ।

कारकल और मालिनी ने भी अपने अध्ययन से स्पष्ट किया है कि वर्ष 1961 में शिशु मृत्यु-दर 124.9 प्रतिहजार जीवित जन्म थी जो 1971 में 103.13 प्रतिहजार जीवित जन्म हो गयी जो कि शिशु मृत्यु-दर में ह्रास का स्पष्ट संकेत है ।[1] इस प्रकार हमारे निष्कर्ष कारकल मालिनी के निष्कर्षों से पर्याप्त साम्य रखते हैं ।

विविध वर्षों में हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु-दर :

वर्तमान अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य शिशु मृत्यु का एक ही परिवेश में रहने वाले हिन्दू एवं मुस्लिम दो सम्प्रदायों के बीच तुलनात्मक अध्ययन करना है । इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु दोनों सम्प्रदायों के जन्म तथा मृत्यु सम्बन्धी ऑकड़े विविध वर्षों के एकत्र किये गये हैं, जिन्हें सारणी 4.2 में प्रस्तुत किया गया है ।

---

(1) कारकल, मालिनी, 1980, इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन महाराष्ट्र इण्डिया, पेपर प्रजेन्टैड एट दि एनुवल मीटिंग आफ दि पापुलेशन एसोसिएशन आफ अमेरिका, डेनवर, कोलोराडो, अप्रैल 10-12, पेज 16 ।

सारणी 4.2

विविध वर्षों में दोनों सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु-दर [प्रति हजार]

वर्ष	सम्प्रदाय					
	हिन्दू			मुसलमान		
	जीवित जन्मों कीसंख्या	शिशु-मृत्यु की संख्या	शिशु मृत्यु-दर	जीवित जन्मों कीसंख्या	शिशु-मृत्यु की संख्या	शिशु मृत्यु-दर
1988	154	43	279.22	186	71	381.72
1989	119	29	243.69	150	48	320.00
1990	137	19	138.68	161	31	192.00
योगः-	410	91	221.95	497	150	301.81

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि वर्ष 1988 में हिन्दू सम्प्रदाय के उत्तरदाताओं ने कुल 154 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 43 शिशुओं की मृत्यु उसी वर्ष के अन्तर्गत हो गई जिससे शिशु मृत्यु-दर 279.22 रही । दूसरी ओर, मुसलमान सम्प्रदाय के उत्तरदाताओं ने 186 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 71 शिशुओं की मृत्यु उसी वर्ष हो गयी, इनमें शिशु मृत्यु-दर 381.72 पाई गई ।

इसी प्रकार, वर्ष 1989 में जहाँ हिन्दू सम्प्रदाय के उत्तरदाताओं 119 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 29 शिशुओं की मृत्यु उसी वर्ष हो गयी तथा शिशु मृत्यु-दर 243.69 प्राप्त हुई वहीं मुसलमान सम्प्रदाय की उत्तरदाताओं ने 150 शिशुओ को जन्म दिया जिसमें से 48 शिशुओं की मृत्यु उसी वर्ष हो गयी और शिशु मृत्यु-दर 320.00 पायी गई ।

इसीक्रम में, वर्ष 1990 में हिन्दू सम्प्रदाय के उत्तरदाताओं ने 137 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 19 शिशु उसी वर्ष मृत हो गये और शिशु मृत्यु-दर 138.68 रही जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय के उत्तरदाताओं ने 161 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 31 शिशुओं की मृत्यु उसी वर्ष हो गयी और शिशु मृत्यु-दर 192.00 पाई गई ।

इस प्रकार, तीनों वर्षों 1988, 1989 एवं 1990 में हिन्दू सम्प्रदाय के उत्तरदाताओं ने कुल 410 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 91 शिशुओं की जन्म लेने वाले वर्ष के अन्दर ही मृत्यु हो गयी तथा शिशु मृत्यु-दर 221.95 प्राप्त हुई इसके विपरीत, मुस्लिम सम्प्रदाय के उत्तरदाताओं ने

INFANT MORTALITY RATE (PER TH.)
IN BOTH COMMUNITY IN DIFFERENT YEARS
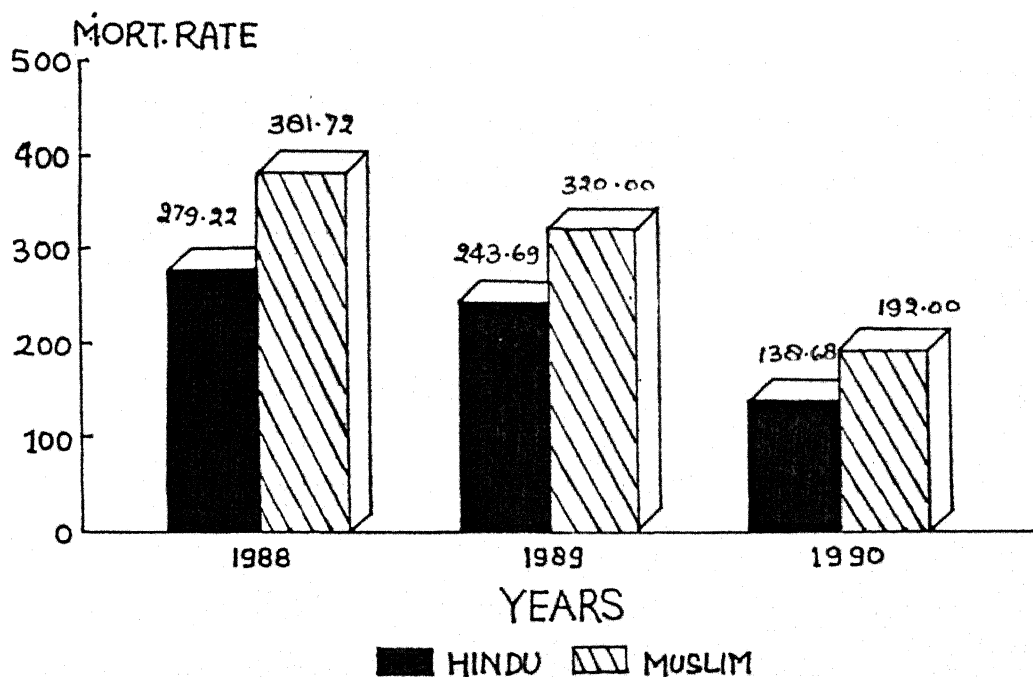
TABLE 4.2

कुल 497 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 150 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्दर ही हो गयी और उनकी शिशु मृत्यु दर 301.81 पाई गई ।

सारणी के विश्लेषण से यह भी स्पष्ट होता है कि वर्ष 1988, 1989, एवं 1990 में दोनों सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु-दर में निरन्तर कमी आ रही है साथ ही, यह भी स्पष्ट होता है कि हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में शिशु मृत्यु-दर अधिक है । एम0ई0खांन ने अपने अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर स्पष्ट किया है कि शिशु मृत्यु का स्तर हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में उच्च है जो कि उनके आर्थिक एवं शैक्षिक पिछड़ेपन का परिणाम है ।[2] इसी प्रकार भट्टाचार्य जी 1979 ने भी स्पष्ट किया है कि हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में शिशु मृत्यु-दर अधिक होती है,[3] जबकि ओमरान और स्टैण्डली (1976) के निष्कर्ष भिन्न प्रकार के हैं उनका मत है कि मुसलमान शिशु मृत्यु के स्तर को कम करने में हिन्दुओं से ज्यादा सतर्क हैं[4]।

इस प्रकार हमारे निष्कर्ष एम0ई0खांन एवं भट्टाचार्य जी के निष्कर्षों से साम्य रखते हैं जबकि ओमरान एवं स्टैण्डली के निष्कर्षों से भिन्न हैं ।

विभिन्न वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर :

प्रायः शिशु मृत्यु का ऑकलन दो भिन्न स्थितियों में किया जाता है जिन्हें नवजात तथा पश्च-नवजात कहा जाता है । नवजात शिशु मृत्यु में वे बच्चे आते हैं जिनकी मृत्यु जन्म से चार सप्ताह के अन्दर हो जाती है जबकि शेष को पश्च-नवजात में सम्मिलित किया जाता है । वर्तमान अध्ययन के लिये शिशु मृत्यु सम्बंधी आँकड़े दोनों ही स्थितियों में अलग-अलग वर्षों के लिये एकत्र किये गये हैं, जिन्हें सारणी 4.3 में प्रस्तुत किया गया है ।

---

(2) खांन, एम0ई0 डिटरमिनेन्ट्स आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन उत्तर प्रदेश, ए माइक्रो लेविल स्टडी, पेपर सबमिटेड टू दि सेमिनार आन "डिटरमिनेन्ट्स आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया," अहमदाबाद, अक्टूबर 1-4, 1984

(2) भट्टाचार्य जी, पी0जे0, "एन एनालिसिस आफ नियोनेटल मारटेलिटी," डी0सी0ए0आर0सी0 इन्सटीट्यूट आफ सोशल एण्ड इकोनोमिक चेन्ज, बंगलौर, एन0डी0 ।

(3) ओमरान, ए0आर0 एण्ड स्टैण्डली, "चाइल्ड लास एण्ड फेमिली फारमेशन," फेमिली फारमेशन पैटर्न एण्ड हेल्थ, एन इण्टरनेशनल कोलेबरेशन स्टडी इन इण्डिया, ईरान, लेबनान, फिलीपीन्स एण्ड तुर्की, जनेवा, डब्ल्यू, एच0ओ0, 1976, पेज 373-422 ।

सारणी 4.3

विविध वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर (प्रति हजार)

वर्ष	नवजात शिशु मृत्यु-दर			पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर		
	जीवित जन्म	शिशु-मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	जीवित जन्म	शिशु-मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर
1988	340	48	141.17	340	66	194.11
1989	269	34	126.39	269	43	159.85
1990	298	24	80.53	298	26	87.24
योग:-	907	106	116.86	907	135	148.84

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट है कि वर्ष 1988 में उत्तरदाताओं द्वारा कुल 340 शिशुओं को जन्म दिया गया जिसमें से 48 शिशुओं की मृत्यु जन्म से चार सप्ताह के अन्दर हो गई और नवजात शिशु मृत्यु-दर 141.17 रही जबकि 66 शिशुओं की मृत्यु चार सप्ताह के बाद किन्तु प्रथम वर्षगांठ के पूर्व हुई जिससे पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर 194.11 पाई गई ।

इसी प्रकार, वर्ष 1989 में उत्तरदाताओं द्वारा 269 शिशुओं को जन्म मिला जिसमें से 34 शिशुओं की मृत्यु जन्म के बाद चार सप्ताह के अन्दर हो गई और नवजात शिशु मृत्यु-दर 126.39 रही जबकि 43 शिशुओं की मृत्यु जन्म के चार सप्ताह के बाद हो गई और शिशु मृत्यु-दर 159.85रही ।

इसी क्रम में, वर्ष 1990 में कुल 298 शिशुओं का जन्म हुआ जिसमें से 24 शिशुओं की मृत्यु जन्म से चार सप्ताह के अन्दर हो गई और नवजात शिशु मृत्यु-दर 80.53 पायी गई जबकि 26 शिशुओं की मृत्यु जन्म से चार सप्ताह के बाद हो गई तथा पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर 87.24 प्राप्त हुई ।

इस प्रकार तीनों वर्षों में कुल 907 शिशुओं का जन्म हुआ जिसमें से 106 शिशुओं की नवजात काल में मृत्यु हो गई और नवजात शिशु मृत्यु-दर 116.86 रही जबकि 135 शिशुओं की पश्च-नवजात काल में मृत्यु हुई और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर 148.84 पायी गयी ।

सारणी में प्रस्तुत तीनों वर्षों के आँकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अलग-अलग वर्षों में नवजात शिशु मृत्यु-दर कीअपेक्षा पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर अधिक है जिससे

NEONATAL & POST-NEONATAL MORTALITY RATE
(PER TH.) IN DIFFERENT YEARS
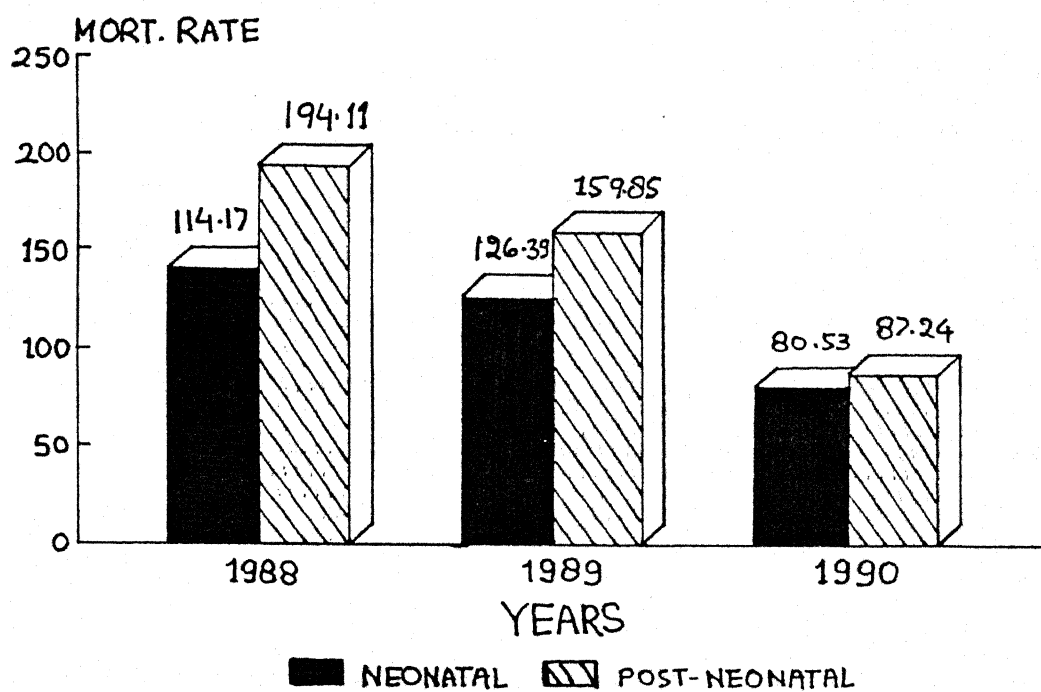
TABLE 4.3

स्पष्ट है कि पर्यावरणीय कारकों, जिसमे चिकित्सीय सुविधा भी सम्मिलित है, की भूमिका शिशु मृत्यु के लिये अधिक उत्तरदायी है । इस प्रकार हमारी परिकल्पना- नवजात शिशुओं की मृत्यु-दर की तुलना में पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर अधिक है- की पुष्टि होती है । भारत जैसे विकासशील देश के पिछड़े तथा अर्धनगरीय क्षेत्र की सुविधाओं के सन्दर्भ में ऐसा होना पूर्ण स्वाभाविक है । सारणी के विश्लेषण से यह भी संकेत मिलता है कि तीनों वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर क्रमशः घट रही है । साथ ही, यह भी स्पष्ट है कि नवजात शिशु मृत्यु-दर की अपेक्षा पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर में गिरावट की गति अधिक है । जो कि चिकित्सीय सुविधाओं के बढ़ने की ओर स्पष्ट संकेत है । टीकाकरण के द्वारा भी पश्च-नवजात शिशु मृत्यु पर पर्याप्त नियन्त्रण के प्रयास सफल होते दिखलाई पड़ रहे हैं । नवजात तथा पश्च-नवजात शिशु मृत्यु के वर्तमान आंकड़ों की तुलना जब उत्तर प्रदेश के आँकड़ों से की जाती है तो पता चलता है कि उत्तर प्रदेश में 1970-1972 में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 93.7 एवं 80.6 प्रतिहजार थी, जबकि 1976-1978 में नवजात शिशु मृत्यु बढ़कर 97.8 प्रतिहजार तक पहुँच गई और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर में गिरावट आयी जो घटकर 75.5 हो गई ।[5] इस प्रकार पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर की गिरावट के सन्दर्भ में हमारे निष्कर्ष उपरोक्त आँकड़ों से मिलते हैं, जबकि नवजात शिशु मृत्यु-दर में पर्याप्त भिन्नता है ।

विविध वर्षों में हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर :

नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु की वास्तविक स्थिति ज्ञात कर लेने के पश्चात हमारा उद्देश्य यह ज्ञात करना भी है कि दोनों सम्प्रदायों में नवजात तथा पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर की स्थिति क्या है, उक्त सन्दर्भ के आँकड़े सारणी 4.4 में दर्शाये गये हैं ।

---

(5) इण्डिया, रजिस्ट्रार जनरल, 1983, ए ।

सारणी 4.4

विविध वर्षो में दोनों सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर [प्रतिहजार]

वर्ष	सम्प्रदाय											
	हिन्दू						मुस्लिम					
	नवजात शिशु मृत्यु-दर			पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर			नवजात शिशु मृत्यु-दर			पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर		
	जन्म	मृत्यु	दर	जन्म	मृत्यु	दर	जन्म	मृत्यु	दर	जन्म	मृत्यु	दर
1988	154	19	123.37	154	24	155.84	186	29	155.84	186	42	255.80
1989	119	13	109.24	119	16	134.45	150	21	140.00	150	27	180.00
1990	137	09	65.69	137	10	72.99	161	15	93.75	161	16	99.37
योगः-	410	41	100.00	410	50	121.95	497	65	130.78	497	85	171.02

सारणी से स्पष्ट है कि वर्ष 1988 में हिन्दू समुदाय की उत्तरदाताओं द्वारा कुल 154 शिशुओं को जन्म दिया गया जिनमें से 19 शिशुओं की मृत्यु चार सप्ताह के अन्दर हो गई और नवजात शिशु मृत्यु-दर 123.37 रही तथा 24 शिशुओं की मृत्यु चार सप्ताह के पश्चात किन्तु प्रथम वर्षगॉठ के पूर्व हो गई और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर 155.84 प्राप्त हुई, दूसरी ओर मुस्लिम समुदाय की उत्तरदाताओं ने कुल 186 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 29 शिशुओं की मृत्यु 28 दिन के अन्दर हो गई तथा नवजात शिशु मृत्यु-दर 155.84 रही, 42 शिशुओं की मृत्यु 28 दिन के बाद हो गई और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर 255.80 पाई गई ।

इसी प्रकार, वर्ष 1989 में हिन्दू समुदाय के उत्तरदाताओं द्वारा 119 शिशुओं को जन्म दिया गया जिनमें से 13 शिशुओं की मृत्यु चार सप्ताह के अन्दर हो गई और नवजात शिशुओं की मृत्यु-दर 109.24 रही तथा 16 शिशुओं की मृत्यु चार सप्ताह के बाद हो गई और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर 134.45 प्राप्त हुई । साथ ही, मुस्लिम समुदाय की उत्तरदाताओं ने कुल 150 शिशुओं को जन्म दिया जिनमें से 21 शिशुओं की मृत्यु चार सप्ताह के अन्दर हो गई और नवजात शिशु मृत्यु-दर 140.00 रही तथा 27 शिशुओं की मृत्यु 28 दिन के बाद हो गई और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर 180.00 प्राप्त हुई ।

इसी क्रम में, वर्ष 1990 में हिन्दू समुदाय के उत्तरदाताओं द्वारा 137 शिशुओं को

NEONATAL & POST-NEONATAL DEATH RATE
(PER TH.) IN BOTH COMMUNITY(IN DIFF. YRS)
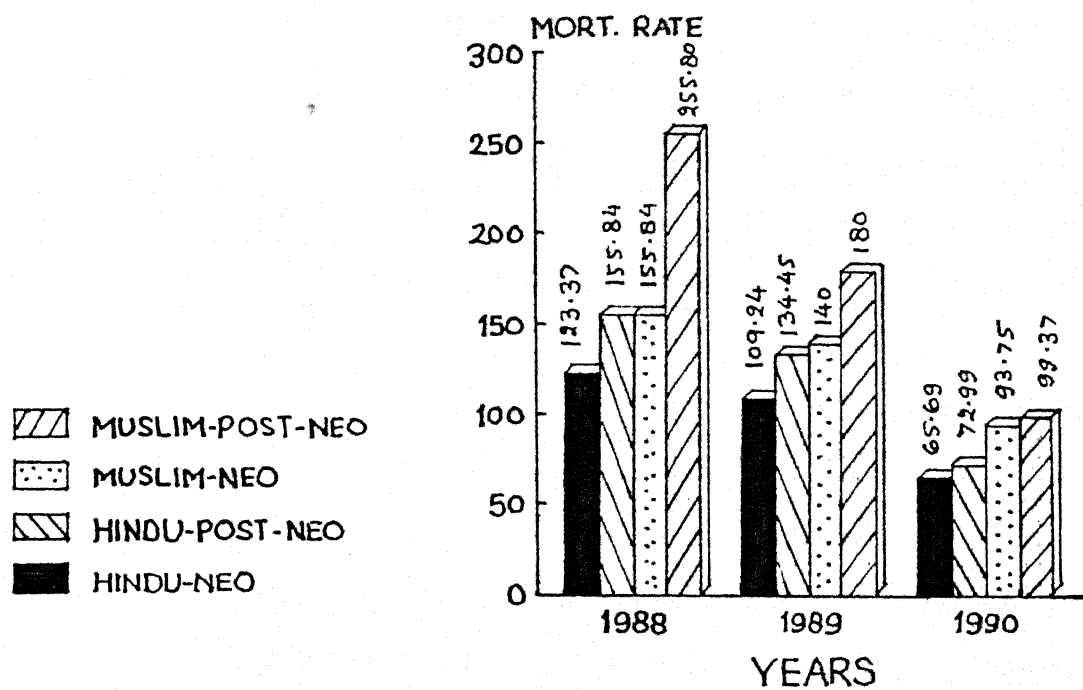
TABLE 4.4

जन्म दिया गया जिनमें से 9 शिशुओं की मृत्यु जन्म से 28 दिन के अन्दर हो गई और नवजात शिशु मृत्यु-दर 65.69 रही तथा 10 शिशुओं की मृत्यु 28 दिन के बाद हो गई और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर 77.99 प्राप्त हुई । उसी वर्ष में मुस्लिम समुदाय के उत्तरदाताओं ने कुल 161 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 15 शिशुओं की मृत्यु जन्म से 28 दिन के अन्दर हो गई और नवजात शिशु मृत्यु-दर 93.75 रही तथा 16 शिशुओं की मृत्यु 28 दिनके बाद हो गई और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर 99.37 पाई गई ।

यदि सम्पूर्ण रूप में देखा जाये तो तीनों वर्षों में हिन्दू उत्तरदाताओं ने कुल 410 शिशुओं को जन्म दिया जिनमें से 41 शिशुओं की मृत्यु जन्म से 28 दिन के अन्दर व 50 शिशुओं की मृत्यु 28 दिन के बाद हो गई । इस प्रकार नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 100.00 एवं 121.95 पाई गई । दूसरी ओर, मुस्लिम उत्तरदाताओं ने कुल 497 शिशुओं को जन्म दिया जिनमें से 65 शिशुओं की मृत्यु 28 दिन के अन्दर व 85 शिशुओं की मृत्यु 28 दिन के बाद हो गई । इस प्रकार, नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 130.78 व 171.02 प्रति हजार रही ।

सारणी के ऑकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि दोनों सम्प्रदायों में विविध वर्षों में नवजात शिशु मृत्यु-दर की तुलना में पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर अधिक है । दोनों सम्प्रदायों की स्त्रियाँ एक ही परिवेश से ली गई हैं और इसी से यह साम्य परिलक्षित हो रहा है । उनको मिलने वाली चिकित्सीय सुविधा भी एक समान है और इसीलिए शिशु मृत्यु-दर में होने वाला ह्रास भी दोनों ही सम्प्रदायों में दृष्टिगोचर हो रहा है । इससे यह भी आभाष मिलता है कि चिकित्सीय सुविधा में निरन्तर बृद्धि हो रही है और वह दोनों सम्प्रदायों को समान रूप से प्राप्त हो रही है ।

विविध वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु-मृत्यु अनुपात :

नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर को और भी अधिक प्रभावी ढंग से समझने के लिये उसका अनुपातिक विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है जो सारणी 4.5 में प्रस्तुत है ।

सारणी 4.5

विविध वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु- अनुपात

वर्ष	नवजात शिशु मृत्यु	पश्च-नवजात शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु अनुपात
1988	48	66	1:1.37
1989	34	43	1:1.27
1990	24	26	1:1.08
योगः-	106	135	1:1.27

NEONATAL & POST-NEONATAL DEATH
(IN DIFFERENT YEARS)
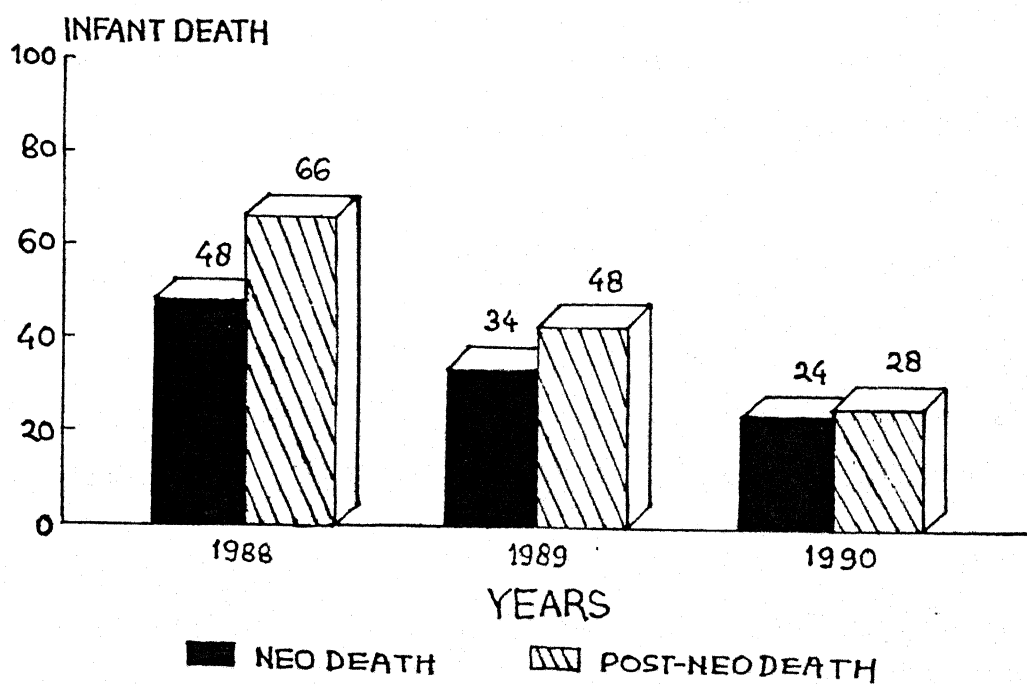
TABLE 4.5

सारणी से स्पष्ट है कि 1988 में कुल नवजात शिशु मृत्यु 48 एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु 66 पाई गई जिससे नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अनुपात 1:1.37 रहा । इसी प्रकार, वर्ष 1989 में नवजात शिशु मृत्यु 34 व पश्च-नवजात शिशु मृत्यु 43 रही और नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अनुपात 1:1.26 पाया गया । इसी क्रम में, वर्ष 1990 में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 24व 26 पाई गई और नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अनुपात 1:1.08 प्राप्त हुआ ।

यदि सम्पूर्ण रूप में देखा जाये तो नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 106 व 135 है तथा उनके बीच अनुपात 1:1.27 है ।

सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट है कि नवजात शिशु मृत्यु को स्थिर करके पश्च-नवजात शिशु मृत्यु को उसके अनुपात में रखकर देखा जाये तो दो तथ्य उभर कर सामने आये पहला, नवजात शिशु मृत्यु की तुलना में पश्च-नवजात शिशु मृत्यु सदैव अधिक है । दूसरा, पश्च-नवजात शिशु मृत्यु लगातार ह्रास की ओर उन्मुख है । पश्च-नवजात शिशु मृत्यु में यह परिवर्तन अपेक्षित है ।

विविध वर्षों में दोनों सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-अनुपात :

नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु की आनुपातिक स्थिति ज्ञात कर लेने के पश्चात दोनों सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अनुपात की स्थिति का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया उक्त सन्दर्भ के आंकड़े सारणी 4.6 में प्रस्तुत है ।

सारणी 4.6

विविध वर्षों में दोनों सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-अनुपात

वर्ष	सम्प्रदाय					
	हिन्दू			मुस्लिम		
	नवजात शिशु मृत्यु	पश्च-नवजात शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु अनुपात	नवजात शिशु मृत्यु	पश्च-नवजात शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-अनुपात
1988	19	24	1:1.26	29	42	1:1.44
1989	13	16	1:1.23	21	27	1:1.28
1990	09	10	1:1.10	15	16	1:1.06
योगः -	41	50	1:1.21	65	85	1:1.30

NEONATAL & POST-NEONATAL DEATH
IN BOTH COMMUNITY (IN DIFFERENT YEARS)
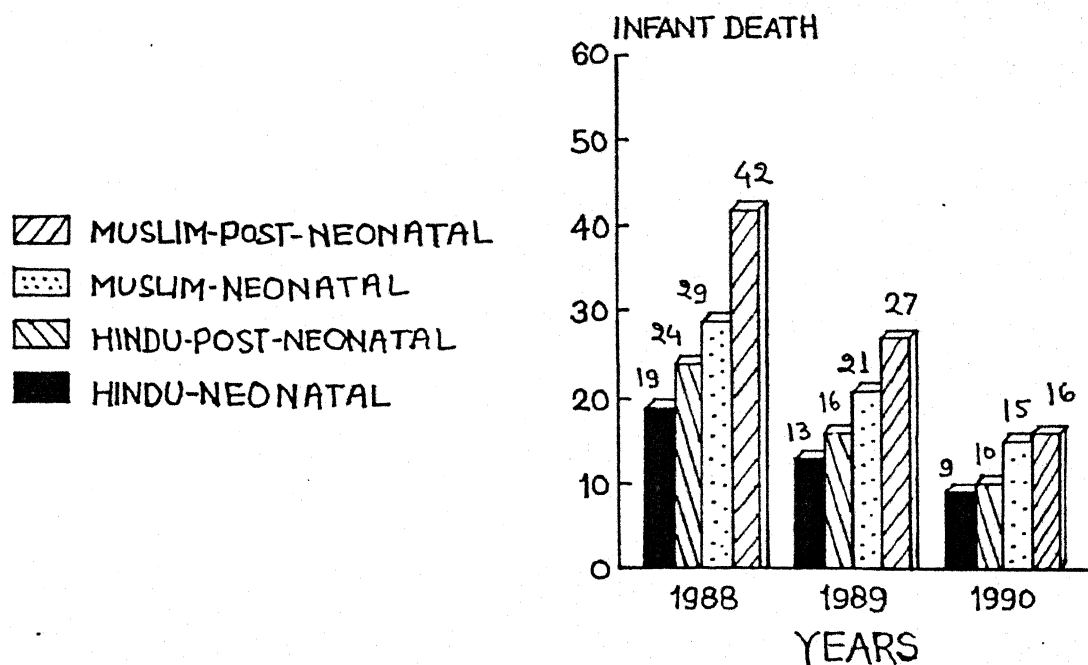
TABLE 4.6

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि वर्ष 1988 में हिन्दू सम्प्रदाय में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 19 एवं 24 पाई गई और नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-अनुपात 1:1.26 रहा जबकि मुस्लिम समुदाय में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 29 व 42 रही और नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-अनुपात 1:1.44 पाया गया ।

इसी प्रकार, वर्ष 1989 में हिन्दू सम्प्रदाय में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 13व 16 पाई गई व दोनों का अनुपात 1:1.23 रहा जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 21 व 27 पाई गई और नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अनुपात 1:1.28 प्राप्त हुआ ।

इसी क्रम में, वर्ष 1990 में हिन्दू सम्प्रदाय के नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 9 एवं 10 रही और नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-अनुपात 1:1.10 पाया गया जबकि वहीं मुस्लिम सम्प्रदाय में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 15 व 16 प्राप्त हुई और दोनों का अनुपात 1:1.06 रहा ।

कुल मिलाकर दोनों सम्प्रदायों में से जहाँ हिन्दू सम्प्रदाय में तीनों वर्षों- 1988, 1989 एवं 1990- में कुल नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 41 एवं 50 रही और दोनों का अनुपात 1:1.21 प्राप्त हुआ वहीं मुस्लिम सम्प्रदाय में तीनों वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु क्रमशः 65 व 85 प्राप्त हुई और नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-अनुपात 1:1.30 रहा।

सारणी के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि हिन्दू सम्प्रदाय की तुलना में मुस्लिम समुदाय ने पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अधिक है परन्तु यह निरन्तर कम होती जा रही है । साथ ही, वर्ष 1990 में यह हिन्दुओं की अपेक्षा कुछ कम हो गई है । ऐसा मुस्लिम सम्प्रदाय में स्वास्थ्य सुविधाओं के प्रति जागरूकता पैदा हो जाने के कारण प्रतीत होता है ।

विविध वर्षों में वर्तमान अध्ययन से प्राप्त शिशु मृत्यु-दर की उत्तर प्रदेश एवं भारत की शिशु मृत्यु-दर से तुलना

भारत विविधताओं वाला विशाल देश है जहाँ क्षेत्रीय विषमतायें प्रत्येक दृष्टि से दृष्टिगोचर होती हैं । स्वाभाविक तौर पर शिशु मृत्यु-दर में भी विभिन्नता अपेक्षित है । वर्तमान अध्ययन के निष्कर्षों से प्राप्त शिशु मृत्यु-दर के आंकड़ों की तुलना प्रादेशिक तथा राष्ट्रीय स्तर के आँकड़ों से करने की हमारी योजना है । इसी तारतम्य में, तीन वर्षों के लिये आंकड़े सारणी 4.7 में प्रस्तुत है ।

सारणी 4.7

विविध वर्षों में वर्तमान अध्ययन से प्राप्त शिशु मृत्यु-दर सम्बन्धी आँकड़ों की उत्तर प्रदेश तथा भारत के आँकड़ों से तुलना

वर्ष	मौदहा नगर में शिशु मृत्यु-दर	उत्तर प्रदेश में शिशु मृत्यु-दर	भारत में शिशु मृत्यु-दर
1988	335.29	118	87
1989	286.24	120	91
1990	167.78	118	80
औसत	265.71	118.66	86

सारणी का अवलोकन करने से पता चलता है कि वर्ष 1988 में वर्तमान अध्ययन क्षेत्र में शिशु मृत्यु-दर 335.29 प्रति हजार थी वहीं यह उत्तर प्रदेश एवं भारत में क्रमशः 118 एवं 87 प्रतिहजार थी । यह उत्तर प्रदेश की शिशु मृत्यु-दर से 2.84 गुना एवं भारत की शिशु मृत्यु-दर से 3.85 गुना अधिक है ।

वर्ष 1989 में वर्तमान अध्ययन से प्राप्त शिशु मृत्यु-दर 286.24 प्रतिहजार पाई गई वहीं उत्तर प्रदेश में यह 120 एवं भारत में 91 प्रतिहजार थी अर्थात, 1988 की तुलना में वर्ष 1989 में शिशु मृत्यु-दर में कमी आई है यह मृत्यु-दर उत्तर प्रदेश की शिशु मृत्यु-दर से 2.38 गुना एवं भारत की शिशु मृत्यु-दर से 3.14 गुना ज्यादा पाई गई ।

वर्ष 1990 में वर्तमान अध्ययन क्षेत्र की शिशु मृत्यु-दर 167.78 प्रतिहजार पाई गई जबकि उत्तर प्रदेश में यह 118 एवं भारत में यह 80 प्रति हजार आंकी गई । इस प्रकार वर्तमान अध्ययन से प्राप्त शिशु मृत्यु-दर उत्तर प्रदेश की दर से 1.42 गुना व भारत की शिशु मृत्यु-दर से 2.09 गुना अधिक थी । किन्तु फिर भी 1989 की अपेक्षा 1990 में शिशु मृत्यु-दर में कमी आयी है ।

इस प्रकार तीनों वर्षों का वर्तमान अध्ययन में शिशु मृत्यु-दर का औसत 265.71 एवं उत्तर प्रदेश एवं भारत का क्रमशः 118.66 तथा 86 था ।

सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट है कि वर्तमान अध्ययन क्षेत्र में शिशु मृत्यु-दर बहुत अधिक है । यदि तीनों वर्षों के औसत की तुलना की जाय तो पता चलता है कि हमारे आँकड़े प्रादेशिक तथा राष्ट्रीय स्तर के आँकड़ों से कई गुना शिशु मृत्यु दर्शाते हैं । जैसा कि हम पूर्व अध्याय

COMPARISON OF INFANT MOR.RATE OF MAUDAHA
(PER TH.) WITH UP & INDIA (IN DIFF. YRS.)
MORT. RATE
500
400
300
200
100
0
335.29
118
87
286.24
120
91
187.78
118
80
1988
1989
1990
YEARS
MAUDAHA
UP
INDIA
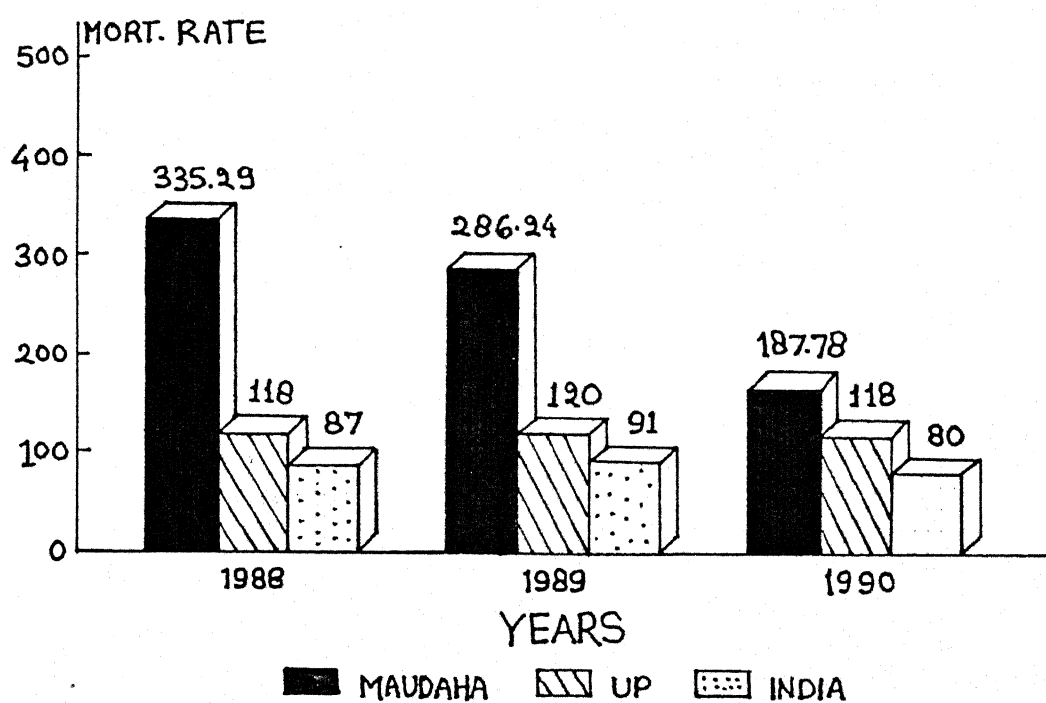
TABLE 4.7

में स्पष्ट कर चुके हैं कि हमारा अध्ययन क्षेत्र देश तथा प्रदेश का एक अत्यधिक पिछड़ा क्षेत्र है जहाँ पर निर्धनता, अशिक्षा तथा अन्धविश्वासों का साम्राज्य है तथा यह क्षेत्र आधुनिक चिकित्सीय सुविधाओं की दृष्टि से भी बहुत पीछे है । इसी कारण से यहाँ शिशु मृत्यु-दर बहुत अधिक पाई गई ।

प्रस्तुत अध्याय में विविध वर्षों में व दोनों सम्प्रदायों -हिन्दू तथा मुस्लिम- में शिशु मृत्यु-दर का आँकलन कर विवरण प्रस्तुत किया गया है । इसी प्रकार, विभिन्न वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर व विभिन्न सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है । साथ ही, नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर को और अधिक प्रभावी ढ़ंग से समझने के लिये उसके आनुपातिक विश्लेषण का प्रयास किया गया है । इसके अतिरिक्त, भारत तथा उत्तर प्रदेश की शिशु मृत्यु-दर की तुलना वर्तमान अध्ययन से प्राप्त शिशु मृत्यु-दर सम्बन्धी निष्कर्षों से की गई है ।

पंचम अध्याय

विगत अध्याय में शिशु मृत्यु-दर सम्बन्धी विवरण प्रस्तुत किया गया जिसके आधार पर यह सुनिश्चित हो सका कि विभिन्न वर्षों में दोनों सम्प्रदायों (हिन्दू तथा मुस्लिम) में शिशु मृत्यु का स्तर क्या रहा । साथ ही, दोनों सम्प्रदायों में विभिन्न वर्षों में नवजात शिशु मृत्यु-दर, पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर एवं उनके बीच अनुपात को स्पष्ट किया गया । प्रस्तुत अध्याय में शिशु मृत्यु-दर से सम्बंधित कुछ ऐसे सामाजिक-सांस्कृतिक तत्वों का सूक्ष्म रूप से विश्लेषण किया जायेगा जिनके कारण शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें उत्पन्न हो जाती हैं । स्पष्टतः ऐसे विभिन्न सामाजिक कारकों की विवेचना की जायेगी जो शिशु मृत्यु-दर को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं ।

विश्व के विभिन्न देशों के मृत्यु-दर सम्बन्धी आँकड़ों पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि कुछ विकसित देशों में शिशु मृत्यु-दर बहुत कम हैं तथा कुछ विकासशील देशों में शिशु मृत्यु-दर बहुत अधिक है । न केवल विभिन्न देशों के बीच वरन् एक ही देश में एक क्षेत्र की शिशु मृत्यु-दर दूसरे क्षेत्र की अपेक्षा भिन्न है । इतना ही नहीं, जाति, धर्म, पारिवारिक संरचना, रीति-रिवाज एवं स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता आदि विविध कारणों से शिशु मृत्यु-दर भिन्न-भिन्न हो जाती है । इस सन्दर्भ में वोगी ने लिखा है कि "जनांकिकी वेत्ता एवं चिकित्सा सम्बन्धी अनुसंधान कर्ताओं ने यह ज्ञात कर लिया है कि समय एवं परिस्थितियों के कारण शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें आ जाती हैं[1] ।

यद्यपि ऐसे विभिन्न सामाजिक कारकों एवं तत्वों का संख्यात्मक विश्लेषण करना कठिन है क्योंकि मृत्यु सम्बन्धी सूचना एवं जनगणना करते समय सामाजिक तत्वों की परिभाषा अलग-अलग होती है तथा इनका मृत्यु के सम्बन्ध में विश्लेषण करने का संदर्भ भिन्न-भिन्न होता है । कुछ महत्वपूर्ण तत्व जिनके कारण शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें हो जाती हैं वे इस प्रकार हैं[2] ।

---

(1) बोगी, डोनाल्ड, जे0, (1961), प्रिंसिपल आफ डेमोग्राफी, जन वेली एण्ड सन्स, न्यूयार्क, पेज 602 ।

(2) महादेवन, के0 एण्ड नाम बोथीरी, नारायनन, डी0, (1972), कास्ट स्टेट्स एण्ड फर्टीलिटी इन ए रूरल एरिया आफ तमिलनाडु, बुलेटिन आफ दि गाँधी ग्राम इन्स्टीट्यूट आफ रूरल हेल्थ एण्ड फेमिली प्लानिंग, जुलाई 7(1) ।
मुथियाह, ए0, (1980), रिप्रोडक्सन इन फोर कल्चरल ग्रुप इन रूरल एरिया आफ तमिलनाडु, इण्डिया, चण्डीगढ़, पेज 39 ।

1- धर्म के आधार पर

2- परिवार के स्वरूप के आधार पर

3- जाति के आधार पर

4- माँ की शिक्षा के आधार पर

5- पिता की शिक्षा के आधार पर

6- पिता के व्यवसाय के आधार पर

7- भू-स्वामित्व के आधार पर

8- विवाह के समय माँ की आयु के आधार पर

9- प्रसव के समय सहायक के आधार पर

10- नाल काटने के यंत्र के आधार पर

11- जन्म के स्थान के आधार पर

12- प्रसव के समय माँ की आयु के आधार पर

13- बच्चे के लिंग के आधार पर

14- परिवार के सामाजिक-आर्थिक स्तर के आधार पर

अब वर्तमान अध्ययन से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर शिशु-मृत्यु सम्बन्धी विभिन्नताओं की विवेचना की जायेगी ।

धर्म के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

धर्म एक ऐसा महत्वपूर्ण कारक हैं जो कि शिशु मृत्यु को प्रत्यक्षतः प्रभावित करता है । हिन्दू धर्म में पुत्र प्राप्ति को मोक्ष-प्राप्ति का आधार माना जाता है जबकि पुत्री का जन्म निराशा का कारण बन जाता है । लड़कों तथा लड़कियों का अल्पआयु में विवाह करना धर्म के अनुरूप माना जाता है। जिसके कारण अविकसित शिशु पैदा होते हैं और शिशु मृत्यु-दर बढ़ जाती है । धर्म के आधार पर बस्तियों में जनसंख्या का घनत्व बढ़ जाता है जिससे बस्तियां घनी और गन्दी हो तीा हैं जिसके कारण उन बस्तियों में रहने वाले अधिकांश लोग अस्वस्थता तथा कुपोषण के शिकार हो जाते हैं । प्रजनन क्षमता अधिक होने के कारण भी कुपोषण की समस्या पैदा हो जाती है । बढ़ती हुई आकाँक्षाओं ने जीवन को व्यस्त बना दिया है, जिससे बच्चों की देख-भाल कम हो पाती है । हिन्दू समाज में धर्म की कट्टरता अपेक्षाकृत कम है जबकि मुस्लिम समुदाय में धार्मिक कट्टरता अधिक है । गरीबी, अशिक्षा तथा संकीर्णता अधिक है जिसके कारण शिशु कुपोषण के शिकार हो जाते हैं । साथ ही, उन्हें उत्तम चिकित्सा सुविधा भी नहीं मिल पाती जिसके कारण प्रायः मुसलमानों में शिशु-मृत्यु-दर अधिक पायी जाती है । हिन्दुओं

में शिशु मृत्यु-दर कम है जो कि अनेक विद्वानों के द्वारा किये गये अध्ययनों से स्पष्ट है । भट्टाचार्य जी इस बात से सहमत हैं कि मुस्लिम सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर अधिक एवं हिन्दू सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर कम होती है [3] जबकि ओमरान तथा स्टैण्डली इस बात का समर्थन नहीं करते [4] । एम0ई0खान का निष्कर्ष है कि मुस्लिम सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर अधिक होती है, जबकि हिन्दुओं में यह कम होती है [5] ।

उक्त परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त तथ्यों को सारणी 5.1 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.1

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु-दर तथा जन्म-मृत्यु अनुपात का विवरण

धर्म के आधार पर	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
हिन्दू	410	91	221.95	1:.22
इस्लाम	497	150	301.81	1:.30
योगः-	907	241	265.71	1:.27

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट है कि हिन्दू महिलाओं ने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 410 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 91 शिशुओं की मृत्यु उनके जन्म लेने वाले वर्ष में हो गई । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 221.95 प्रतिशत रही । मुस्लिम महिलाओं ने उन्हीं तीनों वर्षों में कुल 497 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 150 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व ही हो गई । इस प्रकार, इनमें शिश मृत्यु-दर 301.81 प्रतिहजार पायी गई ।

---

(3) भट्टाचार्य जी, पी0जे0, (1979), फैक्टर्स इनफ्ल्यूवेशिंग इनफेन्ट मार्टीलिटी, के0श्रीनिवासन, पी0सी0सक्सेना, तारा कानिटकर, डेमोग्राफी एण्ड सोशल इकोकोमिक्स एस्पेक्ट आफ दि चाइल्ड इन इण्डिया, बाम्बे हिमालयन पब्लिसिंग हाउस, पेज नं0 115-122 ।

(4) ओमरान, ए0आर0एण्ड स्टैण्डली, सी0सी0 (1976) फेमिली फारमेशन बैटर्नत एण्ड हेल्थ, एन इण्टरनेशनल कोलोवरेटिव स्टडी इन इण्डिया, लन्दन, जनेवा ।

(5) खान, एम0ई0 (1980) इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन उत्तर प्रदेश, ए माइक्रो लेविल स्टडी इन इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन इण्डिया, अनुराधा के0जैन एंण्ड विसारिया प्रवीन,लन्दन,पेज 234 ।

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
IN BOTH COMMUNITIES IN BASIS OF RELIGION
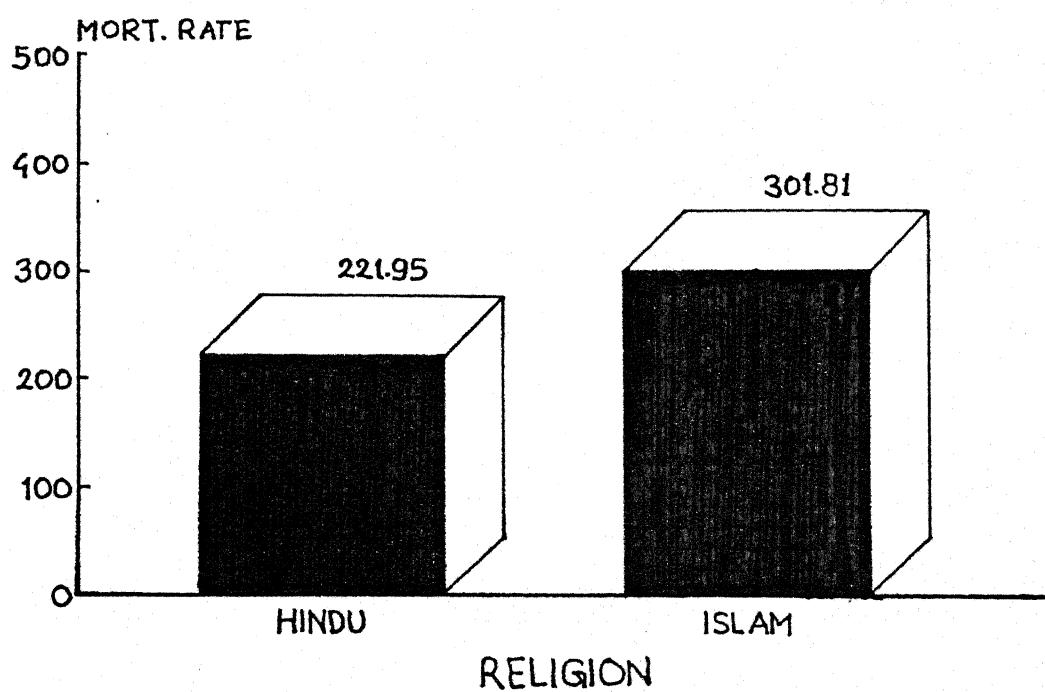
TABLE 5.1

सारणी शिशु जन्म एवं मृत्यु के अनुपात को भी स्पष्ट करती है । हिन्दुओं में यह अनुपात । एवं .22 का है, जबकि मुसलमानों में । एवं .30 का है और अधिक स्पष्ट शब्दों में हिन्दुओं में । शिशु जन्म पर 0.22 शिशु मरते हैं जबकि मुसलमानों में मरने वाले शिशु 0.30 हैं । इस प्रकार हिन्दुओं में शिशु मृत्यु-दर इस्लाम धर्म के अनुयाइयों की अपेक्षा पर्याप्त कम है जिससे हमारी परिकल्पना--माता-पिता का धर्म शिशु मृत्यु के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है,--की पुष्टि होती है । ऐसा अनेक कारणों से हो सकता है । सारणी के आंकड़े इस तथ्य को दर्शाते हैं कि हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में जन्मदर अधिक है । उतने ही समय में हिन्दू स्त्रियों के 410 बच्चे पैदा हुये जितने समय में मुसलमान स्त्रियों ने 497 बच्चों को जन्म दिया । यह एक प्रमाणित तथ्य है कि उच्च जन्म-दर उच्च मृत्यु-दर का कारण होती है । जब मुसलमान स्त्रियों में हिन्दु स्त्रियों की अपेक्षा जन्म-दर अधिक है तो स्वाभाविक रूप से उनमें मृत्यु-दर भी अधिक होनी चाहिए ।

तथ्य संकलन के दौरान यह भी पता चला कि हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में अशिक्षा, अन्ध-विश्वास, भाग्यवादिता तथा अनेक कुरीतियों का प्रचलन अधिक है । ये सभी कारण बच्चे के बीमार होने पर उनके माता-पिता को बाध्य करती हैं कि वे डाक्टर केबजाय झाड-फूंक करने वालों के पास जायें । यह स्थिति भी शिशु मृत्यु को बढ़ावा देती है ।

हमारे निष्कर्ष भट्टाचार्य तथा खान के निष्कर्षों से साम्य रखते हैं जबकि ओमरान एवं स्टैण्डली के निष्कर्षों से मेल नहीं खाते हैं ।

परिवार के स्वरूप के आधार पर शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें :

परिवार के स्वरूप से शिशु मृत्यु-दर प्रभावित होती है । संयुक्त परिवार में बच्चों की देखभाल कम हो पाती है । पारिवारिक रीति-रिवाज एवं बन्धनों के कारण लोग अपने ही बच्चों की देखभाल ठीक से नहीं कर पाते हैं । जिसके कारण शिशु कुपोषण तथा चिकित्सीय असुविधा के शिकार हो जाते हैं । संयुक्त परिवार से अनेक लाभ भी हैं किन्तु इसके बावजूद परिवार का स्वरूप प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से शिशु मृत्यु-दर को प्रभावित करता है ।

प्रस्तुत अध्ययन से सम्बंधित क्षेत्र में संयुक्त परिवार प्रणाली का प्रचलन अधिक है जो कि शिशु मृत्यु-दर को प्रभावित करता है । संयुक्त परिवारों में शिशु मृत्यु-दर एकाकी परिवारों की अपेक्षा अधिक पायी जाती है । ऐसा अनेक अध्ययनों से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट है । मैथ्यूशू ने भी इस तथ्य को माना है कि पारिवारिक संगठन का प्रभाव शिशु मृत्यु-दर पर पड़ता है [6] साथ ही, बेकर ने भी इस बात

---

(6) सिग मैथ्यूशू आई,0 (1983), डिक्लाइन आफ मार्टेलिटी आफ जापान, यू0एस0जापान कान्फ्रेन्स [illegible]

का समर्थन किया है । उनका कहना है कि यदि परिवार बड़ा होगा तो खान-पान की व्यवस्था उत्तम नहीं हो सकती[7]। इनके अतिरिक्त, नाम और हरिंगटन ने भी स्पष्ट किया है कि पारिवारिक वातावरण का प्रभाव विभिन्न दृष्टिकोण से बच्चों पर और उनके मृत्यु तथा जीवन शैली पर अवश्य पड़ता है[8]।

अध्ययन से सम्बंधित प्राप्त आंकड़े सारणी 5.2 में प्रस्तुत किये गये हैं ।

सारणी 5.2

परिवार के स्वरूप के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें एवं शिशु जन्म-मृत्यु अनुपात

परिवार का स्वरूप	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
संयुक्त	559	161	288.01	1:.29
एकाकी	348	80	229.88	1:.23
योगः-	907	241	265.71	1:.27

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं ।

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि संयुक्त परिवारों में शिशु मृत्यु-दर 288.01 प्रति हजार है तथा जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.29 है अर्थात एक शिशु के जन्म पर 0.29 शिशुओं की मृत्यु हो जाती है । इसके विपरीत, एकाकी परिवारों में शिशु मृत्यु-दर कुछ कम 229.88 प्रति हजार है क्योंकि यहाँ तीनों वर्षों में कुल 348 शिशुओं ने जन्म लिया एवं 80 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गयी । यहाँ जन्म-मृत्यु अनुपात 1:.23 पाया गया ।

इस प्रकार एकाकी परिवारों की अपेक्षा संयुक्त परिवारों में शिशु मृत्यु-दर अधिक है, किन्तु यह अन्तर बहुत कम पाया गया । फिर भी, शिशु मृत्यु-दर पर पारिवारिक स्वरूप का आंशिक प्रभाव परिलक्षित होता है जो कि .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है । जिससे हमारी

---

(7) बेकर, हुग, डी0आर0 (1979), इपीडिमियोलोजिक पैटर्न ओवर टाइम इन डी0एम0 टीड एण्ड एफ0जे0 स्टैण्डली: दि इपीडिमियोलोजी आफ प्रिमेच्योरिटी: वस्टीमोर, स्वारजेन वर्ग पेज नं0 5-15 ।

(8) नाम, सी0बी0 एण्ड हरिंगटन टी0एम0, (1983), फैक्टर्स सेपिंग दि मारवेलिटी एण्ड मारटेलिटी एक्सेप्ट्रेशन आफ यूथ, ए सोशियोलाइजेशन माडल, मेमियो, पेज नं0 39 ।

INFANT MORATALITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.) IN BASIS OF FAMILY TYPE
MORT. RATE
400
300
200
100
0
288.01
229.88
JOINT
NUCLEAR
TYPE OF FAMILY
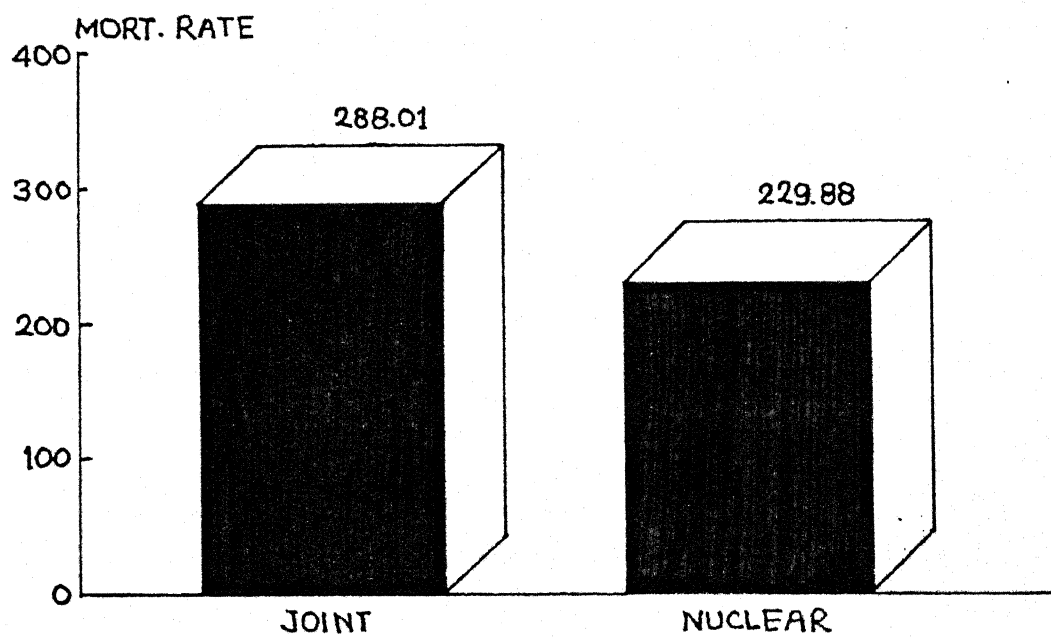
TABLE 5.2

परिकल्पना- माता पिता के परिवार का स्वरूप शिशु मृत्यु के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं- की पुष्टि नहीं होती है । ऐसा सम्भवतः इसलिए है क्योंकि संयुक्त परिवारों में बच्चों की देखभाल बड़े-बूढ़े करते हैं जो कि परम्पराओं के पोषक तथा रूढ़िवादी हैं जबकि एकाकी परिवारों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के कारण बच्चों की देखभाल, चिकित्सा तथा टीकाकरण आदि पर अब ज्यादा ध्यान दिया जाने लगा है.। फिर भी, पिछड़ा क्षेत्र होने के कारण आधुनिक सुविधायें अभी पर्याप्त नहीं हैं और इसी से एकाकी परिवारों में मृत्यु-दर संयुक्त परिवारों की अपेक्षा कुछ ही कम है ।

अतः हमारे निष्कर्ष मैथ्यूशू, बेकर, नाम और हरिंगटन के निष्कर्षों से मेल खाते हैं । पर वे सभी परिवार के स्वरूप को मृत्यु-दर से घनिष्ट रूप से सम्बंधित मानते हैं वहीं हमारे निष्कर्ष इस प्रभाव को आंशिक रूप में ही स्वीकार करते हैं ।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य दो सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु-दर को तुलनात्मक रूप में प्रस्तुत करना है । चूँकि हिन्दू परिवारों में संयुक्त परिवार अधिक पाये जाते हैं और मुस्लिम में एकाकी अधिक अतः परिवार के स्वरूप का दोनों सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव जानने के लिये तथ्य एकत्रित किये गये जिन्हें सारणी 5.3 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.3

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदायों में परिवार के स्वरूप के आधार पर विभिन्नतायें एवं शिशु-मृत्यु अनुपात

परिवार का स्वरूप	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
संयुक्त	224	54	241.07	1:.24	335	107	319.40	1:.32
एकाकी	186	37	198.92	1:.20	162	43	265.43	1:.27
योग:-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं । **.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं ।**

सारणी से पता चलता है कि तीनों वर्षों- 1988, 1989 एवं 1990- में हिन्दू समुदाय के संयुक्त परिवरों में 224 शिशुओं को जन्म मिलता है जिसमें से 54 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गयी और शिशु मृत्यु-दर 241 प्रति हजार एवं शिशु जन्म-मृत्यु अनुपात 1:.24 प्राप्त हुआ । दूसरी ओर, एकाकी परिवारों में इन्हीं तीनों वर्षों में कुल 186 शिशु पैदा हुये जिसमें से 37

शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मर गये और शिशु मृत्यु-दर 198.92 प्रति हजार प्राप्त हुई व जन्म-मृत्यु अनुपात 1:.20 रहा । इस प्रकार दोनों प्रकार के परिवारों की शिशु मृत्यु-दर में अन्तर बहुत कम है जो कि .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है ।

इसी प्रकार, जब वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 के मुस्लिम सम्प्रदाय के संयुक्त परिवारों के आंकड़ों को देखा जाता है तो ज्ञात होता है कि तीनों वर्षों में कुल 335 शिशुओं को जन्म मिलता है जिसमें से 107 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो जाती है । इस प्रकार, शिशु मृत्यु-दर 319.40 प्रति हजार एवं शिशु जन्म-मृत्यु अनुपात 1:.32 प्राप्त होता है । दूसरी ओर, एकाकी परिवारों में 162 शिशुओं का जीवित जन्म होता है जिसमें से 43 शिशु मर जाते हैं इस आधार पर मुसलमान सम्प्रदाय के एकाकी परिवारों में शिशु मृत्यु-दर 265.43 प्रति हजार एवं शिशु जन्म मृत्यु अनुपात 1:.27 प्राप्त होता है ।

हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों ही सम्प्रदायों में दोनों प्रकार के परिवारों के बीच शिशु मृत्यु-दर में भिन्नता नाम मात्र की है जो कि .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं पायी गयी ।

जाति के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

प्रत्येक समाज चाहे वह आदिम हो या आधुनिक, शिक्षित हो या अशिक्षित किसी न किसी प्रकार का संस्तरण पाया जाता है । इस सामाजिक संस्तरण के भिन्न-भिन्न आधार होते हैं । इन आधारों में शिक्षा, पद, आर्थिक स्थिति, धर्म तथा जाति हैं । जिसमें से जाति, भारतीय सामाजिक संस्थाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । प्राचीनकाल से ही भारत में जाति प्रथा का अस्तित्व है जो कि सामाजिक संस्तरण का प्रमुख आधार रहा है । समाज में सभी जातियों की सामाजिक स्थिति समान नहीं होती वरन् ऊँच-नीच का एक संस्तरण पाया जाता है । यह जन्म पर आधारित होती है इसलिए इसमें सामान्यतः परिवर्तन सम्भव नहीं होता । पश्चिम में स्तरीकरण का आधार वर्ग रहा है किन्तु भारत में जाति एवं वर्ग दोनों ही । जाति एक ऐसा समूह है जिसकी सदस्यता जन्म पर आधारित होती है और जो अपने सदस्यों पर खान-पान, विवाह, व्यवसाय और सामाजिक सहवास सम्बन्धी प्रतिबन्ध लागू करती है । इस प्रकार जाति हिन्दू सामाजिक संरचना का मुख्य आधार है क्योंकि यह सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन को प्रभावित करती है[9] ।

जाति एक राजनीतिक इकाई भी है क्योंकि प्रत्येक जाति व्यवहारिक आदर्श के नियम प्रतिपादित करती है और अपने सदस्यों पर उन्हें लागू भी करती है । जाति पंचायत, उसके कार्य और

---

(9) डा0 आर0एन0सक्सेना, भारतीय समाज तथा सामाजिक संस्थायें, पेज 45 ।

संगठन राजनीतिक पक्ष के प्रतीक हैं । जाति के द्वारा विधायिक एवं न्यायिक कार्य भी सम्पन्न होते रहे हैं जिसके कारण इसे राजनीतिक इकाई का रूप मिलता है[10]।

आधुनिक भारतीय सामाजिक जीवन में जाति प्रथा की कितनी ही आलोचना क्यों न की जाये, किन्तु इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि भारत में जाति प्रथा का उद्भव एवं विकास कुछ निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किया गया रहा होगा । आज जाति भले ही निरर्थक प्रतीत हो, किन्तु प्राचीनकाल में यह अनेक सामाजिक कार्यों का सम्पादन करती थी तथा इससे अनेक लाभ होते थे । अतः स्पष्ट है कि जाति ने भारतीय समाज के विकास और संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान किया है । जाति प्रथा ने विभिन्न सामुदायिक संगठनों को एकता के सूत्र में बाँधा तथा सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकता को स्थायी बनाया । इसके साथ ही साथ, जातीय प्रतिस्पर्धा और संघर्ष को भी समाप्त किया है । भारत में जाति की व्यापकता एवं महत्व को स्पष्ट करते हुये मजूमदार ने लिखा है -"भारत में जाति व्यवस्था अनुपम है भारत विभिन्न सम्प्रदायों की परम्परात्मक स्थली है यहाँ की हवा में जाति घुली हुई है मुसलमान एवं ईसाई भी इससे अछूते नहीं है[11]।

महिलाओं के संदर्भ में जाति की महत्ता और भी बढ़ जाती है । के0एल0शर्मा एवं आर0के0मुकर्जी के अध्ययनों ने संकेत दिया है कि जाति का शिशु मृत्यु से घनिष्ट सम्बन्ध है[12,13]। श्रीवास्तव और सक्सेना अपने अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर इस बात को स्वीकार किया है कि उत्तर भारत के लखनऊ क्षेत्र की तरफ जाति के आधार पर विभिन्नतायें बहुत ज्यादा पायी जाती हैं । उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि निम्न स्तर की जातियों में यह विभिन्नता उच्च स्तर की जातियों से 2/3 गुना ज्यादा होती है[14]। के महादेवन का भी यही मत है कि शिशु मृत्यु-दर मुस्लिम सम्प्रदाय में हिन्दू सम्प्रदाय की अपेक्षा जातीय स्तर के संदर्भ में अधिक होती है[15]।

---

(10) डा0 सक्सेना, पेज 53 ।

(11) मजूमदार एवं मदान, रेसेज एण्ड कल्चर इन इण्डिया ।

(12) के0एल0शर्मा, दि चेंजिंग रूरल स्ट्रेटीफिकेशन सिस्टम, नई दिल्ली, अरिमेन्ट लागमैन लिमिटेड, 1974 ।

(13) आर0के0मुकर्जी, दि डायनामिक्स आफ रूरल सोसाइटी, बरलिन एकेडमिक विरलाज,1957

(14) श्रीवास्तव, के0 एण्ड सक्सेना, डी0एन0, (1981), इन्फेन्ट मार्टेलिटी डिफ्रेन्सियल्स इन ऐन इण्डिया कान्टेक्स, फालोअप आर्म्स हास्पिटल डिलेवरी, जनरल आफ बायो सोसल साइंस 13, पेज 467-68 ।

(15) महादेवन, के0 (1981), कल्चर, न्यूट्रीशन एण्ड इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टेलिटी, ए स्टडी इन साउथ सेन्ट्रल इण्डिया, पेज 33 ।

जाति स्तर के आधार पर शिशु मृत्यु के संदर्भ में जो आँकड़े प्राप्त हुये हैं उनका विवरण सारणी 5.4 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.4

जातीय स्तर के आधार पर शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म-मृत्यु अनुपात

जातीयस्तर	जीवित जन्म	शिशु-मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
उच्च	195	40	205.12	1:.21
मध्य	255	64	284.44	1:.28
निम्न	457	137	299.78	1:.30
योग:-	907	241	265.71	1:.27

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं ।

उपरोक्त सारणी के आधार पर जातीय स्तर के संदर्भ में शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नताओं का अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि तीनों वर्षों 1988, 1989 एवं 1990 में उच्च जाति स्तर के उत्तरदाताओं द्वारा कुल 195 शिशुओं को जन्म दिया गया जिसमें 40 शिशुओं की मृत्यु हो गई और शिशु मृत्यु-दर 204.12 प्रति हजार रहा । इसी प्रकार मध्य जाति स्तर की उत्तरदाताओं ने कुल 255 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 64 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गई और शिशु मृत्यु-दर 284.44 प्रति हजार पायी गयी । इसके अतिरिक्त यदि निम्न जाति स्तर का अवलोकन करें तो पाते हैं कि इससे सम्बंधित महिलाओं ने इन्हीं तीनों वर्षों में कुल 457 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें 137 शिशुओं की मृत्यु हो जाती है और शिशु मृत्यु-दर 299.78 प्रति हजार प्राप्त होती है ।

यदि इन्हीं को आनुपातिक आधार पर अवलोकन करें तो पाते हैं कि उच्च जाति स्तर में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.21, मध्य स्तर में 1:.28 तथा निम्न जाति स्तर में यह 1:.30 पाया गया । इस प्रकार कुल जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.27 रहा अर्थात एक शिशु के जन्म होने पर 0.27 शिशुओं की मृत्यु हो जाती है ।

इस प्रकार तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि जातीय स्तर के आधार पर विभिन्नतायें दृष्टिगत होती है । उच्च जाति स्तर में शिशु मृत्यु-दर काफी कम तथा मध्य जाति स्तर में मृत्यु-दर

INFANT MORATALITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.) IN BASIS OF CAST STATUS
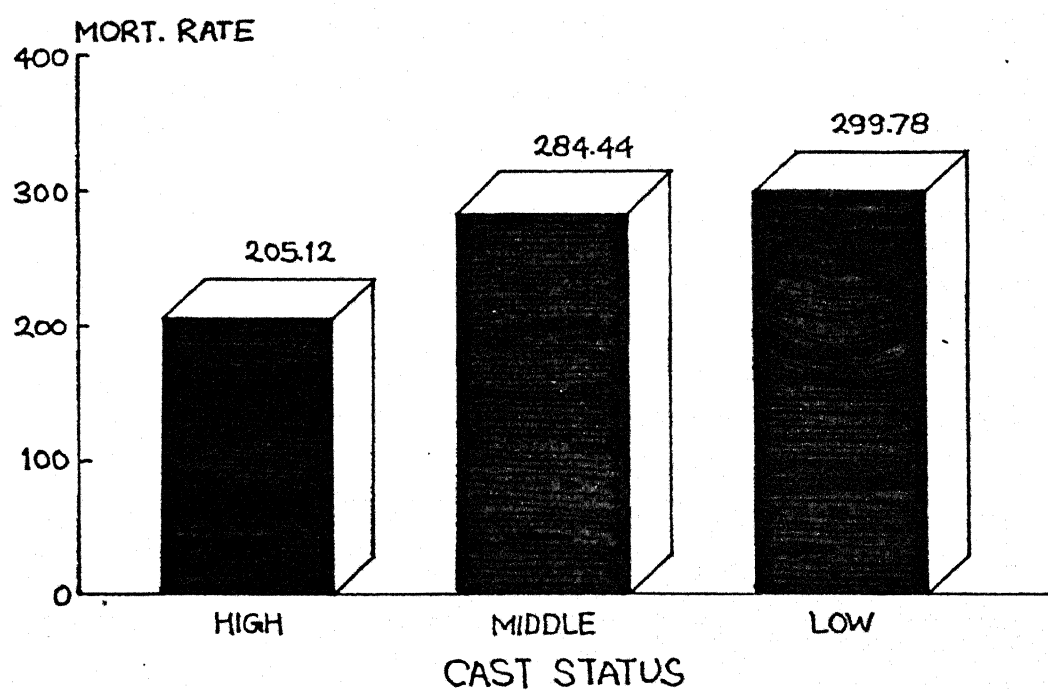
TABLE 5.4

उच्च जाति स्तर से कुछ ज्यादा है जबकि निम्न जाति स्तर में शिशु मृत्यु-दर उच्च जाति की मृत्यु-दर की अपेक्षा बहुत अधिक है, इसका कारण सम्भवतः यह है कि जैसे-जैसे जाति स्तर में गिरावट आती है वैसे-वैसे सामाजिक-आर्थिक स्तर भी गिरता है जिसके फलस्वरूप निर्धनता, कुपोषण एवं निरक्षरता आदि घर कर लेती हैं तथा अन्य आवश्यक सुविधाओं का अभाव हो जाता है । कुरीतियाँ जन-जन तक प्रचलित हो जाती हैं यही वजह है कि जातीय स्तर का शिशु मृत्यु-दर पर विशेष प्रभाव परिलक्षित होता है किन्तु यहाँ पर यह प्रभाव ज्यादा दिखाई नहीं देता । जिससे हमारी परिकल्पना -माता पिता की जाति शिशु मृत्यु के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है- की पुष्टि नहीं होती है ।

इस प्रकार जहाँ शर्मा, मुकर्जी, सक्सेना, श्रीवास्तव एवं महादेवन जाति स्तर का शिशु मृत्यु से घनिष्ट सम्बन्धों को स्पष्ट करते हैं वहीं हमारे निष्कर्ष आंशिक रूप से साम्य रखते हैं ।

उक्त प्रभाव को अलग-अलग सम्प्रदायों में देखने के लिये दोनो सम्प्रदायों से जाति स्तर के आधार पर शिशु मृत्यु-दर से सम्बंधित तथ्य एकत्र किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.5 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.5

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदायों में जातीय स्तर के आधार पर शिशु मृत्यु-दर तथा जन्म-मृत्यु अनुपात का विवरण

जातीय	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
उच्च	92	17	184.78	1:.18	103	23	223.30	1:.22
मध्य	117	24	205.12	1:.21	138	40	289.85	1:.29
निम्न	201	50	248.75	1:.23	256	87	339.84	1:.34
योग:-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं । **.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं ।**

सारणी से स्पष्ट होता है कि तीनों वर्षों -1988, 1989 एवं 1990- में हिन्दू सम्प्रदाय की उच्च स्तर की जाति की उत्तरदाताओं द्वारा 92 शिशुओं को जन्म दिया गया जिसमें से 17 शिशुओं की मृत्यु हो गई और शिशु मृत्यु-दर 184.78 प्रति हजार रही । तथा मध्य जाति स्तर में उन्हीं तीनों

वर्षों में 117 शिशुओं का जन्म होता है जिसमें से 24 शिशुओं की मृत्यु होती है इनका शिशु मृत्यु-दर 205.12 प्रति हजार पाई गई । इसी प्रकार, निम्न जाति स्तर में कुल 201 शिशुओं का जन्म हुआ जिसमें से 50 शिशुओं की मृत्यु हो गई इनमें शिशु मृत्यु-दर 248.95 प्राप्त होती है । इस प्रकार कुल 410 शिशुओं को जन्म दिया गया जिसमें से 91 शिशुओं की मृत्यु हो गई और शिशु मृत्यु-दर 221.95 प्रति हजार प्राप्त हुई । यदि हिन्दू सम्प्रदाय की जन्म एवं मृत्यु को जाति स्तर के आधार पर आनुपातिक आधार पर अवलोकन करें तो पता चलता है कि उच्च जाति स्तर में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.18, मध्य जाति स्तर में 1:.21 तथा निम्न स्तर में 1:.23 का अनुपात पाया गया ।

इसी प्रकार, यदि मुस्लिम सम्प्रदाय का इन्हीं तीनों वर्षों में जाति स्तर के आधार पर अध्ययन करते हैं तो पता चलता है कि उच्च जाति की महिलाओं द्वारा कुल 103 शिशुओं को जन्म मिलता है जिसमें से 23 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो जाती हैं इनमें शिशु मृत्यु-दर 223.30 प्रति हजार रही तथा मध्य जाति स्तर की उत्तरदाताओं ने 138 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 40 शिशुओं की मृत्यु हो गयी और शिशु मृत्यु-दर 289.85 प्रति हजार प्राप्त होती है इसी प्रकार निम्न जाति स्तर में कुल 256 शिशुओं का जन्म हुआ जिसमें से 87 शिशुओं की मृत्यु हुई इस प्रकार इनका शिशु मृत्यु पर 339.84 प्रति हजार पायी गई ।

मुस्लिम सम्प्रदाय की जन्म-मृत्यु का आनुपातिक आधार पर अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि उच्च जाति स्तर में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.22 तथा मध्य स्तर में 1:.29 एवं निम्न स्तर पर 1:.34 का अनुपात प्राप्त होता है ।

इस प्रकार दोनों समुदायों के आँकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि मुस्लिम सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर हिन्दू सम्प्रदाय की अपेक्षा जाति स्तर के परिप्रेक्ष्य में शिशु मृत्यु-दर के सार्थकतांक मान में बहुत कम अन्तर है साथ ही, दोनों के सार्थकतांक मान .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है, अर्थात जाति का प्रभाव शिशु मृत्यु पर नाम मात्र का ही है । जिसका शिशु मृत्यु के सम्बन्ध में कोई खास महत्व नहीं होता है ।

माँ की शिक्षा के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

व्यक्ति तथा समाज दोनों के ही दृष्टिकोण से शिक्षा का अपना विशिष्ट महत्व है । शिक्षा व्यक्ति को पशुत्व से मनुष्यत्व की ओर ले जाती है और इसी से समाज के लिये उसकी श्रेष्ठता का निर्धारण अपने आप हो जाता है । शिक्षा समाजीकरण की प्रक्रिया के साथ-साथ सांस्कृतिक मूल्यों के पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरण में भी सहायक होती है । सामाजिक जीवन की श्रेष्ठता का आधार भी शिक्षा ही है, चाहे वह प्राचीनकाल की परम्परागत शिक्षा हो, अथवा आधुनिक काल की व्यावसायिक

शिक्षा । शिक्षा ने आज औद्योगिक विकास, आर्थिक संरचना, राजनीतिक जीवन, सामाजिक पुनर्निर्माण और व्यक्तित्व के विकास को एक दूसरे से सम्बद्ध कर दिया है ।

शिक्षा का रूप प्रत्येक युग और स्थान में समान नहीं रहा है । कभी शिक्षा को नैतिक विचारों के विकास के लिये आवश्यक माना गया तो कभी इसे सांस्कृतिक विरासत से मिलाकर धार्मिक पृष्ठभूमि में स्पष्ट किया जाता रहा । आज शिक्षा को धर्म के दायरे से बाहर लाकर तर्क प्रधान बनाया जा रहा है । परन्तु हर स्थिति में इसका उद्देश्य ज्ञान का संग्रह ही है । शिक्षा के स्वरूप तथा अर्थ में भिन्नता के बावजूद इसके महत्व को नकारा नहीं जा सकता । आधुनिक युग में शिक्षा के स्तर का जनांकिकीय संघटकों से निकट का सम्बन्ध देखने को मिलता है । जन्म-दर तथा मृत्यु-दर शैक्षिक स्तर से सीधे जुड़े हुये प्रतीत होते हैं ।

निरक्षरता शिशु मृत्यु के लिये अभिशाप होती है, जिस स्थान एवं समाज में जितनी निरक्षरता होती है वहाँ शिशु मृत्यु-दर के साथ ही सामान्य मृत्यु-दर भी ज्यादा होती है । निरक्षरता के कारण महिलाओं कोस्वास्थ्य के रख-रखाव एवं पौष्टिक आहार की जानकारी नहीं हो पाती तथा माँ के स्वास्थ्य के लिये क्या उचित है क्या अनुचित इसका ज्ञान भी उन्हें नहीं होता है । प्रसवोपरान्त किस प्रकार का भोजन किया जाना चाहिए आदि बातों से वे अनभिज्ञ रहती हैं, अतः शिशु मृत्यु-दर का ऊँचा होना स्वाभाविक है । माँ की शिक्षा एवं शिशु-मृत्यु के सम्बन्ध में गण्डोत्रा,[16] रजिस्ट्रार जनरल,[17] रूजिका तथा कानिटकर[18] इस बात को मानते हैं कि माता की शिक्षा शिशु मृत्यु-दर को गम्भीर रूप से प्रभावित करती है । कैडवेल और मैक्डोनल[19] ने यह निष्कर्ष दिया है कि यदि माता शिक्षित होती है तो वह सभी परम्परागत बंधनों को, जो शिशु मृत्यु-दर को बढ़ावा देते हैं, तोड़ देती है । इनके

---

(16) गण्डोत्रा, एम0एस0दास, एण्ड भट्ट, आर0बी0, (1980), फैक्टर्स इन्फ्ल्यूवेशिंग नियोनेटल मार्टीलिटी इन ऐन इण्डिया, कम्युनिटी डेमोग्राफी इण्डियाः 9 (182) पेज 231-244 ।

(17) इण्डिया : रजिस्ट्रार जनरल (1983), ए सर्वे आन इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टीलिटी, 1979 न्यू देलही, मिनिस्ट्री आफ होम एफेयर ।

(18) रूजिका, एल0टी0 एण्ड कानिटकर, टी0, (1972), इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन एन अरबन सेटिंग, दि केश स्टडी आफ ग्रेटर बाम्बे, पेज 557-65 ।

(19) कैडवेल जान, सी0 एण्ड मैक्डोनल, पी0, (1981), इन्फ्ल्यूवेंश आफ मैटरनल एजूकेशन आन इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टीलिटी, लेविल एण्ड काजेज, इन इण्टरनेशनल पापुलेशन कान्फ्रेन्स प्रोसीडिंग एण्ड सेलेक्टेड पेपर मनीला, 1981, लीज, आई0यू0एस0एस0पी0 2, पेज 79-85 ।

अतिरिक्त एम0ई0खान[20] ने भी उत्तर प्रदेश के जिलों के सर्वेक्षण के आधार पर अपना मत स्पष्ट किया है कि माता की शिक्षा शिशु मृत्यु-दर को प्रभावित करती है । हेन्स और कास्टरिका[21] भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि उच्च शिक्षा प्राप्त की हुई महिलाओं में शिशु मृत्यु-दर बहुत कम होती है और निरक्षर महिलाओं में शिशु मृत्यु-दर बहुत अधिक होती है ।

वर्तमान अध्ययन से माँ की शिक्षा को आधार मानकर शिशु मृत्यु के जो आंकड़े प्राप्त हुये हैं उन्हें सारणी 5.6 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.6

माँ के शैक्षिक स्तर के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

उत्तरदाता का	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
निरक्षर	466	159	341.20	1:.34
हाईस्कूल से कम	273	65	238.09	1:.24
हाईस्कूल व उससे अधिक	168	17	101.19	1:.20
योग:-	907	241	265.71	1:.27

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण।

सारणी में दर्शाये हुये आँकड़ों के आधार पर उत्तरदाताओं के शैक्षिक स्तर के संदर्भ में शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें अवलोकन करने पर पता चलता है कि वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में ऐसी महिलायें जो निरक्षर थीं, ने कुल 466 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 159 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व हो गई इनका शिशु मृत्यु दर 341.20 प्रति हजार रहा । इसी प्रकार,

(20) खान, एम0ई0, (1980), इन्फेन्ट मार्टेलिटी इन उत्तर प्रदेश, ए माइक्रोलेविल स्टडी, इन इन्फेन्ट मार्टेलिटी इन इण्डिया, जैन एण्ड विसारिया लन्दन, पेज 235 ।

(21) हेन्स, मिकाइल, आर0 एण्ड एम0टी0 रोजर, सी0 ,(1982) डिफरेन्सियल इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टेलिटी एण्ड कास्टारिका 1968-1973, पापुलेशन स्टडी, 36 (1) पेज 31-43 ।

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.)IN BASIS OF MOTHERS EDU. STATUS
MORT. RATE
500
400
300
200
100
0
341.20
238.09
101.19
ILLITRATE
BELOW HIGHSCHOOL
HIGHSCHOOL & ABOVE
EDUCATIONAL STATUS OF RESPONDENT
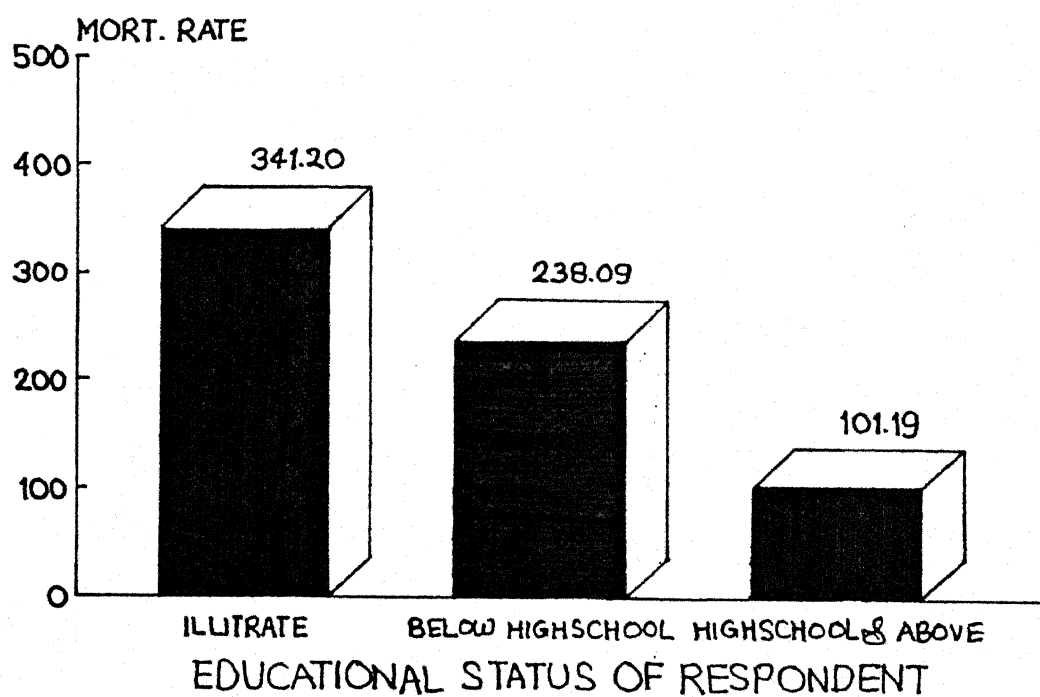
TABLE 5.6

हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त महिलाओं ने इन्हीं वर्षों में 273 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 65 शिशुओं की मृत्यु हो गयी इस प्रकार इनका शिशु मृत्यु-दर 238.09 प्रति हजार प्राप्त होता है । इसके अतिरिक्त, वे महिलायें जो हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त थीं उन्होंने कुल 168 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 17 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत हो गये और इनमें शिशु मृत्यु-दर 101.19 प्रति हजार पाया गया ।

यदि इन्हीं का आनुपातिक विश्लेषण करें तो स्पष्ट होता है कि निरक्षर महिलाओं में शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.34 तथा हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त महिलाओं में यह 1:.24 व हाईस्कूल से उच्च शिक्षा प्राप्त में 1:.10 का अनुपात पाया गया ।

सारणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि शिशु मृत्यु-दर निरक्षर महिलाओं में सर्वाधिक होती है, जैसे-जैसे शिक्षा का स्तर ऊँचा होता जाता है शिशु मृत्यु-दर घटती जाती है और उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं में यह सबसे कम होती है । जिससे हमारी परिकल्पना -माँ का साक्षरता स्तर शिशु मृत्यु के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है- की पुष्टि होती है ।

इस प्रकार शिक्षा का शिशु मृत्यु पर बहुत अधिक प्रभाव दिखाई पड़ता है । ऐसा सम्भवतः इसलिए है कि शिक्षित महिलायें पौष्टिक आहार, टीकाकरण, नीम-हकीमों से बचाव, डाक्टरी इलाज, सफाई आदि के प्रति सतर्क रहती हैं । साथ ही, स्वास्थ्य के रख-रखाव, अच्छे स्वास्थ्य के लिये क्या उचित है क्या अनुचित एवं प्रसव के उपरान्त किस प्रकार का भोजन आदि किया जाना चाहिए, के प्रति अधिक जागरूक हो जाती हैं । साथ ही, वे ऐसे सभी परम्परागत बन्धनों जैसे - घर में प्रसव कराना, प्रसूता को अंधकार में रखना, पुराने परम्परागत औजारों का नाल काटने में प्रयोग, नवजात शिशु को पुराने कपड़े पहनाना आदि को तोड़ देती है, जो शिशु मृत्यु को बढ़ावा देते हैं । जिससे शिशु कुपोषण का शिकार होने से बच जाते हैं । यही कारण है कि जहाँ निरक्षरता कम होती है अर्थात् महिलाओं का शिक्षा का स्तर जैसे-जैसे बढ़ता जाता है शिशु मृत्यु-दर में गिरावट आती जाती है । परिणाम स्वरूप शैक्षिक स्तर के आधार पर शिशु मृत्यु का प्रभाव बहुत अधिक परिलक्षित होता है । यदि आनुपातिक दृष्टि से अवलोकन करते हैं तो निरक्षर महिलाओं में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.34, हाईस्कूल से कम शिक्षित महिलाओं में 1:.24 एवं हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं में यह 1:.10 रहा । इस प्रकार हमारे निष्कर्ष गण्डोत्रा, रूजिका, कानिटकर, मैक्डोनल, एम0ई0खान एवं हेन्स कास्टारिका से साम्य रखते हैं ।

विभिन्न सम्प्रदायों में उत्तरदाताओं के शैक्षिक आधार पर शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नताओं को तुलनात्मक रूप में स्पष्ट करने के लिये अलग-अलग ऑकड़े एकत्र किये गये हैं, जिनका विवरण सारणी 5.7 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.7

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदायों में माँ की शिक्षा के आधार पर शिशु मृत्यु-दर एवं जन्म-मृत्यु अनुपात

उत्तरदाता का शैक्षिक स्तर	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
निरक्षर	218	62	248.40	1:.28	248	97	391.12	1:.39
हाईस्कूल से कम	114	25	219.29	1:.22	159	40	251.57	1:.25
हाईस्कूल व उससे अधिक	78	04	51.28	1:.05	90	13	144.44	1:.14
योगः-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण **.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण**

सारणी के अवलोकन से पता चलता है कि हिन्दू सम्प्रदाय की निरक्षर उत्तरदाताओं द्वारा वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 218 शिशुओं को जन्म दिया गया जिसमें से 62 शिशु अपनी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही मृत हो गये इस प्रकार निरक्षर महिलाओं में शिशु मृत्यु-दर 248.42 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त महिलाओं द्वारा इन्हीं तीनों वर्षों में कुल 114 शिशुओं को जन्म दिया गया जिसमें 25 शिशुओं की जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत्यु हो गयी । इस प्रकार इनकी शिशु मृत्यु-दर 219.29 प्रति हजार प्राप्त होती है । इसी क्रम में, हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं द्वारा उन्हीं तीनों वर्षों में कुल 78 शिशुओं को जन्म दिया जाता है जिसमें से 4 शिशु मृत हो जाते हैं इनकी शिशु मृत्यु दर 51.28 प्रति हजार पायी गयी ।

यदि इन्हीं का आनुपातिक आधार पर अवलोकन करें तो पता चलता है कि हिन्दू समुदाय की निरक्षर महिलाओं में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.28, हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त में 1:.22 व हाईस्कूल और उससे उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं में यह अनुपात 1:.05 पाया गया ।

सारणी के अनुसार स्पष्ट है कि मुस्लिम समुदाय की निरक्षर महिलाओं द्वारा उक्त तीनों वर्षों में कुल 248 शिशुओं को जन्म दिया गया जिसमें से 97 शिशुओं की मृत्यु हो गयी इनका शिशु मृत्यु-दर 391.12 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त महिलाओं द्वारा उन्हीं वर्षों में 159 शिशु को जन्म मिला जिसमें से 40 शिशुओं की मृत्यु उनके प्रथम जन्मदिन मनाने के पूर्व हो गयी जिससे शिशु मृत्यु-दर 251.57 प्रति हजार प्राप्त हुई । इसी प्रकार, हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं का निरीक्षण करने से पता चलता है कि उन्होंने कुल 90 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 13 शिशुओं की मृत्यु हो गयी इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 144.44 प्रति हजार पायी गयी ।

मुस्लिम समुदाय का आनुपातिक अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि निरक्षर महिलाओं में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.39, हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त में 1:.25 व हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं में 1:.14 का अनुपात पाया गया ।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि हिन्दू एवं मुस्लिम दोनो सम्प्रदायों में माँ की शिक्षा का अत्यधिक प्रभाव परिलक्षित होता है अर्थात निरक्षरता शिशु मृत्यु को बहुत अधिक प्रभावित करती है । निरक्षरता ज्यों-ज्यों घटती जाती है शिशु मृत्यु में भी गिरावट आती है । इस प्रकार दोनों सम्प्रदायों के शिशु मृत्यु के सार्थकतांक मान को देखते हुये यह कह सकते हैं कि यह बहुत अधिक है और .01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण है ।

पिता के शैक्षिक स्तर के आधार पर शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें :

यह विश्वास करने योग्य है कि यदि समाज में महिलायें निरक्षर हों तो शिशु मृत्यु का दबाव बना रहता है । लेकिन जिस समाज में पुरूष वर्ग भी निरक्षर हो उस समाज में शिशु मृत्यु अपना घर बना लेती है । क्योंकि पति की शिक्षा का परिवार पर व्यापक प्रभाव पड़ता है साथ ही, अशिक्षित पत्नी को भी सही दिशा देने में समर्थ होता है । शिशु मृत्यु के सम्बन्ध में माता-पिता की शिक्षा का विशेष उल्लेख करते हुये एम0एम0गण्डोत्रा, एन0दास और आर0बी0भट्ट[22] ने लिखा है कि यदि परिवार में माता-पिता शिक्षित हैं तो शिशु मृत्यु-दर को काफी हद तक रोका जा सकता

---

(22) गण्डोत्रा, एम0एम0, दास एण्ड आर0बी0 भट्ट, (1980), फैक्ट्स इन्फ्लूयेंशिंग नियोनेटल मार्टीलिटी इन इण्डिया, <u>कम्युनिटी डेमोग्राफी इण्डिया,</u> 9 (182), पेज 231-244 ।

है । यही मत रूजिका और कानिटकर[23] एवं जानकैडवेल और मैक्डोनल का भी है[24] ।

वर्तमान अध्ययन में पिता की शिक्षा का शिशु मृत्यु-दर में प्रभाव देखने के लिये उत्तरदाताओं के पति की शिक्षा के आधार पर शिशु जन्म एवं मृत्यु के आँकड़े एकत्र किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.8 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.8

पिता की शिक्षा के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें एवं शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

पिता का शैक्षिक स्तर	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
निरक्षर	479	155	323.59	1:.32
हाईस्कूल से कम	246	59	239.83	1:.24
हाईस्कूल व उससे अधिक	182	27	148.35	1:.15
योगः-	907	241	265.71	1:.27

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण।

सारणी के अवलोकन से पता चलता है कि वे उत्तरदाता जिनके पति निरक्षर हैं उन्होंने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 479 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 155 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व ही हो गयी । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 323.59 प्रति हजार रही तथा वे उत्तरदाता जिनके पतियों का शैक्षिक स्तर हाईस्कूल से कम था उन्होंने इन्हीं वर्षों में 246 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 59 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम सालगिरह मनाने के पूर्व हो गयी और शिशु मृत्यु-दर 239.83 प्रति हजार पायी गयी । इसी प्रकार, वे उत्तरदाता जिनके पति हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त किये हुये थे, ने उन्हीं वर्षों में 182 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 27 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गयी तथा इनमें शिशु मृत्यु-दर 148.35 प्रति हजार पायी गयी ।

यदि इन्हीं का आनुपातिक आधार पर अध्ययन करें तो पाते हैं कि जिनके पति निरक्षर थे उनके शिशुओं में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.32 रहा तथा जिनके पति हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त थे उनमें यह 1:.24 पाया गया । साथ ही, जिनके पति हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त थे उनमें यह अनुपात 1:.15 मिला ।

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.)IN BASIS OF FATHERS EDU. STATUS
MORT. RATE
500
400
300
200
100
0
323.59
239.83
148.35
ILLITRATE
BELOW HIGHSCHOOL
HIGHSCHOOL & ABOVE
EDU. STATUS OF RESPONDENT'S HUSBAND
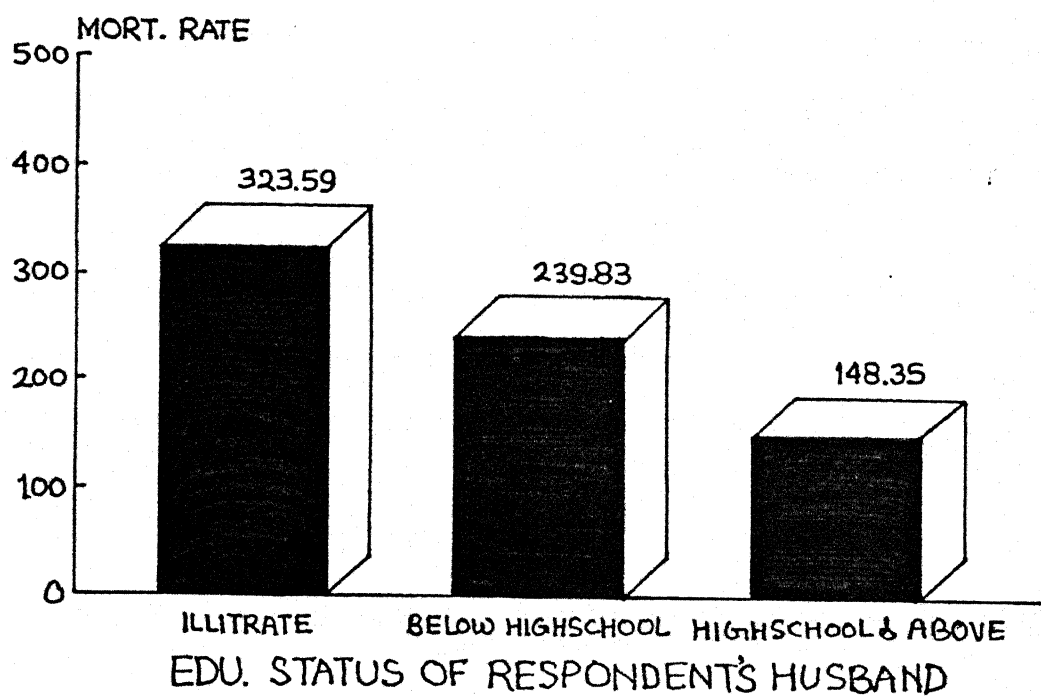
TABLE 5.8

तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि शिक्षा का शिशु मृत्यु-दर पर व्यापक प्रभाव है । निरक्षरों में यह सर्वाधिक है, परन्तु जैसे-जैसे शिक्षा का स्तर बढ़ता जाता है वैसे-वैसे शिशु मृत्यु का दबाव भी कम होता जाता है और उच्च शिक्षा प्राप्त परिवारों में यह सबसे कम पायी जाती है जिससे हमारी परिकल्पना -पिता का साक्षरता स्तर शिशु मृत्यु के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है- की पुष्टि होती है । ऐसा सम्भवतः इसलिए है कि जिनपरिवारों के पुरूष शिक्षित एवं उच्च शिक्षित होते हैं, वे अपने परिवार के स्वास्थ्य के संदर्भ में जागरूक होते हैं वे पौष्टिक आहार, टीकाकरण, डाक्टरी इलाज, स्वच्छता सफाई, प्रसव सम्बन्धी उत्तम सुविधायें, शिशु को कुपोषण आदि से बचाने के संदर्भ में अधिक सतर्क रहते हैं यदि माँ अशिक्षित या कम पढ़ी लिखी भी हो तो भी शिशु मृत्यु का दबाव कम होता है यही कारण है कि जैसे-जैसे शिक्षा का स्तर बढ़ता है शिशु मृत्यु का दबाव कम होता जाता है । इस प्रकार हमारे निषकर्ष गण्डोत्रा, भट्ट, रूजिका, कानिटकर, जानकैडवेल, मैक्डोनल आदि से पूर्णतः साम्य रखते हैं ।

पिता की शिक्षा के आधार पर शिशु मृत्यु-दर का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि पति की शिक्षा शिशु मृत्यु-दर को अत्यधिक प्रभावित करती है इसका दोनों समुदायों में अलग-अलग प्रभाव देखने के लिये तथ्य एकत्रित किये गये जिन्हें सारणी 5.9 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.9

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदायों में पिता की शिक्षा के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें एवं शिशु जन्म-मृत्यु अनुपात

पिता का शैक्षिक स्तर	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
निरक्षर	218	61	279.28	1:.28	261	94	360.15	1:.36
हाईस्कूल से कम	107	20	186.91	1:.19	139	39	280.57	1:.28
हाईस्कूल व उससे अधिक	85	10	117.95	1:.12	97	17	175.71	1:.18
योगः-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण **.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण**

सारणी के अध्ययन से ज्ञात होता है कि हिन्दू समुदाय की वे उत्तरदाता जिनके पति निरक्षर हैं उन्होंने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 218 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 61 शिशुओं की मृत्यु उनके जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गई इनकी शिशु मृत्यु दर 279.81 प्रति हजार रही । एवं वे उत्तरदाता जिनके पति हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त हैं उन्होंने इन्हीं वर्षों में कुल 107 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 20 शिशुओं की मृत्यु हो गई इस प्रकार इनका शिशु मृत्यु दर 186.91 प्रति हजार पायी गई । इसी प्रकार वे महिलायें जिनके पति का शैक्षिक स्तर हाईस्कूल व उससे अधिक था उन्होंने उन्हीं वर्षों में 85 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 10 शिशु अपनी प्रथम सालगिरह के पूर्व मृत हो गये इस प्रकार इनकी शिशु मृत्यु-दर 117.95 प्रति हजार प्राप्त होती है ।

यदि इन्हीं का आनुपातिक आधार पर अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि जिनके पति निरक्षर हैं उनमें शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.28 रहा तथा जिनके पति हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त हैं उनमें यह 1:.19 पाया गया साथ ही, वे उत्तरदाता जिनके पति हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त हैं उनके लिये यह 1:.12 पाया गया ।

मुस्लिम समुदाय का अध्ययन करने पर पता चला कि वे उत्तरदाता जिनके पति निरक्षर हैं उनहोंने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 261 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 94 शिशुओं की मृत्यु हो गई तथा इनमें शिशु मृत्यु-दर 360.15 प्रति हजार पायी गयी । साथ ही, वे उत्तरदाता जिनके पति हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त थे उन्होंने इन्हीं वर्षों में 139 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 39 शिशुओं की मृत्यु हो गई तथा शिशु मृत्यु-दर 280.57 प्रति हजार रही । इसी क्रम में, वे उत्तरदाता जिनके पति हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त थे उन्होंने इन्हीं वर्षों में 97 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 17 शिशुओं की मृत्यु हो गई । इस प्रकार, इनमें शिशु मृत्यु दर 175.71 प्रति हजार प्राप्त हुई ।

यदि इसी समुदाय का आनुपातिक आधार पर अध्ययन करें तो स्पष्ट होता है कि वे उत्तरदाता जिनके पति निरक्षर हैं उनमें शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपातः 1:.36 रहा तथा वे जिनके पति हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त हैं उनमें यह अनुपात 1:.28 प्राप्त होता है । साथ ही, वे उत्तरदाता जिनके पति हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त हैं उनमें यह अनुपात 1:.18 है ।

इस प्रकार तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि दोनों सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु-दर पर शिक्षा के कमी के कारण दबाव बना हुआ है जहाँ हाईस्कूल से अधिक शिक्षा प्राप्त पति के परिवारों का सम्बन्ध है वहाँ शिशु मृत्यु-दर कम हैं किन्तु जिन उत्तरदाताओं के पति निरक्षर हैं या

कम पढ़े लिखे हैं उनमें यह अधिक दिखाई देती है । अतः दोनों सम्प्रदायों के शिशु मृत्यु के सार्थकतांक मान को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि यह बहुत अधिक है जो .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण है ।

पिता के व्यवसाय के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

किसी भी राष्ट्र, समाज अथवा समुदाय के सामाजिक-आर्थिक विकास को उसकी जनसंख्या के व्यावसायिक वितरण के माध्यम से जाना जा सकता है । सामान्यतः जिस समुदाय का अधिकांश भाग कृषि पर आश्रित होता है वह आर्थिक रूप से पिछड़ा माना जाता है । इसके विपरीत, उद्योगों पर आश्रित जनसंख्या आर्थिक विकास को इंगित करती है । जो आर्थिक दृष्टि से जितना विकसित व सम्पन्न होगा वहाँ शिशु मृत्यु-दर उतनी ही कम होगी । आर्थिक विकास के कारण लोगों को पौष्टिक आहार प्राप्त होता है, चिकित्सीय सुविधायें मिलती हैं और इन दोनों का मिला-जुला प्रभाव मृत्यु-दर को कम करने में सहायक होता है । इस प्रकार व्यवसाय मृत्यु-दर को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है ।

यह जानने के लिये कि पिता के व्यवसाय का शिशु मृत्यु-दर पर क्या प्रभाव पड़ता है, सम्बंधित तथ्यों को संग्रहित किया गया, जिन्हें सारणी 5.10 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.10

पिता के व्यवसाय के आधार पर शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु अनुपात

पिता का व्यवसाय	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
कृषि पर आधारित	338	101	298.81	1:.30
कृषि के अतिरिक्त	569	140	246.04	1:.25
योगः-	907	251	265.71	1:.27

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि वे उत्तरदाता, जिनके पति कृषि आधारित व्यवसाय में संलग्न थे, ने तीन क्रमिक वर्षों (1980, 1989, एवं 1990) में कुल 338 शिशुओं को

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.)IN BASIS OF FATHERs OCCUPATION
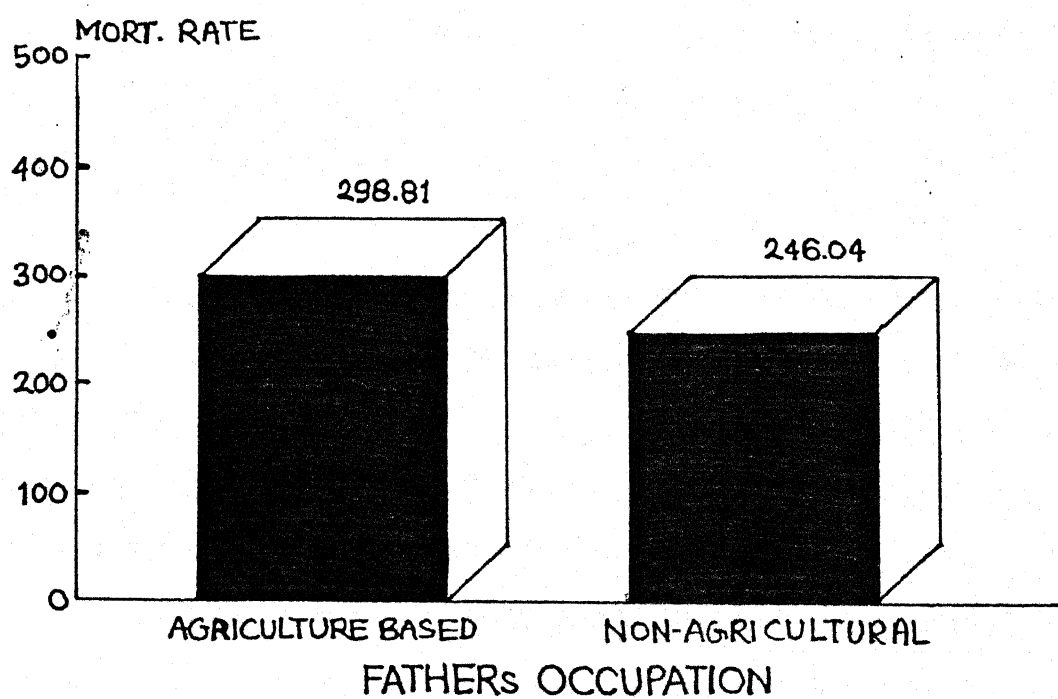
TABLE 5.10

जन्म दिया जिसमें से 101 शिशु अपनी प्रथम साल गिरह के पूर्व ही मृत हो गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 298.81 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, वे उत्तरदाता जिनके पतियों का व्यवसाय कृषि के अतिरिक्त था उन्होंने इन्हीं तीनों वर्षों में कुल 569 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 140 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत हो गये और इनमें शिशु मृत्यु-दर 246.04 प्रति हजार पायी गई ।

यदि इन्हीं को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो वे उत्तरदाता जिनके पतियों का व्यवसाय कृषि पर आधारित था उनके शिशुओं में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.30 रहा अर्थात एक शिशु के जन्म लेने पर .30 शिशु मृत हो जाते हैं । इसी प्रकार वे उत्तरदाता जिनके पति कृषि के अतिरिक्त व्यवसायों में संलग्न हैं उनके जन्म एवं मृत्यु में अनुपात 1:.25 पाया गया ।

प्रस्तुत तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि जिन परिवारों के मुखिया कृषि के अतिरिक्त व्यवसायों, नौकरी आदि में संलग्न हैं वहाँ शिशु मृत्यु-दर कम पायी जाती है किन्तु साथ ही साथ, यह भी स्पष्ट होता है कि कृषि से सम्बंधित एवं कृषि के अतिरिक्त व्यवसायों को अपनाये हुये परिवारों की शिशु मृत्यु-दर में कोई विशेष अन्तर दिखायी नहीं देता है । अतः हम कह सकते हैं कि पिता के व्यवसाय का शिशु मृत्यु-दर पर अल्प प्रभाव ही परिलक्षित होता है । सांख्यकीय विश्लेषण से भी इसी तथ्य की पुष्टि होती है क्योंकि उत्तरदाता के पति के व्यवसाय तथा शिशु मृत्यु-दर के बीच सम्बन्ध .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है ।

यह जानने के लिये कि पिता के व्यवसाय का अलग-अलग सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु-दर पर क्या प्रभाव पड़ता है, दोनों सम्प्रदायों के जो तथ्य उक्त संदर्भ में प्राप्त हुये हैं उन्हें सारणी 5.11 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.11

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदाय में पिता के व्यवसाय के आधार पर शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म-मृत्यु अनुपात

पिता का व्यवसाय	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
कृषि पर आधारित	168	44	261.90	1:.26	170	57	335.29	1:.34
कृषि के अतिरिक्त	242	47	194.21	1:.19	327	93	284.40	1:.28
योगः-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं **.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं**

सारणी से स्पष्ट है कि हिन्दू समुदाय के वे उत्तरदाता, जिनके पति कृषि से सम्बंधित व्यवसाय अपनाये हुये हैं, ने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 168 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 44 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गयी इनमें शिशु मृत्यु-दर 261.90 प्रति हजार रही । साथ ही, वे उत्तरदाता, जिनके पति कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसाय अपनाये हुये थे, ने उन्हीं तीनों वर्षों में कुल 242 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 47 शिशु अपनी प्रथम वर्षगांठ मनाने के पूर्व ही मृत हो गये । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 194.21 प्रति हजार पायी गयी ।

यदि हिन्दू समुदाय का ही आनुपातिक आधार पर अवलोकन करें तो स्पष्ट होताहै कि वे परिवार जो कृषि से सम्बंधित व्यवसाय को अपनाये हुये हैं उनमें शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.26 रहा तथा वे परिवार जो कृषि के अतिरिक्त व्यवसाय अपनाये हुये हैं उनमें यह 1:.19 पाया गया ।

मुस्लिम समुदाय का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि इस समुदाय की वे उत्तरदाता जिनके पति कृषि से सम्बंधित व्यवसाय अपनाये हुये हैं उन्होंने 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 170 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 57 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही हो गयी । इस प्रकार इनकी शिशु मृत्यु-दर 335.29 प्रति हजार पायी गयी तथा वे महिलायें जिनके पति कृषि के अतिरिक्त व्यवसाय को अपनाये हुये थे उन्होंने इन्हीं वर्षों में कुल 327 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से कुल 93 शिशुओं की मृत्यु उनके जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गयी । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 284.40 प्रति हजार थी ।

इसी समुदाय का आनुपातिक आधार पर अध्ययन करने से पता चलता है कि कृषि से सम्बंधित व्यवसाय अपनाये हुये परिवारों में शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.34 एवं जो कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसाय अपनाये हुये थे उनमें यह 1:.28 था ।

इस प्रकार तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि दोनों समुदायों में कृषि के अतिरिक्त व्यवसाय अपनाये हुये परिवारों में मृत्यु-दर कृषि पर आधारित परिवारों से कम है साथ ही, यह भी स्पष्ट होता है कि हिन्दू सम्प्रदाय के कृषि से सम्बंधित एवं कृषि के अतिरिक्त व्यवसाय अपनाये हुये परिवारों में जन्म मृत्यु के सार्थकतांक मान व मुस्लिम समुदाय के कृषि से सम्बंधित एवं कृषि के अतिरिक्त व्यवसाय अपनाये हुये परिवारों की शिशु जन्म-मृत्यु का सार्थकतांक मान बहुत कम है, अतः दोनों ही .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है ।

भू-स्वामित्व के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

कृषि पर आश्रित समाज उन्नति की सीमा को छू नहीं पता । दैवीय विपदाओं का उसे शिकार होना पड़ता है । जहाँ कृषि भूमि असिंचित होती है वहाँ सम्पूर्ण कृषि बरसात पर निर्भर करती है । अतः कृषि की प्रधानता होते हुये भी लोग निर्धनता का जीवन यापन करते हैं । अतः ऐसे निर्धन समाज में जन्म लेने वाले शिशु कुपोषण एवं स्वास्थ्य सेवाओं के अभाव के कारण अल्पायु में ही काल-कवलित हो जाते हैं और इस प्रकार शिशु मृत्यु की दर बढ़ जाती है ।

भू-स्वामित्व का शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव जानने के लिये सम्बंधित तथ्य एकत्रित किये गये हैं जो सारणी 5.12 में प्रस्तुत किये गये हैं ।

सारणी 5.12

भू-स्वामित्व के आधार पर शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें एवं शिशु जन्म-मृत्यु अनुपात

भू-स्वामित्व	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
भूमिहीन	598	167	279.26	1:.28
0-10 एकड़	168	45	267.85	1:.27
10-20 एकड़	141	29	205.67	1:.21
योगः-	907	241	265.71	1:.27

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि ऐसी उत्तरदाताओं, जिनके परिवार में खेती योग्य भूमि नहीं है, ने तीन क्रमिक वर्षों (1988, 1989, एवं 1990) में कुल 598 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 167 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत हो गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 279.26 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, वे महिलायें जिनके परिवार के पास 10 एकड़ तक भूमि है, ने इन्हीं तीनों वर्षों में 168 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 45 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही हो गयी । इनमें शिशु मृत्यु-दर 267.85 प्रति हजार पायी गई । इसी क्रम में, वे उत्तरदाता, जिनके परिवार का भू-स्वामित्व 10 से 20 एकड़ तक का है, ने उन्हीं तीनों वर्षों में कुल 141 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 29 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व ही हो गई । इनमें शिशु मृत्यु-दर 205.67 प्रति हजार रही ।

INFANT MORTALLITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.)IN BASISOF LAND OWNERSHIP
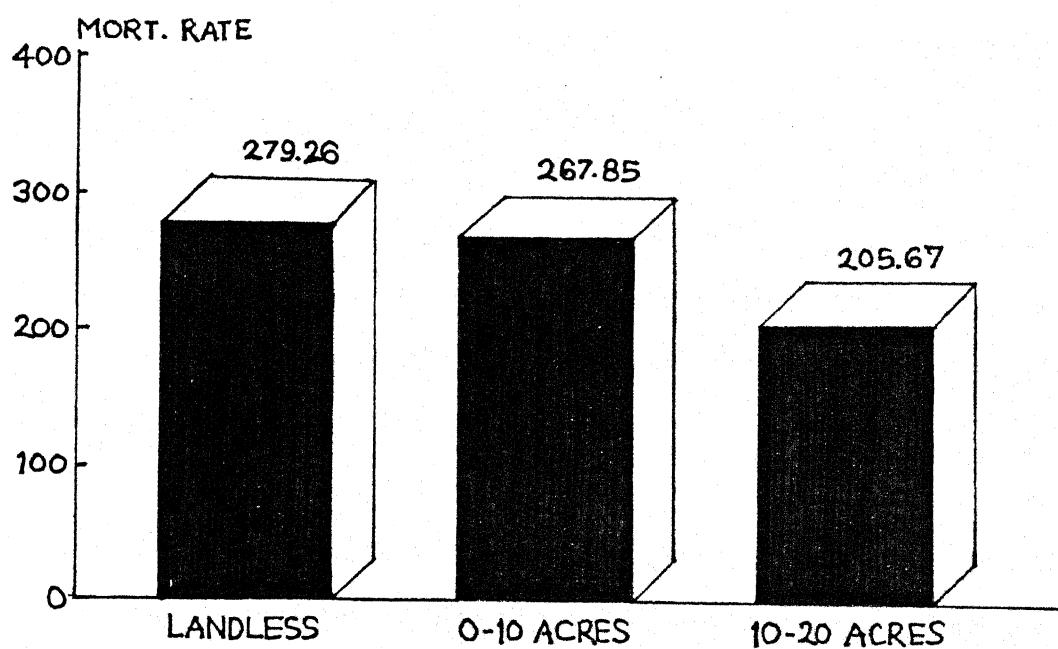
TABLE 5.12

यदि भू-स्वामित्व की दृष्टि से शिशु मृत्यु की विभिन्नताओं को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो पाते हैं, कि भूमिहीन परिवारों के उत्तरदाताओं के शिशुओं में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.28 है अर्थात एक शिशु के पैदा होने पर 0.28 शिशुओं की मृत्यु हो जाती है । वे उत्तरदाता, जिनके परिवार में भूमि 10 एकड़ तक है, उनके जीवित जन्मों में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.27 है । इसी प्रकार उन उत्तरदाताओं, जिनके परिवार का भू-स्वामित्व 20 एकड़ तक है उनके जीवित जन्मों में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.21 प्राप्त होता है ।

इस प्रकार तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सबसे कम मृत्यु-दर सर्वाधिक भू-स्वामित्व वाले परिवारों में पायी जाती है, जबकि 10 एकड़ तक भूमि के स्वामियों एवं भूमिहीनों में शिशु मृत्यु-दरों में कोई विशेष अन्तर नहीं है । फिर भी, यह स्पष्ट है कि सर्वाधिक मृत्यु-दर भूमिहीन परिवारों में है । जिसका कारण सम्भवतः यह हो सकता है कि भूमिहीन व कम भूमि वाले परिवारों का जीवन स्तर अत्यधिक निम्न होता है उनमें रहन-सहन, खान-पान एवं चिकित्सीय सुविधा धनाभाव के कारण उपलब्ध नहीं हो पाती है । साथ ही, उनमें शिक्षा का भी अभाव होता है शिक्षा के अभाव के कारण भी वे अपने व अपने बच्चों के स्वास्थ्य के प्रति सचेत नहीं रहते, यही कारण है कि कम भूमि वाले परिवारों व भूमिहीन परिवारों में शिशु मृत्यु-दर अधिक पायी जाती है। फिर भी, भू-स्वामित्व का शिशु मृत्यु पर प्रभाव इतना कम है कि उसे महत्वपूर्ण नहीं कहा जा सकता ।

भू-स्वामित्व का अलग-अलग सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु पर क्या प्रभाव पड़ता है यह जानने के लिये हिन्दुओं व मुस्लिम समुदाय में शिशु जन्म व मृत्यु सम्बन्धी तथ्य एकत्रित किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.13 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.13

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदाय में भू-स्वामित्व के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें एवं शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

भू-स्वामित्व	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
भूमिहीन	295	71	240.67	1:.24	303	96	316.83	1:.32
0-10एकड़	61	13	213.11	1:.21	107	32	299.06	1:.30
10-20एकड़	54	7	129.62	1:.13	87	22	252.87	1:.25
योगः-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं **.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं**

सारणी के अवलोकन से पता चलता है कि हिन्दू समुदाय की वे महिलायें, जो भूमिहीन परिवारों से सम्बंधित हैं, ने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 295 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 71 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मर गये इनमें शिशु मृत्यु-दर 240.67 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, 10 एकड़ तक भूमि वाले परिवारों से सम्बंधित महिलाओं ने इन्हीं तीनों वर्षों में कुल 61 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 13 शिशु अपनी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व ही मर गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 213.11 प्रति हजार पायी गयी । इसी क्रम में, वे उत्तरदाता, जो 10 से 20 एकड़ भू-स्वामित्व वाले परिवार से सम्बंधित हैं, ने उन्हीं वर्षों में कुल 56 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 7 शिशुओं की मृत्यु हो गयी इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 129.62 प्रति हजार पायी गयी ।

यदि इन्हीं का आनुपातिक दृष्टि से अवलोकन करें तो पाते हैं कि भूमिहीन परिवारों में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.24 है, 0-10 एकड़ भू-स्वामित्व वाले परिवारों में यह 1:.21 एवं 10-20 एकड़ वाले परिवारों में 1:.13 है ।

इसी प्रकार, मुस्लिम समुदाय में भूमिहीन परिवारों से सम्बंधित उत्तरदाताओं ने 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 303 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 96 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व हो गयी इनमें शिशु मृत्यु-दर 316.83 प्रति हजार रही । 0-10 एकड़ भूमि वाले परिवारों से सम्बंधित महिलाओं ने इन्हीं वर्षों में 107 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 32 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही हो गयी इनमें शिशु मृत्यु-दर 299 प्रति हजार पायी गयी । इसी प्रकार, वे महिलायें, जिनके परिवार की भूमि 10-20 एकड़ थी, ने उन्हीं वर्षों में 87 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 22 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गयी इनमें शिशु मृत्यु-दर 252.87 प्रति हजार थी ।

यदि मुस्लिम परिवारों में शिशु मृत्यु को आनुपातिक दृष्टि से देखा जाय तो पता चलता है कि भूमिहीन परिवारों में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.32 है, 0-10 एकड़ भू-स्वामित्व वाले परिवारों में यह अनुपात 1:.30 है एवं 10-20 एकड़ भू-स्वामित्व वाले परिवारों में यह अनुपात 1:.25 पाया गया ।

इस प्रकार, दोनों समुदायों से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि भूमिहीन परिवारों में सर्वाधिक बच्चे पैदा हुये तथा इन्हीं में मृत्यु-दर भी सबसे अधिक पायी गयी तथा भू-स्वामित्व वाले परिवारों में मृत्यु-दर अपेक्षाकृत कम रही । यह भी ज्ञात हुआ कि भू-स्वामित्व का शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव अल्प ही है जो कि हिन्दू परिवारों में अपेक्षाकृत अधिक है जबकि मुस्लिम परिवारों में यह कम परिलक्षित होती है ।

विवाह के समय माँ की आयु के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

स्त्रियों की विवाह के समय आयु शिशु मृत्यु-दर को प्रभावित करती है । यदि छोटी आयु में लड़कियों का विवाह कर दिया जाता है तो वे छोटी आयु में ही माँ बन जाती हैं । कम आयु में शिशु को जन्म देना, शिशु के लिये घातक होता है । इसका कारण यह है कि स्त्री के शरीर का पूर्ण विकास नहीं हो पाता जिसका प्रभाव बच्चे पर पड़ता है । बच्चा गर्भकाल में ही दुर्बलता का शिकार हो जाता है । दुर्बलता ही अस्वस्थता को जन्म देती है जो कि अन्ततः शिशु मृत्यु का कारण बनती है ।

विवाह के समय आयु और शिशु मृत्यु के संदर्भ में खान[25] ने अपने निष्कर्षों के आधार पर लिखा है कि विवाह के समय माता की उम्र का शिशु मृत्यु पर गहरा प्रभाव पड़ता है, यदि माँ की आयु 19 वर्ष से कम है तो शिशु मृत्यु-दर बढ़ जाती है और यदि विवाह के समय माता की उम्र 20 और 30 के मध्य है तो शिशु मृत्यु-दर काफी कम हो जाती है ।

ओमरान और स्टैण्डली,[26] इस्लाम,[27] पेथीब्राइड,[28] साइमन,[29] और महादेवन[30] भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि विवाह के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु-दर से काफी गहरा सम्बन्ध होता है । इसका प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव पड़ता है ।

---

(25) खान, एम0ई0, (1980) ,इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन उत्तर प्रदेश, ए माइक्रो लेविल स्टडी, इन इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, अनुराधाः के0जैन एण्ड प्रवीन विसारिया, लन्दन, पेज 229-30 ।

(26) ओमरान, ए0आर0 एण्ड स्टैण्डली, सी0सी0, (1976), फेमिली फारमेशन पैटर्न एण्ड हेल्थ, जनेवा, वर्डहेल्थ आर्गनाईजेशन, पेज 335 ।

(27) इस्लाम, एम0एस0, (1982), इन्फेन्ट मार्टीलिटी इन रूरल बांगलादेश, एन एनालिसिस आफ काजेज ड्यूरिंग नियोनेटल एण्ड पोस्ट नियोनेटल पीरिएड, जनरल आफ ट्रापिकल पैडियाट्रिक, दिसम्बर 28 (6) पेज 296-98 ।

(28) पेथीब्राइड, (1974), एण्ड ए0एम0फैरहा, चाइल्ड मार्टीलिटी एण्ड इट्स कोरिलेट्स इन सूडान, डाक्टोरल थीसिस, पेज 33 ।

(29) साइमन, जार्ज वी0, वी0डी0 मिश्रा, (1979) सम एक्स्पेक्ट्स आफ इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड हूड मार्टीलिटी इन रूरल नार्थ इण्डियाः सोसल एक्शन, वाल्यूम 29, पेज 249-269 ।

(30) महादेवन, के0, (1981), कल्चर, न्यूट्रीशन एण्ड इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टीलिटी, ए स्टडी इन साउथ सेन्ट्रल इण्डिया, मेमियो, पेज 38 ।

इसी प्रकार, राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी ने 1970 में यह रिपोर्ट दी थी कि यदि विवाह के समय माता की उम्र 17 वर्ष से कम रहती है तो उससे शिशु मृत्यु-दर की सम्भावना ज्यादा होगी इस्लाम ने अपने बांगलादेश के सर्वेक्षण के बाद जो रिपोर्ट प्रस्तुत की उस आधार पर यह कहा जा सकता है कि 20 वर्ष से कम आयु वाली माताओं द्वारा पैदा किये गये शिशुओं में नियोनेटल मृत्यु ज्यादा होने की सम्भावना होती है । इसे तभी रोका जा सकता है जब लड़कियों का विवाह 20 से 24 अथवा 25 से 29 वर्ष के मध्य किया जाये ।

विवाह के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु पर प्रभाव जानने के लिये सम्बंधित तथ्य एकत्रित किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.14 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.14

विवाह के समय माँ की आयु के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु-अनुपात

विवाह के समय आयु	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु की दर	अनुपात
10-14	349	95	272.20	1:.27
15-19	330	92	278.78	1:.28
20-40	228	54	236.84	1:.24
योग:-	907	241	265.71	1:.27

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि ऐसे उत्तरदाताओं जिनका विवाह 10-14 वर्ष आयु में हुआ है, ने तीन क्रमिक वर्षों- 1988, 1989 एवं 1990- में कुल 349 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 95 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत हो गये इनमें शिशु मृत्यु-दर 272.20 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, वे महिलायें जिनकी विवाह के समय आयु 15-19 वर्ष के मध्य थी, ने उन्हीं वर्षों में कुल 330 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 92 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व हो गयी इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 278.78 प्रति हजार पायी गयी । इसी क्रम में, यदि उन महिलाओं को देखा जाये जिनकी विवाह के समय आयु 20-24 वर्ष थी तो उन्होंने इन्हीं वर्षों में कुल 228 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 54 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गयी, इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 236.84 प्रति हजार रही ।

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.)IN BASIS OF MOTHERs MARRIAGE AGE
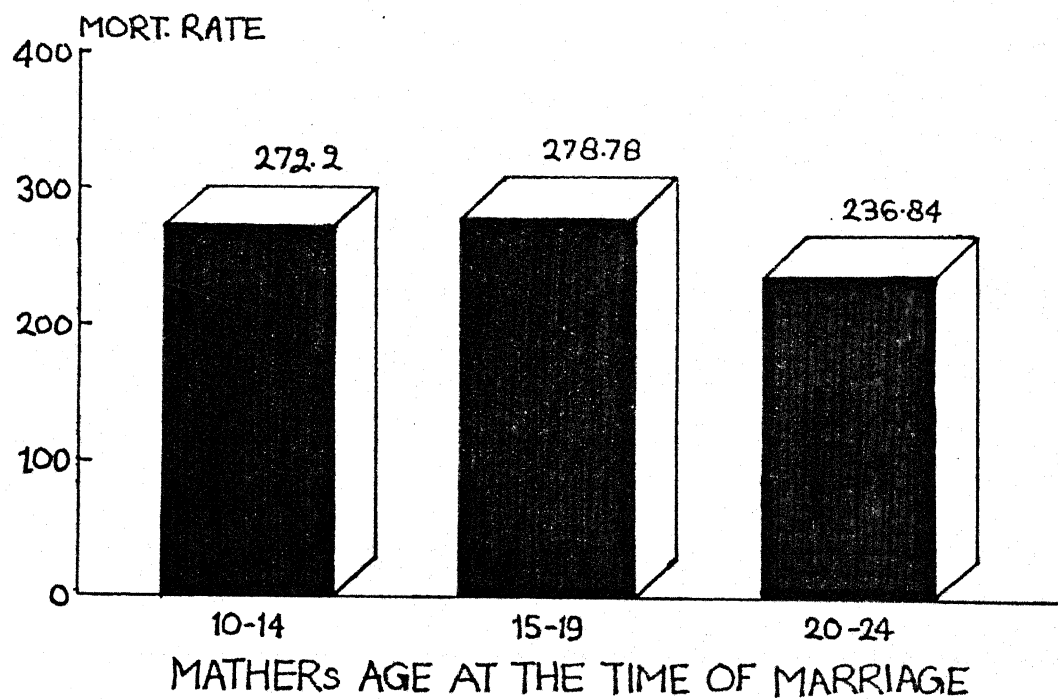
TABLE 5·14

यदि आनुपातिक आधार पर अवलोकन करें तो पाते हैं कि जिन महिलाओं का विवाह 10-14 वर्ष आयु में हुआ था उनमें जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.27 है अर्थात एक शिशु का जन्म होने पर 0.27 शिशु मृत हो जाते हैं । साथ ही, जिन स्त्रियों की विवाह के समय आयु 15-19 वर्ष थी उनमें यह अनुपात 1:.29 पाया गया तथा उन महिलाओं में जिनकी विवाह के समय आयु 20-24 वर्ष थी, उनमें यह अनुपात 1:.24 रहा ।

तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि स्त्रियों की विवाह के समय आयु शिशु मृत्यु-दर को प्रभावित नहीं करती है । इसका कारण सम्भवतः यह है कि सम्बंधित क्षेत्र में अधिकांश स्त्रियों के विवाह 19 वर्ष की आयु से पूर्व ही सम्पन्न हो गये तथा कम संख्या में स्त्रियों के विवाह 20 वर्ष और उसके बाद सम्पन्न हुये । सभी विवाह वर्गों में स्त्रियों का समान प्रतिनिधित्व न होने के कारण वास्तविक परिणामों की अपेक्षा नहीं की जा सकती है । इसी कारण हमारे निष्कर्ष विभिन्न विद्वानों के निष्कर्षों से मेल नहीं खाते हैं ।

उक्त प्रभाव को अलग-अलग सम्प्रदायों में देखने के लिये दोनों सम्प्रदायों से विवाह के समय आयु एवं शिशु मृत्यु-दर से सम्बंधित तथ्य एकत्रित किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.15 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.15

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदाय में विवाह के समय आयु के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें एवं शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

विवाह के समय आयु	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
10-14	200	47	235.00	1:.24	149	48	322.14	1:.32
15-19	122	28	229.50	1:.23	208	64	307.69	1:.31
20-24	88	16	181.81	1:.18	140	38	271.42	1:.27
योग:-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं   **.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं**

सारणी के अवलोकन से पता चलता है कि हिन्दू सम्प्रदाय की वे महिलायें जिनका विवाह 10-14 वर्ष की आयु में हुआ उनके द्वारा तीन क्रमिक वर्षों -1988, 1989 एवं 1990- में कुल 200 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 47 शिशुओं की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गयी, इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु दर 235.00 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, वे महिलायें, जिनका विवाह 15-19 वर्ष की आयु में हुआ, उन्होंने इन्हीं तीनों वर्षों में कुल 122 शिशुओं को जन्म दिया जिनमें से 28 शिशुओं की मृत्यु उनके प्रथम सालगिरह के पूर्व ही हो गयी इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 229.50 प्रति हजार पायी गयी । इनके अतिरिक्त, वे महिलायें, जिनका विवाह 20-24 वर्ष आयु में हुआ, उन्होंने भी इन्हीं तीनों वर्षों में कुल 88 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 16 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व ही हो गयी इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 181.81 प्रति हजार पायी गयी ।

यदि हिन्दू समुदाय का आनुपातिक आधार पर विवेचन करें तो पता चलता है कि जिन महिलाओं का विवाह 10-14 वर्ष आयु में हुआ था उनमें जन्म एवं शिशु मृत्यु अनुपात 1:.24 रहा अर्थात एक शिशु के जन्म होने पर 0.24 शिशुओं की मृत्यु हो जाती है । इसी प्रकार, वे महिलायें जिनका विवाह 15-19 वर्ष की आयु में हुआ था उनमें यह अनुपात 1:.23 पाया गया तथा जिनका विवाह 20-24 वर्ष आयु में हुआ उनमें यह अनुपात 1:.18 प्राप्त होता है ।

मुस्लिम समुदाय में यदि अवलोकन करें तो पता चलता है कि ऐसी महिलायें जिनका विवाह 10-14 वर्ष आयु में हुआ है उनके द्वारा तीनों वर्षों -1988, 1989 एवं 1990- में कुल 149 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 48 शिशुओं की जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत्यु हो गयी इनमें शिशु मृत्यु-दर 322.14 प्रति हजार रही तथा वे महिलायें जिनका विवाह 15-19 वर्ष आयु में हुआ उन्होंने इन्हीं वर्षों में कुल 208 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 64 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही हो गयी इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 307.69 प्रति हजार पायी गयी । इसके अतिरिक्त, वे महिलायें जिनका विवाह 20-24 वर्ष आयु में हुआ उन्होंने कुल 140 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 38 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व ही हो गयी और इनमें शिशु मृत्यु-दर 271.42 प्राप्त हुई ।

यदि इन्हीं को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो पता चलता है कि वे महिलायें जिनका विवाह 10-14 वर्ष आयु में हुआ उनमें जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.32 रहा तथा जिनका विवाह 15-19 वर्ष की आयु में हुआ उनमें यह अनुपात 1:.30 पाया गया । साथ ही, जिनका विवाह 20-24 वर्ष की आयु में हुआ उनमें यह अनुपात 1:.27 प्राप्त होता है ।

इस प्रकार दोनों समुदायों के आँकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि दोनों समुदायों में विवाह के समय आयु का शिशु मृत्यु पर प्रभाव नाम मात्र का ही है । अर्थात शिशु मृत्यु के सम्बन्ध में विवाह के समय आयु का कोई खास महत्व नहीं होता है ।

प्रसव के समय सहायकों के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

समाज में फैली हुयी कुरीतियाँ शिक्षा के अभाव की द्योतक होती हैं । आज का परिवेश विकास की ओर उन्मुख है किन्तु फिर भी पूर्ण रूप से विकसित नहीं है । आज भी जन्म के समय, विशेषकर ग्रामीण अंचलों में, ज्यादातर प्रसव दाइयों या अप्रशिक्षित महिलाओं द्वारा कराये जाते हैं । इन दाइयों व अप्रशिक्षित महिलाओं को चिकित्साशास्त्र व शरीर विज्ञान का कोई ज्ञान न होते हुये भी अधिकांश प्रसव इन्हीं की मदद से कराये जाते हैं । ये महिलायें पुराने चाकू, हँसिया, खुर्पी, ब्लेड या बांस की पत्ती से नाल काट कर किसी पुरानी साड़ी के टुकड़े से बच्चे का मुंह ढ़क देती हैं तथा बच्चे को पुराने कपड़े पहना दिये जाते हैं । पुराने कपड़े बच्चे की आयु को बढ़ाते हैं, ऐसा अन्ध विश्वास समाज में अब भी व्याप्त है । मुँह दिखाई के लिये पैसा न्योछावर किया जाता है अतः बच्चे को मुँह ढ़ँक कर रखा जाता है इससे बीमारियाँ फैल जाती हैं। इस प्रकार की जन्म की दशायें बच्चे की मृत्यु का कारण बन जाती हैं ।

दाई, पड़ोसी, रिश्तेदार या अन्य अप्रशिक्षित कार्यकर्ताओं का प्रयोग प्रसव सहायक के रूप में किये जाने के संदर्भ में कुछ नये अनुसंधान, जो कि महादेवन, रेड्डी, मूर्ति, पी0जे0रेड्डी, गौरी तथा शिवराशू[31] द्वारा किये गये हैं ,इनका मानना है, कि मृत्यु-दर प्रसव सहायक के आधार पर कम अथवा अधिक रहती है ।

राय तथा बानो[32] का यह मानना है कि प्रसव के समय सहायक की उपस्थिति से शिशु मृत्यु की घटने एवं बढ़ने की सम्भावना रहती है । सहायक के द्वारा शिशु मृत्यु में लाई गई यह

---

(31) महादेवन, के0, रेड्डी, पी0आर0, मूर्ति, एम0, एस0आर0रेड्डी, पी0जे0, गौरी, बी0, एण्ड शिवराशू, एम0 (1986), कल्चर, न्यूट्रीशन एण्ड इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टेलिटी, इन फर्टेलिटी एण्ड मार्टेलिटी, एडीटेड बाई के0 महादेवन, संज पब्लिकेशन, लन्दन, पेज 232-233 ।

(32) राय, यू0एन0 एण्ड कोआजी, बानो, (1988), कोरिलेट्स आफ इन्फेन्ट सरवाइवल एकार्डिंग टू कोहरोट स्टडी इन वधू रूरल हेल्थ प्रोजेक्ट, इन इन्फेन्ट मार्टेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, एडीटेड बाई अनुराधा के0 जैन, एण्ड प्रवीन विसारिया, लन्दन, पेज 211-212 ।

विभिन्नता प्रसव कराने के स्थान से सह-सम्बन्ध भी रखती है । अप्रशिक्षित महिलाओं अथवा दाइयों द्वारा प्रसव कराने पर मृत्यु-दर की सम्भावना ज्यादा रहती है । इस निष्कर्ष का समर्थन करते हुये खनजंन स्थिति, वेंचाकरन विलाई, वेंचाकरू,[33] एम0कास्टीलो, सोलिस, फेसिया और ग्रेसिला[34] का यह मानना है कि प्रसव के समय अप्रशिक्षित दाई की उपस्थिति से नियोनेटल अवस्था में शिशु की मृत्यु ज्यादा होती है ।

प्रस्तुत अध्ययन में प्रसव के समय सहायकों के प्रयोग के आधार पर जो तथ्य प्राप्त हुये उन्हें सारणी 5.16 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.16

प्रसव सहायकों के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

प्रसव सहायक	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
प्रशिक्षित	342	49	143.27	1:.14
अप्रशिक्षित	565	192	339.82	1:.34
योग:-	907	241	265.71	1:.27

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण।

सारणी से पता चलता है कि ऐसे उत्तरदाताओं, जिन्होंने प्रसव के समय अप्रशिक्षित सहायकों का प्रयोग किया, ने तीनों वर्षों -1988, 1989 एवं 1990- में कुल 565 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 192 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत हो गये तथा शिशु मृत्यु-दर 339.82 प्रति हजार रही । जबकि उन उत्तरदाताओं, जिनमें प्रसव के समय उपस्थित सहायक

(33) खनजंन स्थिति, पी0, एण्ड वेंचाकरन, विलाई, वेंचाकरू, (1983), हेल्थ प्राब्लम इन पेरीनेटल पीरिएड एण्ड इन्फेन्ट इन ए रूरल डिस्ट्रिक आफ थाईलैण्ड, इन सिसरेड, इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टीलिटी इन दि थर्ड वर्ड, पेरिस, पेज 309-311 ।

(34) कास्टीलोः एम0, फ्रेसियाः एफ0, सोलिस एण्ड ग्रेसिला एम0ए0, (1983), इन्फ्लूवेशिया डिल सेक्टर स्लाइडेन लांस निवेलेस, इन सिसरेड, इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मार्टीलिटी इन दि थर्ड वर्ड, पेरिस, पेज 309-312 ।

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.)IN BASIS OF BIRTH ATTENDENT
MORT. RATE
500
400
300
200
100
0
143.27
339.82
TRAINED PERSONAL
UNTRAINED PERSONAL
BIRTH ATTENDENT
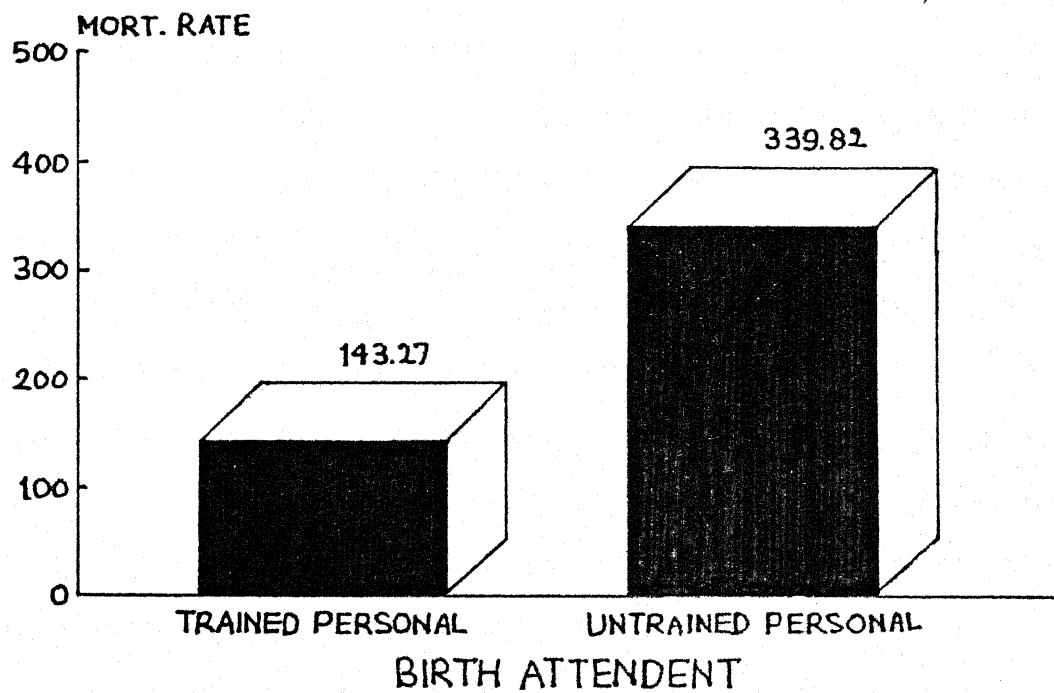
TABLE 5.16

प्रशिक्षित थे, ने उन्हीं तीनों वर्षो में कुल 342 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 49 शिशु अपनी प्रथम वर्षगांठ मनाने के पूर्व ही मृत हो गये । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 143.27 प्रति हजार पायी गयी ।

यदि आनुपातिक दृष्टिकोण से देखते हैं तो पता चलता है कि जहाँ प्रसव सहायक प्रशिक्षित थे वहाँ जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.14 था अर्थात जहाँ एक शिशु का जन्म होता है वहीं 0.14 शिशु मृत हो जाते हैं । जबकि अप्रशिक्षित प्रसव सहायकों के प्रयोग से अनुपात बढ़ जाता है यह जन्म एवं मृत्यु के आधार पर 1:.34 प्राप्त होता है ।

तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि जहाँ अप्रशिक्षित कार्यकर्ताओं का प्रसव के समय प्रयोग होता है वहाँ शिशु मृत्यु-दर ज्यादा है जिससे हमारी परिकल्पना -प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित प्रसव सहायक शिशु मृत्यु से घनिष्ठ रूप से सम्बंधित है- की पुष्टि होती है । इसका कारण सम्भवतः यह है कि दाई आदि जो प्रसव करातीं हैं सामान्यतः निम्न जाति की अप्रशिक्षित महिला होती हैं, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी यही कार्य करती आ रहीं हैं । उन्हें न तो प्रसव सम्बन्धी आधुनिक प्रशिक्षण तथा स्वच्छता का ज्ञान होता है और न ही उनके पास आधुनिक औजार आदि होते हैं । ये अप्रशिक्षित महिलायें पुराने हंसिया, चाकू, ब्लेड या जंग लगे हुये खुरपे का प्रयोग करती हैं, पुराने गन्दे कपड़े से नाल बांध देती हैं और गन्दे कपड़े से ही बच्चे का मुंह ढ़क देती हैं । जिससे बीमारियां फैल जाती हैं जो शिशु मृत्यु का कारण बन जाती है ।

इस प्रकार पूर्व अध्ययनों में दिये गये निष्कर्षो से तुलना करने पर हमारे निष्कर्ष के0 महादेवन, राय, कास्टीलो, फ्रेसिया, ग्रेसिया के निष्कर्षो से समानता रखते हैं ।

उपरोक्त तथ्यों को दोनों सम्प्रदायों में अलग-अलग स्पष्ट करने के लिये हिन्दुओं और मुसलमानों में प्रसव सहायकों के आधार पर जन्म एवं मृत्यु सम्बन्धी तथ्य एकत्रित किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.17 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.17

हिन्दू तथा मुस्लिम सम्प्रदाय में प्रसव सहायकों के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

प्रसव सहायक	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
प्रशिक्षित	156	15	95.95	1:.10	186	34	182.79	1:.18
अप्रशिक्षित	254	76	299.21	1:.31	311	116	372.99	1:.37
योगः-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण　　**.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण**

सारणी के अवलोकन से पता चलता है कि हिन्दू सम्प्रदाय में वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में ऐसे उत्तरदाताओं द्वारा जिनका प्रसव प्रशिक्षित सहायकों ने कराया कुल 156 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 15 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत हो गये । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 96.95 प्रति हजार प्राप्त हुई । इन्हीं वर्षों में उन उत्तरदाताओं द्वारा जिनका प्रसव अप्रशिक्षित सहायकों ने कराया कुल 254 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 76 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व हो गई इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 299.21 प्रति हजार पायी गयी।

यदि इसी समुदाय में प्रशिक्षित तथा अप्रशिक्षित प्रसव सहायकों के आधार पर जन्म एवं मृत्यु को आनुपातिक दृष्टिकोण से देखा जाय तो पता चलता है कि जहाँ प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं ने प्रसव कराया वहाँ जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.10 रहा तथा जहाँ अप्रशिक्षित कार्यकर्ता ने प्रसव कराया वहाँ जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.31 पाया गया ।

इसी प्रकार, मुस्लिम सम्प्रदाय की वे उत्तरदाता, जिनका प्रसव प्रशिक्षित सहायकों ने कराया वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 186 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 34 शिशु अपनी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व ही मृत हो गये और शिशु मृत्यु-दर 182.79 प्रति हजार रही । दूसरी ओर, ऐसे उत्तरदाताओं, जिनका प्रसव अप्रशिक्षित सहायकों द्वारा कराया गया, ने उन्हीं वर्षों में कुल 311 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 116 शिशुओं की जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत्यु हो गई । इनमें शिशु मृत्यु-दर 372.99 प्रति हजार पायी गई ।

यदि इसी समुदाय में प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित प्रसव सहायकों के आधार पर जन्म एवं मृत्यु के संदर्भ में आनुपातिक दृष्टिकोण से अवलोकन करें तो पाते हैं कि प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित प्रसव सहायकों के आधार पर जन्म एवं मृत्यु का अनुपात क्रमशः 1:.18 एवं 1:.37 है ।

उक्त तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि दोनों समुदायों के कम लोग ही प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं द्वारा प्रसव कराते हैं जबकि अधिकांश प्रसव अप्रशिक्षित दाइयों व महिलाओं द्वारा कराये जाते हैं । प्रशिक्षित की अपेक्षा अप्रशिक्षित महिलाओं द्वारा प्रसव कराने के कारण ही शिशु मृत्यु-दर ज्यादा पायी गई है ।

नाल काटने के यंत्र के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

शिशु के पैदा होने के तुरन्त बाद ही नाल काटने की क्रिया की जाती है । यह क्रिया प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के द्वारा की जाती है । आधुनिक परिवेश में तमाम उच्च किस्म के स्ट्रेलाइज्ड उपकरणों द्वारा नाल काटने की क्रिया प्रशिक्षित महिलाओं द्वारा तथा अस्पतालों में

की जाती है । लेकिन दाइयों एवं अप्रशिक्षित महिलाओं द्वारा इतना विकास होने के बाद भी उन्हीं परम्परागत यंत्रों का प्रयोग नाल काटने में किया जाता है । ऐसे यंत्र प्रायः जंग खाये रहते हैं जिससे टिटनेस तथा अन्य बीमारियों की सम्भावना ज्यादा रहती है । प्रस्तुत अध्ययन से पता चला कि अभी भी दोनों सम्प्रदायों में इन परम्परागत यंत्रों का प्रयोग जारी है । इन परम्परागत यंत्रों के प्रयोग से ही शिशु मृत्यु-दर बढ़ जाती है ।

महादेवन[35] का भी यही मानना है कि अवैज्ञानिक दृष्टिकोण से अपनाये जाने वाले यंत्रों में जैसे- ब्लेड, कैंची, हंसिया, बांस के पत्ते आदि का प्रयोग उत्तर प्रदेश में ज्यादा होता है जिसके कारण नियोनेटल अवस्था में 50 प्रतिशत शिशु मर जाते हैं । चौधरी[36], साइमन, मिश्रा, मजूमदार[37] का यही मानना है कि उत्तर प्रदेश में दाइयों द्वारा बड़े पैमाने पर टिटनेस पैदा करने वाले यंत्रों से नाल काटने की प्रक्रिया की जाती है, जिसके कारण 60 प्रतिशत बच्चे नियोनेटल अवस्था में ही मर जाते हैं ।

प्रस्तुत अध्ययन में नाल काटने के यंत्र का शिशु मृत्यु पर प्रभाव जानने के लिये जो आंकड़े प्राप्त हुये उन्हें सारणी 5.18 में प्रस्तुत किया गया है ।

---

(35) महादेवन, के० (1984), मारटेलिटी बाइलोजी एण्ड सोसाइटी: एनालिटिकल फ्रेमवर्क एण्ड कान्सेप्च्युवल माडल ।

(36) चौधरी, ए०के०एम (1982), दि कान्सेप्ट आफ इण्टरमीडिएट लेविल वेरियेबिल इन मारटेलिटी स्टडीज, इन वी एडमान्सटन एण्ड आर० वैरागी, इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन बांगलादेश ढाका, यूनीवर्सिटी आफ ढाका, पेज 29-37 ।

(37) साइमन, जी०वी०, सी०एम० स्मुकर, बी०डी०मिश्रा, एण्ड पी० मजूमदार (1978), पैटर्न एण्ड काजेज आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन रूरल उत्तर प्रदेश, जनरल आफ ट्रापिकल पैडियाट्रिक एण्ड इन विहाफ मेन्टल चाइल्ड हेल्थ, 27 (5), पेज 207-216 ।

सारणी 5.18

नाल काटने के यंत्र के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें एवं शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

नाल काटने का यंत्र	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
परम्परागत	293	108	368.60	1:.37
आधुनिक	614	133	216.62	1:.22
योगः-	907	241	265.71	1:.27

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण.

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि ऐसे उत्तरदाताओं, जिन्होंने, शिशु जन्म के समय नाल काटने के लिये परम्परागत यंत्रों जैसे- हंसिया, खुर्पा, छूरा आदि को प्रयोग कियाने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 293 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 108 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत हो गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 368.60 प्रति हजार प्राप्त हुई । इनके अतिरिक्त, ऐसे उत्तरदाता, जिन्होंने नाल काटने के लिये आधुनिक यंत्रों जैसे- ब्लेड, कैंची आदि का प्रयोग किया, ने उन्हीं तीनों वर्षों में कुल 614 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 133 शिशु अपनी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व ही मृत हो गये । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 216.62 प्रति हजार प्राप्त हुई ।

इन्हीं उत्तरदाताओं के शिशु मृत्यु का आनुपातिक दृष्टिकोण से अध्ययन करने पर पता चलता है कि परम्परागत यंत्रों का प्रयोग करने वाले उत्तरदाताओं में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.37 है अर्थात एक शिशु के जन्म पर 0.37 शिशु मृत हो जाते हैं । जबकि आधुनिक यंत्रों का प्रयोग करने वाले उत्तरदाताओं के शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.22 प्राप्त होता है ।

इस प्रकार तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि जहाँ नाल काटने के लिये परम्परागत यंत्रों जैसे- हंसिया, खुर्पा, छूरा आदि का प्रयोग होता है उनमें शिशु मृत्यु-दर अधिक पायी जाती है तथा जहाँ आधुनिक यंत्रों जैसे- नया ब्लेड, कैंची आदि का प्रयोग होता है वहाँ शिशु मृत्यु-दर कम पायी जाती है । परम्परागत एवं आधुनिक यंत्रों का प्रयोग शिशु मृत्यु को बहुत

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
(PERTH.) IN BASIS OF CORDCUTTER INSTRUMENTS
MORT. RATE
600
500
400
300
200
100
0
368.6
216.62
TRADITIONAL TYPE
MODERN TYPE
INSTRUMENT TYPE
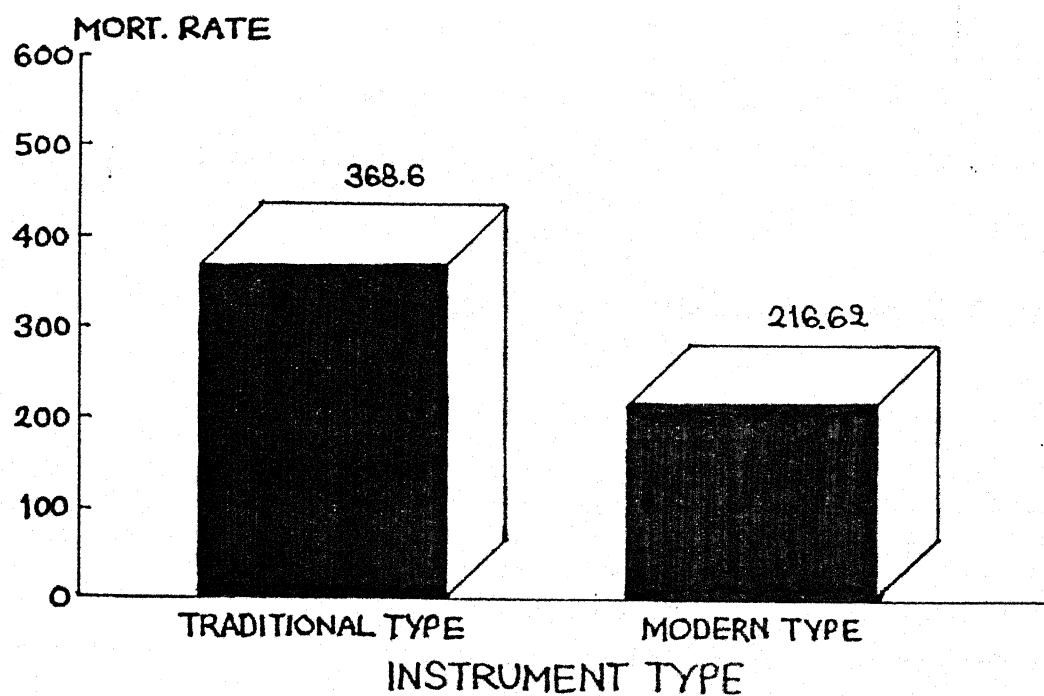
TABLE 5.18

अधिक प्रभावित करता है इस प्रकार हमारी परिकल्पना -नाल काटने के लिये प्रयुक्त किये गये यंत्र का प्रकार शिशु मृत्यु से घनिष्ठ रूप में सम्बंधित है- की पुष्टि होती है । इसका कारण यह है कि परम्परागत यंत्र प्रायः साफ-सुथरे नहीं होते । ये यंत्र जंग खाये हुये रहते हैं जिससे टिटनेस एवं अन्य बीमारियां पैदा हो जाती हैं जो शिशु मृत्यु-दर को बढ़ाने में सक्रिय भूमिका अदा करती हैं ।

हमारे निष्कर्ष महादेवन, चौधरी, साइमन, मिश्रा, मजूमदार के निष्कर्षो से मेल खाते हैं ।

प्रस्तुत अध्याय में नाल काटने के यंत्र के प्रकार का शिशु मृत्यु-दर में अत्यधिक प्रभाव देखनें को मिलता है । यह जानने के लिये कि दोनों सम्प्रदायों में अलग-अलग इसका क्या प्रभाव पड़ता है, तथ्य एकत्रित किये गये जिन्हें सारणी 5.19 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.19

हिन्दू एवं मुस्लिम सम्प्रदाय में नाल काटने के यंत्र के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें एवं शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

नाल काटने का यंत्र	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
परम्परागत	131	43	328.24	1:.23	162	65	401.23	1:.40
आधुनिक	279	48	172.04	1:.17	335	85	253.73	1:.25
योगः-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण **.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण**

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि हिन्दू सम्प्रदाय के ऐसे उत्तरदाताओं द्वारा, जिनमें शिशु जन्म में नाल काटने के लिये परम्परागत औजारों का प्रयोग किया गया, तीनों वर्षो (1988, 1989 एवं 1990) में कुल 131 शिशुओं को जन्म दिया गया जिसमें से 43 शिशुओं की मृत्यु हो गयी और शिशु मृत्यु-दर 328.24 प्रति हजार पायी गई जबकि आधुनिक यंत्रों का नाल काटने में प्रयोग करने वाले उत्तरदाताओं द्वारा 279 शिशुओं को जन्म दिया गया जिसमें से 48 शिशु

अपनी प्रथम वर्षगांठ मनाने के पूर्व ही मृत हो गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 172.04 प्रति हजार पायी गई ।

यदि इन्हीं तथ्यों को हम आनुपातिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करते हैं तो पता चलता है कि जहाँ परम्परागत यंत्रों का प्रयोग होता है वहाँ जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.33 व जहाँ आधुनिक यंत्रों का प्रयोग किया गया है वहाँ पर यह अनुपात 1:.17 है ।

मुस्लिम समुदाय में जहाँ नाल काटने की क्रिया में परम्परागत यंत्रों का प्रयोग होता है तीनों वर्षों (1988, 1989 एवं 1990) में कुल 162 शिशुओं का जन्म हुआ जिसमें से 65 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत हो गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 401.23 प्रति हजार रही । साथ ही, जहाँ आधुनिक यंत्रों का प्रयोग किया गया उत्तरदाताओं ने उन्हीं तीनों वर्षों में कुल 335 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 85 शिशु प्रथम सालगिरह के पूर्व ही मृत हो गये । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 253.73 प्रति हजार पायी गई ।

मुस्लिम सम्प्रदाय के आँकड़ों को यदि आनुपातिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया जाय तो ज्ञात होता है कि जहाँ परम्परागत यंत्रों का प्रयोग होता है उनमें जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.40 है तथा जहाँ आधुनिक यंत्रों का प्रयोग हुआ वहाँ जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.25 है ।

इससे स्पष्ट होता है कि दोनों सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु-दर नाल काटने के यंत्र के प्रयोग के आधार पर प्रभावित होती है । यह प्रभाव दोनों सम्प्रदायों में समानरूप से परिलक्षित होता है ।

जन्म के स्थान के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

शिशु मृत्यु-दर कम अथवा अधिक होने में जन्म स्थान की महत्वपूर्ण भूमिका है प्रसव के दृष्टिकोण से घर एवं उसमें कमरे की व्यवस्था अत्यधिक दोषपूर्ण होती है । प्रायः घरों में प्रसव के लिये वह कमरा चुना जाता है जो सबसे अधिक अंधकार पूर्ण एवं प्रयोजन हीन हो । उसकी रही-सही दरारें भी गोबर मिट्टी से भर कर पोत दी जाती हैं जिससे स्वच्छ वायु एवं सूर्य की किरणें उस कमरे तक नहीं पहुंच पाती । साथ ही, गन्दी टाट-पट्टियों से उसके एक मात्र दरवाजे पर पर्दा डाल दिया जाता है । फटे-पुराने कपड़ों का बिस्तर बनाया जाता है । इसके अतिरिक्त सफाई का कार्य सामान्यतः निम्न जाति की महिलाओं द्वारा किया जाता है जिसकी उपस्थिति से सफाई कम गन्दगी ही ज्यादा होती है । उजाले के नाम पर कमरे में एक लैम्प जलाया जाता है जो कमरे की बची-खुची आक्सीजन भी समाप्त कर देता है और साथ में छोड़ता है कार्बनडाइ आक्साइड । जच्चा-बच्चा की देख-रेख के लिये एक बुजुर्ग महिला कमरे में या दरवाजे पर सोती है जो हुक्का,

बीड़ी पीती रहती है । अतः स्वच्छ वायु की और भी कमी हो जाती है । इस प्रकार घर के इस दोषपूर्ण वातावरण में लोग प्रसव कराते हैं । इस वातावरण में शिशु मृत्यु की सम्भावना बढ़ जाती है ।

उक्त संदर्भ में राय,[38] कोआजी बानो एवं लीला विसारिया[39] का यह मानना है कि भारत में प्रसव का स्थान मृत्यु-दर को विशेष रूप से प्रभावित करता है । लीला विसारिया का यह भी कहना है कि यदि घर में प्रसव कराया जाता है तो मृत्यु-दर ज्यादा हो जाती है । राय एवं कोआजी बानो का मत इनसे भिन्न है । इनका मानना है कि घर में प्रसव कराने पर मृत्यु-दर कम एवं अस्पताल में प्रसव कराने पर ज्यादा होती है । अनुराधा के, जैन[40] का मत लीला विसारिया से मिलता है । इनका कहना है कि घर में प्रसव कराने पर मृत्यु-दर ज्यादा होती है । जबकि प्रेम जी तलवार[41] का यह मानना है कि प्रसव के स्थान का शिशु मृत्यु पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । दूसरी तरफ साइमन[42] तथा कबीर[43] इस बात से सहमत नहीं हैं । उनका कहना है कि स्थान का प्रसव एवं मृत्यु दोनों पर प्रभाव पड़ता है । घर में प्रसव कराने में ज्यादातर दाइयों का ही प्रयोग सम्भव होता है । ये प्रायः अप्रशिक्षित होती है और जंग लगे, गन्दे एवं पुराने यंत्रों का प्रयोग करती हैं । यदि यही प्रसव अस्पताल में कराया जाता तो इसकी सम्भावना कम रहती है । इस प्रकार उनका तर्क इस बात को स्वीकार करता है कि घर में प्रसव कराने से मृत्यु की सम्भावना अधिक रहती है ।

---

(38) राय, यू0एन0 एण्ड कोआजी बानो, वही ।

(39) विसारिया, लीला, (1988), लेविल ट्रेण्ड्स एण्ड डिटरमिनेन्ट आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, लन्दन, पेज 313 ।

(40) अनुराधा, के0 जैन, वही ।

(41) तलवार, प्रेम जी, वही ।

(42) साइमन, जार्ज वी, एण्ड वी0डी0मिश्रा, (1982), पोस्ट नियोनेटल मारटेलिटी इन रूरल इण्डिया, इम्प्लीकेशन आफ इकोनोमिक्स माडल, डेमोग्राफी वाल्यूम 19 नं0 3, लन्दन, पेज 371-389 ।

(43) कबीर, एम0 एण्ड ए0ए0 हाउलडर, (1980), सोसल इकोनोमिक्स डिटरमिनेन्ट्स आफ मारटेलिटी इन बांगलादेश, रूरल, लन्दन, डेमोग्राफी 7 (12 (1-13) ।

प्रस्तुत अध्ययन में जन्म के स्थान का शिशु मृत्यु-दर पर क्या प्रभाव पड़ता है यह जानने के लिये जन्म एवं मृत्यु सम्बन्धी आंकड़े एकत्र किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.20 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.20

जन्म स्थान के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

जन्म स्थान	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
घर	661	206	311.64	1:.31
अस्पताल	246	35	142.27	1:.14
योगः-	907	241	265.71	1:.27

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण.

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि ऐसे उत्तरदाताओं, जिनका प्रसव घर पर हुआ, ने तीन क्रमिक वर्षों (1988, 1989 एवं 1990) में कुल 661 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 206 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मृत हो गये । इनमें शिशु मृत्यु दर 311.64 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, ऐसे उत्तरदाताओं, जिन्होंने अस्पताल में प्रसव किया, ने इन्हीं तीनों वर्षों में कुल 246 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 35 शिशु अपनी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही मर गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 142.27 प्रति हजार पायी गई ।

इन्हीं तथ्यों को यदि आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत किया जाय तो पता चलता है कि जिन महिलाओं ने घर में प्रसव किया उनमें जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.31 एवं जिन्होंने अस्पताल में प्रसव किया उनमें यह अनुपात 1:.14 था ।

तथ्यों के विश्लेषण से पता चलता है कि ज्यादातर प्रसव घर में कराये गये हैं । साथ ही, यह भी स्पष्ट होता है कि अस्पताल में कराये गये प्रसव की अपेक्षा घर में कराये गये प्रसवों में शिशु मृत्यु ज्यादा है इस प्रकार हमारी परिकल्पना -शिशु जन्म का स्थान शिशु मृत्यु से घनिष्ठ रूप में सम्बंधित है- की पुष्टि होती है । इसका कारण सम्भवतः यह है कि घरों में प्रसव बन्द अंधकार युक्त कमरे में कराया जाता है । जहाँ कि स्वच्छता भी नहीं रहती जो कि नवजात

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
(PERTH.) IN BASIS OF BIRTH PLACE
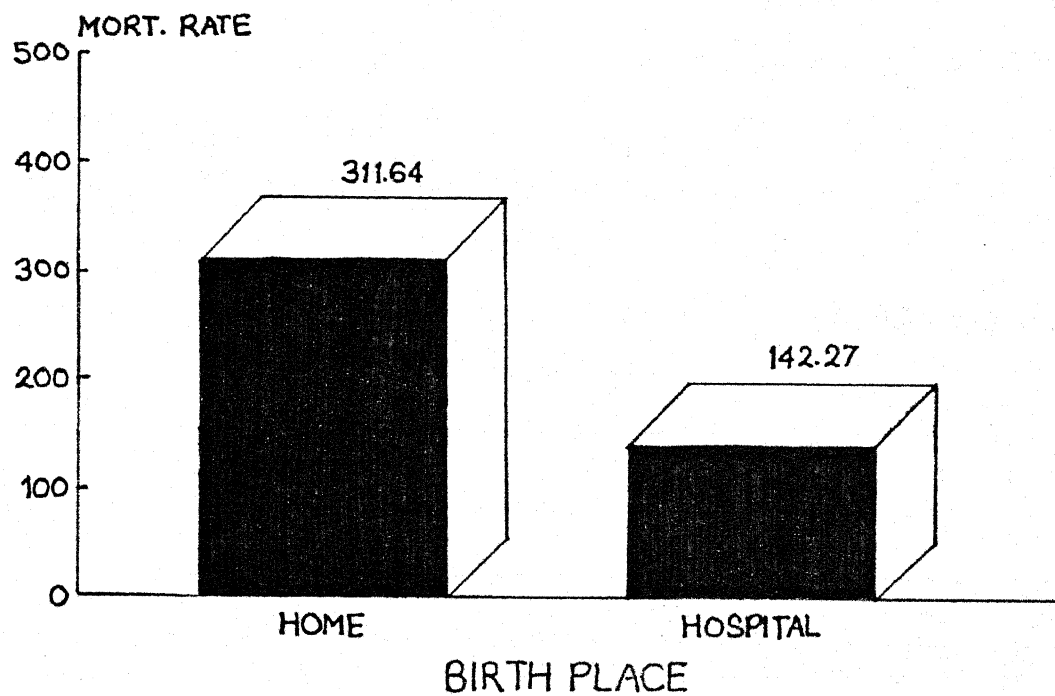
TABLE 5.20

शिशु को जिन्दा रखने के लिये आवश्यक होती है । यही कारण है कि घरों में कराये गये प्रसवों में शिशु मृत्यु-दर अधिक है ।

इस प्रकार हमारे निष्कर्ष लीला विसारिया, अनुराधा के0 जैन, साइमन एवं कबीर के निष्कर्षो से मेल खाते हैं जबकि राय एवं कोआजी बानो का मत हमारे निष्कर्षों के एक दम विपरीत है । जबकि प्रेम जी तलवार का यह मत कि प्रसव के स्थान का शिशु मृत्यु पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, बिल्कुल भिन्न प्रकार का है ।

अध्ययन के आधार पर प्राप्त निष्कर्षों से यह पता चलता है कि जन्म के स्थान का शिशु मृत्यु पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है । यह जानने के लिये कि अलग-अलग सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु में जन्म स्थान का क्या प्रभाव है, हिन्दू एवं मुस्लिम सम्प्रदाय से जन्म एवं मृत्यु के आंकड़े जन्म स्थान के संदर्भ में एकत्र किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.21 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.21

हिन्दू एवं मुस्लिम सम्प्रदाय में जन्म के स्थान के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

जन्म का स्थान	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
घर	323	85	263.15	1:.26	338	121	335.98	1:.36
अस्पताल	87	6	68.96	1:.07	159	29	182.38	1:.18
योग:-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण **.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण**

सारणी से स्पष्ट होता है कि हिन्दू समुदाय की उन उत्तरदाताओं द्वारा जिन्होंने घर में प्रसव किया है, ने तीन क्रमिक वर्षों (1988, 1989 एवं 1990) में कुल 323 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 85 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक काल कलवित हो गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 263.15 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, वे महिलायें, जिन्होंने अस्पताल में प्रसव किया, ने

इन्हीं तीनों वर्षो में कुल 87 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 6 शिशुओं की मृत्यु हो गई, इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 68.96 प्रति हजार पायी गई ।

यदि हिन्दू समुदाय के तथ्यों को ही आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो पाते हैं कि जो प्रसव घर में कराये गये उनमें जनम एवं मृत्यु का अनुपात 1:.26 एवं जो अस्पताल में कराये गये उनमें 1:.07 का अनुपात था ।

मुस्लिम समुदाय का अध्ययन करने पर पता चलता है कि वे महिलायें जिन्होंने घर पर ही प्रसव किया 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 338 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 121 शिशु अपनी प्रथ्म वर्षगांठ मनाने के पूर्व ही मृत हो गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 357.98 प्रति हजार पायी गई । दूसरी ओर वे महिलायें, जिन्होंने अस्पताल में प्रसव किया, ने उन्हीं तीनों वर्षो में कुल 159 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 29 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही हो गई । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 182.38 प्रति हजार पायी गई ।

यदि इन्हीं तथ्यों को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो पाते हैं कि वे महिलायें जिन्होंने घर पर प्रसव किया उनमें जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.36 रहा अर्थात एक शिशु के जन्म होने पर 0.36 शिशु मृत हो जाते हैं । इसी प्रकार अस्पताल में जन्म लेने वाले शिशुओं में यह अनुपात 1:.18 पाया गया ।

इस प्रकार दोनों समुदायों के तथ्यों का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि दोनों समुदायों में ज्यादातर प्रसव घर में ही कराये जाते हैं । इसी कारण उनमें शिशु मृत्यु-दर ज्यादा दिखाई देती है ।

प्रसव के समय माँ की आयु के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

यदि प्रसव के समय माँ की आयु के आधार पर शिशु मृत्यु-दर ग्राफ में अंकित किया जाय तो वक्र की आकृति (U) 'यू' की भाँति बनती है[44]। जिससे पता चलता है कि जब माँ की आयु कम होती है तो शिशु मृत्यु अधिक होती है । 20 वर्ष से पूर्व मातायें यदि बच्चों को जन्म देती हैं तो उनमें मृत्यु की सम्भावनायें अधिक होती हैं । 25-30 वर्ष की आयु में शिशु मृत्यु न्यूनतम होती है तथा 30 वर्ष की आयु के बाद फिर शिशु मृत्यु बढ़ने लगती है । प्रायः प्रथम

---

(44) विप्रदाश, पी०के० (1970), इन्फेन्ट मारटेलिटी इन सम रूरल एरिया आफ महाराष्ट्र, सुखी शंकर, फरवरी 8, पेज 34-46 ।

बच्चे में मृत्यु की सम्भावना अधिक होती है, द्वितीय में न्यूनतम, तृतीय एवं चतुर्थ में धीरे-धीरे बढ़ने लगती है, पांचवे बच्चे के बाद शिशु मृत्यु की सम्भावना पुनः बढ़ जाती है ।

प्रसव के समय माँ की आयु पर अध्ययन करने के पश्चात खान[45] का निष्कर्ष है कि प्रसव के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु पर गहरा प्रभाव पड़ता है । माँ की उम्र बच्चे को जिन्दा रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है । विभिन्न विकासशील देशों के सर्वेक्षण से यह ज्ञात होता है कि ज्यादातर मातायें 20 वर्ष की अवस्था से पूर्व ही शिशुओं को जन्म देती हैं जिसके कारण शिशु मृत्यु-दर बढ़ जाती है । उनका कहना है कि शिशु मृत्यु 20-30 वर्ष की अवस्था के मध्य पैदा किये गये बच्चों में काफी कम देखने को मिलती है । पुनः 34 वर्ष की अवस्था के बाद यह खतरा बढ़ जाता है । उत्तर प्रदेश के एक सर्वेक्षण के आधार पर खान[46] ने यह निष्कर्ष दिया है कि 19 वर्ष से कम आयु की माताओं के द्वारा प्रसव करने पर शिशु मृत्यु-दर 285 प्रति हजार प्राप्त होता है जबकि 20-24 वर्ष के मध्य 199 प्रति हजार और 30-34 वर्ष के मध्य 174 प्रति हजार रहता है । शिशु मृत्यु में नियोनेटल मृत्यु-दर सबसे अधिक होती है । देखा जाय तो 19 वर्ष से कम आयु वाली माताओं में नियोनेटल मृत्यु-दर 169 प्रति हजार रहती है जबकि 20-29 वर्ष की अवस्था में पैदा किये गये बच्चों में यह दर 50 प्रतिशत कम हो जाती है ।

अदलाख,[47] सोबरे,[48] इस्लाम,[49] बायान,[50] गारडेन, ओमरान और स्टैण्डली[51] तथा महादेवन[52] ने भी इस बात को स्वीकार किया है कि 19 वर्ष से कम आयु की माँ द्वारा प्रसव कराये जाने पर शिशु मृत्यु का दबाव बढ़ जाता है । यह दबाव 34 वर्ष की अवस्था के बाद पुनः बढ़ जाता है । बीच की आयु वर्ग (20-34) वाली महिलाओं द्वारा प्रसव के समय शिशु मृत्यु का भय कम रहता है।

---

(45) खान, एम0ई0, (1980) वही ।

(46) खान, एम0ई0 (1980), वही ।

(47) अदलाख, ए0एल0 (1970), ए स्टडी आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन तुर्की, <u>पी-एच0डी0 थीसिस,</u> यूनिवर्सिटी आफ मिचिघा । पेज 318 ।

(48) सोबरे, डी0जी0 (1971) <u>पापुलेशन प्रेसर आन फेमिलीज,</u> फेमिलीज साइज एण्ड चाइल्ड स्पेशिंग इन रैपिड पापुलेशन ग्रोथ, दि जान होपकिंस प्रेस, पेज 403-61 ।

(49) इस्लाम, एम0एस, (1982), वही ।

(50) बायान, जे0बी0, एण्ड गारडेन, जे0ई0 (1971), दि खन्ना स्टडी, पापुलेशन <u>प्राब्लम इन दि रूरल पंजाब</u>, हावर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस पेज, 193 ।

(51) ओमरान एण्ड स्टैण्डली, (1976), वही ।

(52) महादेवन, के0, (1981), वही ।

प्रस्तुत अध्ययन की उत्तरदाताओं की प्रसव के समय उनकी आयु का शिशु मृत्यु-दर पर क्या प्रभाव है, जानने के लिये तथ्य एकत्रित किये गये जिन्हें सारणी 5.22 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.22

प्रसव के समय माँ की आयु के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें एवं शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

प्रसव के समय माँ की आयु	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
15-24	282	69	244.68	1:.24
25-34	456	132	289.47	1:.29
35-44	169	40	236.68	1:.24
योग:-	907	241	265.71	1:.27

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि ऐसे उत्तरदाताओं जिनकी आयु प्रसव के समय 15-24 वर्ष के मध्य थी ने तीन क्रमिक वर्षों (1988, 1989 एवं 1990) में कुल 282 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 69 शिशुओं की मृत्यु उनके प्रथम सालगिरह के पूर्व हो गयी । इनमें शिशु मृत्यु-दर 244.68 प्रति हजार ही । इसी प्रकार, वे महिलायें जिनकी प्रसव के समय आयु 25-34 वर्ष के मध्य थी ने कुल 456 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 132 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक काल-कलवित हो गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 289.47 प्रति हजार प्राप्त हुई । इसी क्रम में, ऐसे उत्तरदाताओं जिनकी आयु प्रसव के समय 35-44 वर्ष थी, उन्होंने 169 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 40 शिशु अपनी प्रथम वर्षगांठ मनाने से पूर्व ही मर गये इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 236.68 प्रति हजार पाई गई ।

यदि प्रसव के समय माँ की आयु के संदर्भ में जन्म एवं मृत्यु को आनुपातिक दृष्टिकोण से देखे तो पता चलता है कि जिन उत्तरदाताओं की आयु प्रसव के समय 15-24 वर्ष थी उनमें शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.24 रहा अर्थात एक शिशु का जन्म होने पर 0.24 शिशु मृत हो जाते हैं । इसी प्रकार, जिन माताओं की प्रसव के समय आयु 25-34 वर्ष थी, उनमें शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.29 पाया गया । साथ ही, जिन उत्तरदाताओं की आयु प्रसव

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.) IN BASIS OF MOTHERs AGE AT DILIVERY

MOTHERs AGE AT THE TIME OF DILIVERY
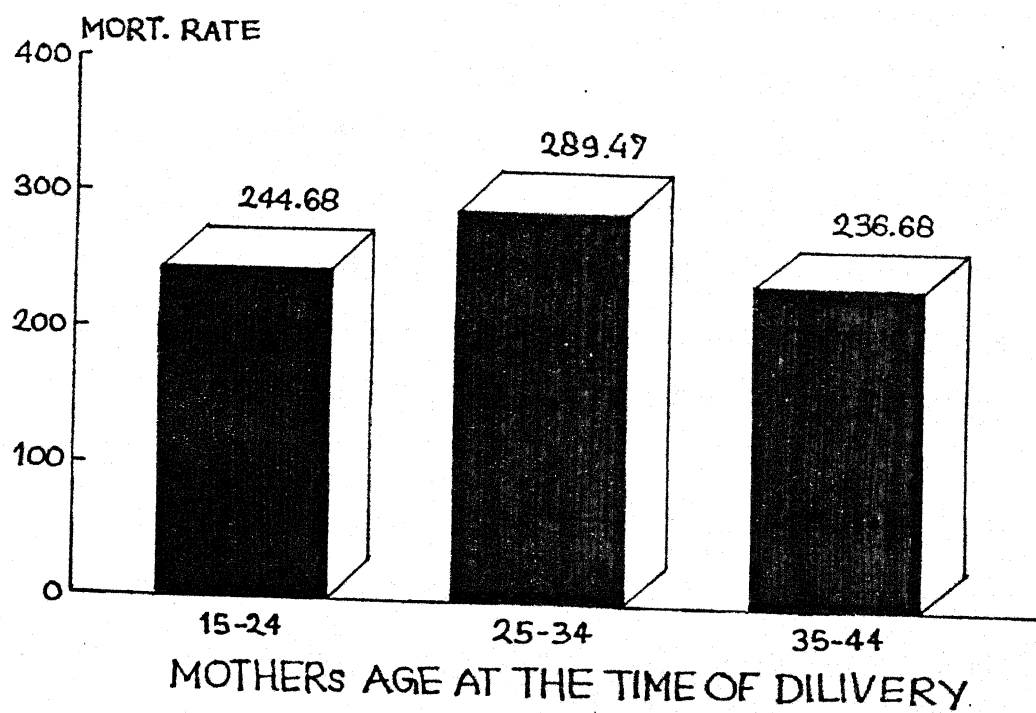
TABLE 5.22

के समय 35-44 वर्ष थी उनमें यह अनुपात 1:.24 पाया गया ।

ऑकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि जिन माताओं की आयु प्रसव के समय 15-24 वर्ष व 35-44 वर्ष है उनमें शिशु मृत्यु-दर उन माताओं की तुलना में कम पायी जाती है जिनकी आयु प्रसव के समय 25-34 वर्ष है । इसका कारण सम्भवतः यह है कि माताओं के प्रजनन काल (15-45 वर्ष) के मध्य के समय (25-34 आयु वर्ष) में उनकी प्रजनन क्षमता बढ़ जाती है और यह एक ज्ञात तथ्य है कि जब प्रजननता बढ़ती है तो शिशु मृत्यु-दर भी बढ़ जाती है । इसीलिए मध्य आयु वर्ग में शिशु मृत्यु-दर ज्यादा पायी गई एवं 15-24 एवं 35-44 वर्ष आयु के मध्य प्रसव होने पर शिशु मृत्यु-दर कम पायी गई । फिर भी सांख्यकीय विश्लेषण के आधार पर प्रसव के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु से घनिष्ठ सम्बन्ध दिखाई नहीं देता है, अतः इस प्रकार हमारी परिकल्पना -प्रसव के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु से सकारात्मक सह-सम्बन्ध है- की पुष्टि नहीं होती है । अधिकांश विद्वानों का मत यह है कि प्रारम्भिक एवं बाद के प्रजनन काल में प्रसव होने पर शिशु मृत्यु-दर अधिक होती है और प्रजनन काल के मध्य में शिशु मृत्यु कम होती है । इस प्रकार हमारे निष्कर्ष खान, इस्लाम, बायान, अद्लाख, ओमरान, महादेवन के निष्कर्षों से भिन्नता रखते हैं ।

प्राप्त निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि प्रसव के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु-दर पर आंशिक प्रभाव पड़ता है । इस प्रभाव को दोनों समुदायों में अलग-अलग देखने के लिये दोनों समुदायों के आंकड़े एकत्रित किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.23 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.23

हिन्दू एवं मुस्लिम सम्प्रदाय में प्रसव के समय माँ की आयु के आधार पर विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

प्रसव के समय माँ की आयु	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
15-24	127	26	204.72	1:.20	155	43	277.41	1:.28
25-34	208	49	335.57	1:.34	248	83	344.67	1:.34
35-44	75	16	213.33	1:.21	94	24	255.31	1:.26
योग:-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं **.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्णनहीं**

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि हिन्दू समुदाय की उत्तरदाताओं, जिनकी प्रसव के समय आयु 15-24 वर्ष थी, ने तीन क्रमिक वर्षों (1988, 1989 एवं 1990) में कुल 127 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें 26 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मर गये । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 204.72 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, वे महिलायें जिनकी आयु प्रसव के समय 25-34 वर्ष थी, उन्हीं वर्षों में कुल 208 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 49 शिशुओं की मृत्यु प्रथम सालगिरह के पूर्व ही हो गई । इनमें शिशु मृत्यु-दर 335.57 प्रति हजार पायी गयी । इसी क्रम में, यदि उन महिलाओं, जिनकी प्रसव के समय आयु 35-44 वर्ष थी, को देखा जाय तो उन्होंने कुल 75 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 16 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ मनाने के पूर्व ही हो गई इनमें शिशु मृत्यु-दर 213.33 प्रति हजार पायी गयी ।

यदि उपरोक्त तथ्यों को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो पाते हैं कि जिनकी आयु प्रसव के समय 15-24 वर्ष थी उनमें यह अनुपात 1:.20 था, जिनकी आयु प्रसव के समय 25-34 वर्ष थी उनमें जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.34 था तथा जिनकी आयु 35-44 वर्ष थी उनमें शिशु जन्म मृत्यु अनुपात 1:.21 था ।

इसी प्रकार, मुस्लिम समुदाय में वे उत्तरदाता जिनकी प्रसव के समय आयु 15-24 वर्ष थी उन्होंने वर्ष 1988, 1989, एवं 1990 में कुल 155 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 43 शिशु प्रथम सालगिरह के पूर्व ही मर गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 277.41 प्रति हजार रही । इसी प्रकार, वे उत्तरदाता जिनकी आयु प्रसव के समय 25-34 वर्ष थी ने कुल 248 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 83 शिशुओं की मृत्यु हो गई । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 344.67 प्रति हजार पायी गई । इसी क्रम में, वे उत्तरदाता, जिनकी आयु प्रसव के समय 35-44 वर्ष थी ने कुल 94 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 24 शिशुओं की मृत्यु हो गई, इनमें शिशु मृत्यु-दर 255.31 प्रति हजार पायी गई ।

यदि मुस्लिम समुदाय के तथ्यों को आनुपातिक दृष्टि से प्रस्तुत करें तो पाते हैं कि वे उत्तरदाता, जिनकी आयु प्रसव के समय 15-24 वर्ष थी, उनमें जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.28 था । इसी प्रकार वे उत्तरदाता, जिनकी प्रसव के समय आयु 25-34 वर्ष थी उनमें यह अनुपात 1:.34 था तथा उन उत्तरदाताओं में जिनकी आयु 35-44 वर्ष थी, उनके लिये यह अनुपात 1:.26 था ।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि दोनों ही सम्प्रदायों में प्रसव के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु से कोई विशेष सम्बन्ध देखने में नहीं आता जिसकी पुष्टि सांख्यकीय विश्लेषण से हो जाती है ।

शिशु के लिंग के आधार पर शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें :

सामान्यतः शिशु मृत्यु-दर में गिरावट आने की वजह से जीवन प्रत्याशा में बृद्धि हुई है किन्तु शिशु मृत्यु-दर आज भी बहुत ऊँची है । जहाँ तक लड़कों एवं लड़कियों में मृत्यु के दबाव का प्रश्न है जन संख्या सम्बन्धी समंकों से यह स्पष्ट नहीं है कि लड़कियों में मृत्यु का दबाव अधिक है या कम । यद्यपि कुछ सामाजिक व्यवस्थाओं में महिलाओं एवं लड़कियों के साथ भेदभाव का बर्ताव बड़ी आम बात है । जन्म से ही लड़की को उसके भाइयों से घटिया भोजन, वस्त्र, सुविधा, शिक्षा, चिकित्सा आदि उपलब्ध होती है । मृत्यु सम्बन्धी आंकड़े भी इसकी पुष्टि नहीं करते । इस संदर्भ में भिन्न मत रखते हुये डा0 एस0एन0अग्रवाल ने कहा है कि -यदि 1901 से 1961 तक के 60 वर्षों के समंको का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो ज्ञात होता है कि भारत में सामाजिक व्यवस्था के कारण लड़कों में ही मृत्यु का दबाव अधिक है । ऐसा माता जाता है कि जन्म से ही लड़का, लड़की की तुलना में कमज़ोर होता है । उसमें बीमारी से जूझने की शक्ति कम होती है[53]।

कुछ जनांकिकी वेत्ताओं ने कहा है कि जन्म से ही लड़की की शारीरिक व्यवस्था व संरचना लड़के की अपेक्षा मजबूत होती है जो पर्यावरण को झेलने के लिये उसे सशक्त बनाती है । अर्थात उनका मानना है कि प्रकृति ने ही बालिकाओं को बालकों की अपेक्षा सशक्त बनाया है[54]।

इसके विपरीत, तलवार[55] का यह मानना है कि लिंग के आधार पर मृत्यु-दर की सार्थकता संतोषजनक नहीं है लेकिन इसका प्रभाव हल्का सा अवश्य पड़ता है । इनका यह मानना है कि लड़कियों की मृत्यु लड़कों के अनुपात में ज्यादा होती है । गण्डोत्रा तथा दास[56] का यह मानना है कि नियोनेटल स्तर पर लड़कों की मृत्यु अधिक होती है । लेकिन यह भिन्नता पोस्ट नियोनेटल स्तर पर परिवर्तित हो जाती है । इस अवस्था में लड़कियों की मृत्यु ज्यादा होने लगती है । इस प्रकार, एक वर्ष की अवस्था तक लड़कियों की मृत्यु का अनुपात लड़को की अपेक्षा ज्यादा

---

(53) अग्रवाल, एस0एन0 (1972), इण्डियाज पापुलेशन प्राब्लम, टाटा एमसी ग्राहिल, बाम्बे, पेज 208 ।

(54) बोगी, डोनाल्ड, (1969), प्रिंसिपल आफ डेमोग्राफी, जान वेली एण्ड सन्स, न्यूयार्क, पेज 56

(55) तलवार, प्रेम जी0 (1984) इन्फेन्ट मारटेलिटी, सम एवीडेन्स फ्राम रूरल मध्य प्रदेश, इन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, वही लन्दन पेज 329 ।

(56) गण्डोत्रा, एम0एम0 नरायनदास, वही ।

हो जाता है । मिगमा[57] का यह मानना है कि भारत तथा श्रीलंका में लड़कियों की मृत्यु कुछ ज्यादा होती है । महादेवन[58] का भी यही निष्कर्ष है कि भारत में लड़कियों की मृत्यु लड़कों की अपेक्षा ज्यादा होती है ।

रामानुज[59] ने इस बात का समर्थन करते हुये कहा है कि विकसित देशों में लड़कों की मृत्यु-दर ज्यादा होती है जबकि भारत एवं श्रीलंका जैसे विकासशील देशों में मृत्यु-दर लड़कियों में ही ज्यादा पायी जाती है । इस मुख्य कारण सामाजिक परिवेश में उसमें व्याप्त कुरीतियों के साथ लिंग परहेज ही है ।

प्रस्तुत अध्ययन में लिंग भेद के आधार पर शिशु मृत्यु-दर पर पड़ने वाले प्रभाव को जानने के लिये तथ्य एकत्रित किये गये हैं जिन्हे सारणी 5.24 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.24

लिंग भेद के आधार पर शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

बच्चे का लिंग	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
लड़का	492	98	199.18	1:.20
लड़की	415	143	344.57	1:.34
योग:-	907	241	265.71	1:.27

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण

सारणी के अवलोकन से पता चलता है कि वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में उत्तरदाताओं द्वारा कुल 492 लड़कों को जन्म दिया गया जिसमें से 98 लड़कों की मृत्यु

---

(57) मिगमा, एस0ए0, (1980), सोशियो इकोनोमिक्स डिटरमिनेन्ट आफ इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन श्रीलंका, वर्ल्ड फर्टीलिटी सर्वे, अप्रैल 8, 1980, पेज 193 ।

(58) महादेवन, के0, (1981) वही, पेज 265-266 ।

(59) रामानुज, सी0, (1984), कोरिलेट्स आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन ए रूर एरिया आफ तमिलनाडु, इन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, अनुराधा के0 जैन एण्ड प्रवीन विसारिया [illegible]

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
PERTH.IN BASIS OF SEX DIFFERENCE
MORT. RATE
500
400
300
200
100
0
344.57
199.18
BOY
GIRL
SEX OF INFANT
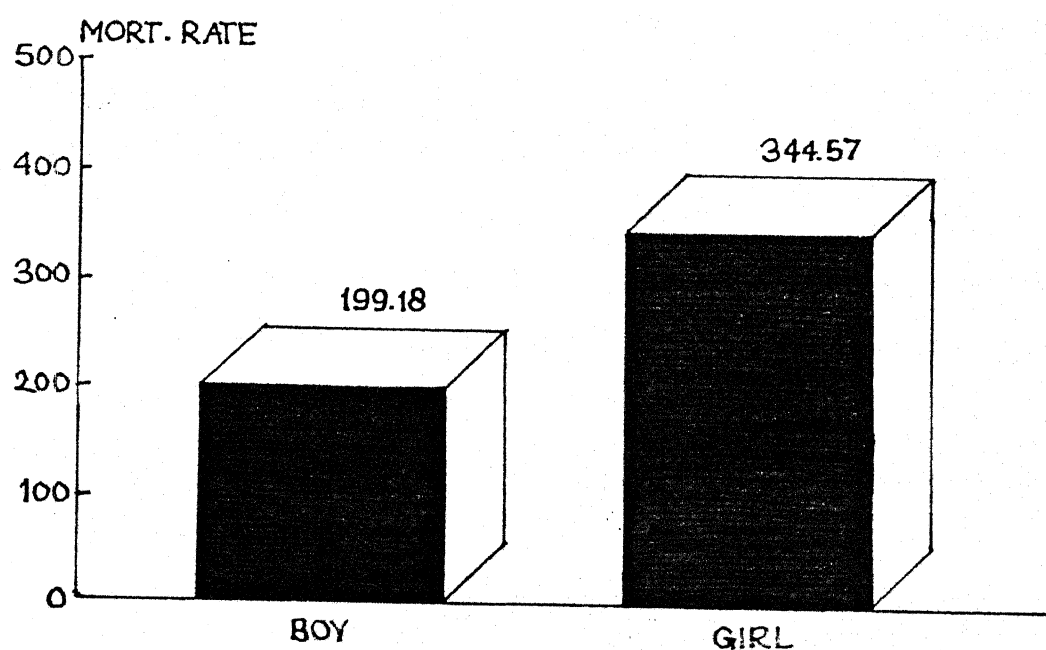
TABLE 5.24

जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गयी इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 199.18 प्रति हजार रही जबकि इन्हीं वर्षों में उत्तरदाताओं ने 415 लड़कियों को जन्म दिया जिसमें से 143 लड़कियों की मृत्यु उनकी प्रथम सालगिरह के पूर्व हो गयी इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 144.57 प्रति हजार पायी गयी ।

इन्हीं तथ्यों को यदि आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो पाते हैं कि लड़कों में शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.20 रहा अर्थात एक लड़के के जन्म होने पर 0.20 लड़कों की मृत्यु हो जाती है जबकि लड़कियों में यह अनुपात 1:.34 पाया गया ।

उपरोक्त तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि बालक एवं बालिकाओं में मृत्यु के दबाव में अन्तर स्पष्ट दिखाई देता है । अध्ययन क्षेत्र में बालक एवं बालिकाओं के साथ भेद-भाव आम बात है इसीलिए लड़कों की अपेक्षा लड़कियों में मृत्यु-दर ज्यादा पाई गई । इसका कारण यह हो सकता है कि लड़कियों की अपेक्षा लड़कों को स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सम्बन्धी सुविधायें शीघ्र उपलब्ध कराई जाती हैं उनका खान-पान आदि का ज्यादा ध्यान रखा जाता है । हमारे निष्कर्ष अग्रवाल, बोगी से भिन्नता रखते हैं जबकि तलवार, मिगमा, महादेवन एवं रामानुज से मेल खाते हैं ।

लिंग के आधार पर शिशु मृत्यु में भिन्नता के प्रभाव को अलग-अलग सम्प्रदायों में देखने के लिये हिन्दू एवं मुस्लिम सम्प्रदाय के अलग-अलग तथ्य एकत्रित किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.25 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.25

हिन्दू एवं मुस्लिम सम्प्रदाय में लिंग के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु अनुपात

बच्चे का लिंग	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
लड़का	241	39	161.82	1:.16	251	59	235.05	1:.24
लड़की	169	52	307.69	1:.31	241	91	369.91	1:.37
योगः-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण **.05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण**

सारणी के अवलोकन से पता चलता है कि हिन्दू समुदाय की महिलाओं ने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 241 लड़कों को जन्म दिया जिसमें से 39 लड़के अपनी प्रथम वर्षगांठ मनाने से पूर्व ही मर गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 161.82 प्रति हजार पायी गई । इसी प्रकार, वे उत्तरदाता, जिन्होंने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 169 लड़कियों को जन्म दिया उनमें से 52 लड़कियों की मृत्यु हो गयी इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 307.69 प्रति हजार पायी गई ।

यदि हिन्दू समुदाय के उपरोक्त तथ्यों को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो पता चलता है कि लड़कों में जनम एवं मृत्यु का अनुपात 1:.16 है अर्थात एक लड़के के जन्म होने पर 0.16 लड़कों की मृत्यु हो जाती है । इसी प्रकार, लड़कियों में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.31 था ।

मुस्लिम समुदाय का अध्ययन करने से पता चलता है कि उत्तरदाताओं द्वारा वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 251 लड़कों को जन्म दिया गया जिसमे से 59 शिशु अपनी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही मर गये । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 235.05 प्रति हजार पायी गई । इसी प्रकार, उन्हीं वर्षों में उत्तरदाताओं द्वारा 246 लड़कियों को जन्म दिया गया जिसमें से 91 लड़कियों की मृत्यु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो गई । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 369.91 प्रति हजार प्राप्त हुई ।

मुस्लिम सम्प्रदाय के तथ्यों को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करने पर पता चलता है कि लड़कों में जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.24 एवं लड़कियों में यह 1:.37 है ।

इस प्रकार, दोनों समुदायों के तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि उनमें लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की मृत्यु-दर अधिक है । साथ ही, लिंग के आधार पर शिशु मृत्यु का प्रभाव हिन्दूओं में अधिक दिखाई पड़ता है जबकि यह मुसलमानों में कुछ कम परिलक्षित होता है ।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि लिंग विभेद के द्वारा मृत्यु-दर में पायी जाने वाली विभिन्नतायें समाज में व्याप्त कुरीतियों को उजागर कर देती हैं । इस विभेद के माध्यम से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि समाज लड़कियों के साथ लड़कों की अपेक्षा किस प्रकार का भेद-भाव पूर्ण व्यवहार करता है ।

सामाजिक-आर्थिक स्थिति के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें :

यह लगभग एक समाजशास्त्रीय तथ्य बन चुका है कि जिस समाज में सामाजिक-आर्थिक स्थिति जितनी विकसित होती है वहाँ शिशु मृत्यु-दर उतनी ही कम होती है ।

जो समाज पिछड़ा होता है, निर्धन होता है वहाँ शिशु मृत्यु-दर अधिक होती है । इस संदर्भ में कई विद्वानों द्वारा शोध कार्य किये गये जिसमें तारा कानिटकर एवं मूर्ति[60] का मानना है कि सामाजिक-आर्थिक तत्व शिशु मृत्यु-दर को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं । गण्डोत्रा एवं नारायनदास[61] इस बात को स्पष्ट करते हैं कि सामाजिक-आर्थिक स्तर शिशु मृत्यु-दर के लिये एक महत्वपूर्ण तथ्य है जिसके द्वारा नियोनेटल एवं पोस्ट नियोनेटल मृत्यु-दर प्रभावित होती है । रामानुजम्[62] ने इस बात को स्वीकार किया है कि गरीब तथा अत्यधिक गरीब स्तर के लोगों में शिशु मृत्यु-दर ज्यादा होती है । खान[63] ने आर्थिक निर्धनता को शिशु मृत्यु का कारण माना है । इनका मानना है कि निर्धनता के कारण अशिक्षा, चिकित्सा की असुविधा, सामाजिक स्तर में गिरावट, कुपोषण आदि का वर्चस्व कायम हो जाता है जिसके कारण शिशु मृत्यु-दर बढ़ जाती है । अनुराधा के0 जैन[64] भी इस बात को स्वीकार करती है कि सामाजिक-आर्थिक पिछड़ापन मृत्यु-दर को बढावा देता है ।

---

(60) कानिटकर, तारा, एण्ड मूर्ति, वी0एन0 (1984), फैक्टर्स एसोसिएट्स विथ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन राजस्थान एण्ड उड़ीसा, इन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स,(1988), लन्दन, पेज 306 ।

(61) गण्डोत्रा, एम0ए0, एण्ड नारायन दास, (1984), इन्फेन्ट मारटेलिटी एण्ड एनालिसिस आफ रीसेन्ट वर्क्स इन गुजरात, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, 1988, लन्दन, पेज 288 ।

(62) रामानुज, सी0 (1984), कोरिलेट्स आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन रूरल एरिया आफ तमिलनाडु, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, 1988, लन्दन, पेज 267 ।

(63) खान, एम0ई0, 1984, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन उत्तर प्रदेश, एमाइक्रो लेविल स्टडी, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, 1988, लन्दन, पेज 234

(64) अनुराधा, के0 जैन (1984), डिटरमिनेन्ट्स आफ रीजरल वैरीएशन इन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन रूरल इण्डिया, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, 1988, लन्दन, पेज 203 ।

कुछ अन्य विशेषज्ञों जैसे एण्टोनोव,[65] लैथम,[66] हैविचट,[67] विनीकॉफ,[68] ब्रे,[69] ब्रैड [70] तथा महादेवन [71] आदि का भी यही विचार है । उच्च सामाजिक स्तर में शिशु मृत्यु-दर कम होती है जैसे-जैसे सामाजिक स्तर में गिरावट आती है शिशु मृत्यु-दर बढ़ती जाती है । इनका यह भी कहना है कि आर्थिक रूप से पिछड़ा पन होने से माँ की पोषणता पर बुरा प्रभाव पड़ता है, माँ की शिक्षा पर बुरा प्रभाव पड़ता है, सामजिक रहन-सहन पर बुरा प्रभाव पड़ता है । प्रसव के लिये उत्तम स्थान का चुनाव नहीं हो पाता साथ ही साथ,सामाजिक रूप से पिछड़ा पन होने के कारण सामाजिक कुरीतियां समाज पर वर्चस्व कायम कर लेती हैं जिससे शिशु मृत्यु-दर बढ़ जाती है ।

प्रस्तुत अध्ययन में शिशु मृत्यु में सामाजिक-आर्थिक स्थिति का क्या प्रभाव पड़ता है यह जानने के लिये सामाजिक-आर्थिक स्थिति के संदर्भ में आंकड़े एकत्र किये गये हैं जिन्हें सारणी 5.26 में प्रस्तुत किया गया है ।

---

(65) एण्टोनोव, ए0, 1947, चिल्ड्रेन बार्न ड्यूरिंग दि सीज इन लेनिनगार्ड इन 1942, जनरल आफ पैडियाट्रिक, 30, पेज 250 ।

(66) लैथम, सी0 मिचेल, 1968, साइंस, इन एन0एस0 स्क्रीम सा, सी0ई0 टेलर, जे0ई0 गार्डन, मोनोग्राफ सिरीज, नं0 57, पेज 188-561 ।

(67) हैविचट, जे0पी0, लेचटीग, सी0 वार्ग वर्ग, एण्ड आर0ई0क्लेन, 1976, मैटर्नल न्यूट्रीशन बर्थ वेट, एण्ड इन्फेन्ट मारटेलिटी, इन के0ई0 इलिएट एण्ड नाइट, साइज एट वर्थ, एसोसिएट साइंसटिफिक पब्लिशर, पेज 339 ।

(68) विनीकाफ, वेवर्ली (1978), न्यूट्रीशन पापुलेशन एण्ड हेल्थ सम इम्प्लीकेशन फार पालिसी,दि पापुलेशन काउंसिल, वर्किंग पेपर नं0 3, पेज 1-32 ।

(69) ब्रे, डी0जी0, 1977, मैटर्नल न्यूट्रीशन ब्रेस्ट फीडिंग एण्ड इन्फेन्ट सरवाइवल, इन न्यूट्रीशन एण्ड हू मैन रिप्रोडक्शन, न्यूयार्क, प्लेनू प्रेस, पेज 302 ।

(70) ब्रेड, सर डूगाल्ड, 1977 इपीडिमियोलोजी पैटर्न ओवर टाइम इन डी0एम0 रीड एण्ड एफ0जे0 स्टैण्डली, दि इपीडिमियोलोजी आफ प्रिमिच्योरिटी, वाल्टीमोर, स्वेजन वर्क, पेज 5-15 ।

(71) महादेवन, के0 1981, कल्चर न्यूट्रीशन एण्ड इन्फेन्ट मारटेलिटी एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी, ए स्टडी इन साउथ सेन्ट्रल इण्डिया, न्यूयार्क, पेज 30।

सारणी 5.26
सामाजिक-आर्थिक स्थिति के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नतायें तथा शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

सामाजिक-आर्थिक स्थिति	जीवित जन्म	शिशु मृत्यु	शिशु मृत्यु-दर	अनुपात
उच्च	169	13	76.92	1:.08
मध्य	267	66	247.19	1:.25
निम्न	471	162	343.94	1:.34
योगः-	907	241	265.71	1:.27

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि वे उत्तरदाता जो उच्च सामाजिक-आर्थिक स्थिति वाले हैं उन्होंने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 169 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें 13 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मर गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 76.92 प्रति हजार रही । साथ ही वे महिलायें जो मध्य सामाजिक-आर्थिक स्तर वाली थीं उन्होंने इन्हीं वर्षों में 267 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 66 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही हो गई । इनमें शिशु मृत्यु-दर 247.19 प्राप्त हुई जबकि निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाली उत्तरदाताओं ने उन्हीं वर्षों में 471 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 162 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के पूर्व हो गई । इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 343.94 प्रति हजार पायी गई ।

यदि इन्हीं तथ्यों को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो पता चलता है कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाली महिलाओं में शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.08 था, मध्य स्तर वाली उत्तरदाताओं में शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.25 था तथा निम्न स्तर वाली महिलाओं में यह अनुपात 1:.34 रहा ।

उपरोक्त तथ्यों के विश्लेषण से पता चलता है कि जैसे-जैसे सामाजिक-आर्थिक स्तर में गिरावट आती हैं शिशु मृत्यु-दर बढ़ती जाती है सबसे कम शिशु मृत्यु-दर उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर में पायी गई तथा सर्वाधिक मृत्यु-दर निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले परिवारों में पायी गई

INFANT MORTALITY RATE DIFFERENTIALS
(PER TH.)IN BASIS OF SOCIO-ECONOMIC STATUS
MORT. RATE
500
400
300
200
100
0
76.92
247.19
343.94
HIGH
MIDDLE
LOW
SOCIO-ECONOMIC STATUS
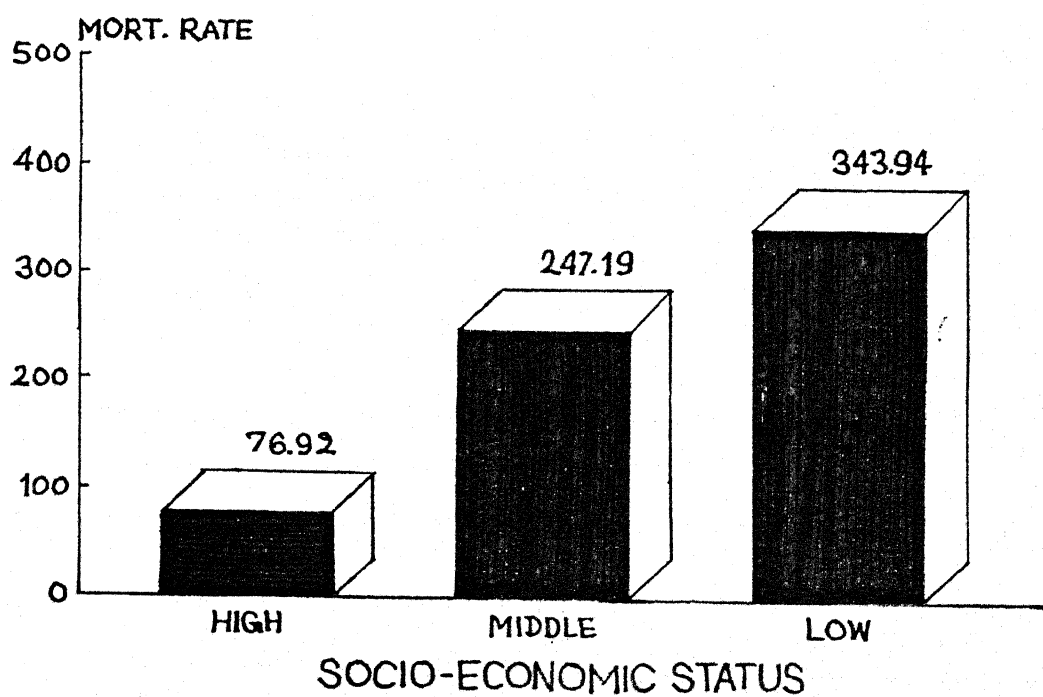
TABLE 5.26

जिससे हमारी परिकल्पना -माता-पिता का सामाजिक-आर्थिक स्तर शिशु मृत्यु के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है- की पुष्टि होती है । इसका कारण यह प्रतीत होता है कि निर्धनता, परिवार में अशिक्षा, चिकित्सा की असुविधा, सामाजिक स्तर में गिरावट, कुपोषणता एवं माँ की पोषणता, के साथ-साथ सामाजिक कुरीतियां पैदा करती हैं ये सभी कारण शिशु मृत्यु-दर को उच्च करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । इसी कारण निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले परिवारों में उच्च शिशु मृत्यु-दर पायी गई । हमारे निष्कर्ष कानिटकर, मूर्ति, गण्डोत्रा, रामानुज, खान, अनुराधा के0 जैन, एण्टोनोव, लैथम, हैविचट, विनीकाफ के निष्कर्षो के साथ-साथ ब्रेरे, ब्रैड, महादेवन के निष्कर्षो से पूर्ण रूप से मेल खाते हैं ।

सामाजिक-आर्थिक स्तर के शिशु मृत्यु पर प्रभाव को अलग-अलग सम्प्रदायों में देखने के लिये हिन्दू एवं मुस्लिम समुदायों का अध्ययन करने पर जो तथ्य प्राप्त हुये हैं उन्हें सारणी 5.27 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 5.27

हिन्दू एवं मुस्लिम सम्प्रदाय में सामाजिक-आर्थिक स्तर के आधार पर शिशु मृत्यु-दर एवं शिशु जन्म मृत्यु- अनुपात

सामाजिक-आर्थिक स्तर	सम्प्रदाय							
	हिन्दू				मुस्लिम			
	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात	जन्म	मृत्यु	दर	अनुपात
उच्च	78	5	64.10	1:.06	91	8	87.91	1:.09
मध्य	124	23	185.48	1:.19	143	43	300.69	1:.30
निम्न	208	63	302.88	1:.30	263	99	376.00	1:.38
योगः-	410	91	221.95	1:.22	497	150	301.81	1:.30

.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण **.01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण**

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट है कि हिन्दू समुदाय की महिलाओं ने जिनका सम्बन्ध उच्च सामाजिक-आर्थिक स्थिति से है उन्होंने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 78 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 5 शिशुओं की मृत्यु उनके जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक हो

गई, इनमें शिशु मृत्यु-दर 64.10 प्रति हजार रही । वे उत्तरदाता जो मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के हैं उन्होंने इन्हीं वर्षों में 124 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें 23 शिशुओं की मृत्यु हो गई, इनमें शिशु मृत्यु-दर 185.48 प्रति हजार पायी गई । इसी प्रकार, वे उत्तरदाता, जिनका सम्बन्ध निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर से है, उन्होंने इन्हीं वर्षों में कुल 208 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 63 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम सालगिरह के पूर्व ही हो गई, इस प्रकार इनमें शिशु मृत्यु-दर 302.88 प्रति हजार पाई गई ।

यदि उपरोक्त तथ्यों को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो पता चलता है कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर में शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.06 था, मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर में यह 1:.19 रहा जबकि निम्न स्तर के लिये यह अनुपात 1:.30 पाया गया ।

मुस्लिम समुदाय के वे उत्तरदाता जो उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाली हैं उन्होंने वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में कुल 91 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 8 शिशुओं की मृत्यु उनकी प्रथम वर्षगांठ के अन्तर्गत हो गई इनमें शिशु मृत्यु-दर 87.91 प्रति हजार रही इसी प्रकार, वे महिलायें, जो मध्यम स्तर से सम्बंधित हैं, उन्होंने इन्हीं वर्षों में कुल 143 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 43 शिशुओं की मृत्यु हो गयी । इनमें शिशु मृत्यु-दर 300.69 प्रति हजार पायी गई । साथ ही, वे उत्तरदाता, जिनका सामाजिक-आर्थिक स्तर निम्न था, उन्होंने उन्हीं वर्षों में 263 शिशुओं को जन्म दिया जिसमें से 99 शिशु जन्म लेने वाले वर्ष के अन्त तक मर गये । इनमें शिशु मृत्यु-दर 376 प्रति हजार था ।

यदि मुस्लिम समुदाय के तथ्यों को आनुपातिक आधार पर प्रस्तुत करें तो स्पष्ट होता है कि इस समुदाय के उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर में शिशु जन्म एवं मृत्यु का अनुपात 1:.09 है, मध्यम स्तर में यह अनुपात 1:.30 है जबकि निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर में यह 1:.38 है ।

इस प्रकार तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि दोनों सम्प्रदायों के उत्तरदाताओं का आर्थिक स्तर पर्याप्त निम्न है, जिसके कारण दोनों समुदायों में शिशु मृत्यु-दर अधिक है । दोनों ही सम्प्रदायों में सामाजिक-आर्थिक स्तर शिशु मृत्यु को लगभग समान रूप से प्रभावित करता है ।

प्रस्तुत अध्याय में शिशु मृत्यु-दर से सम्बंधित कुछ ऐसे सामाजिक-सांस्कृतिक तत्वों का सूक्ष्म रूप से विश्लेषण किया गया है जिनके कारण शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें पैदा होती है । साथ ही, वर्तमान अध्ययन से प्राप्त आँकड़ों से धर्म के आधार पर, परिवार के स्वरूप के आधार

पर, जाति के आधार पर, माता-पिता की शिक्षा के आधार पर, पिता के व्यवसाय के आधार पर, भू-स्वामित्व के आधार पर, विवाह के समय आयु व प्रसव के समय सहायक के साथ ही, नाल काटने के यंत्र एवं जन्म के स्थान के साथ ही साथ, प्रसव के समय माँ की आयु के अतिरिक्त बच्चे के लिंग एवं सामाजिक-आर्थिक स्थिति के आधार पर शिशु मृत्यु सम्बन्धी विभिन्नतायें की विवेचना की गई है ।

षष्टम अध्याय

विगत अध्याय में शिशु मृत्यु से सम्बंधित कुछ ऐसे सामाजिक-सांस्कृतिक तत्वों का सूक्ष्मरूप से विश्लेषण किया गया जिनके कारण शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें उत्पन्न होती है । साथ ही, ऐसे विभिन्न सामाजिक कारकों की विवेचना भी की गई जो शिशु मृत्यु-दर को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं । प्रस्तुत अध्याय में शिशु मृत्यु के उन कारणों का सूक्ष्म रूप से विश्लेषण किया जायेगा जिनके कारण शिशु मृत्यु होती है ।

मृत्यु क्या है ? क्यों होती है ? इसके पीछे किसका हाथ है इत्यादि का पता करने के लिये मानव अपनी प्रारम्भिक अवस्था से ही प्रयास कर रहा है । इसीलिए औषधि विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान का विकास हुआ है । जहाँ नित्य नये-नये तरीकों का अनुसंधान हो रहा है, उन कारणों का पता लगाया जा रहा है जिनके कारण मृत्यु होती है ।

एक मानव की मृत्यु अनेक जटिलताओं एवं अन्तर्सम्बन्धी कारकों का परिणाम है । इन कारकों का स्तर, स्थानीय एवं वैयक्तिक से लेकर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय भी हो सकता है[1] । अनेकानेक कारणों की उपस्थिति में दो कारण प्रमुख माने जा सकते हैं -(1) निर्धनता तथा (2) स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव । अन्य अनेक कारण भी हो सकते हैं ।

जनांकिकी मानव जीवन का संख्यात्मक पहलू है, अतः मृत्यु के केवल उन कारणों की व्याख्या कर पाता है जिनका सम्बन्ध जन्म मृत्यु रजिस्ट्रेशन कार्यालय से जुड़ा होता है । आंकड़ों की उपलब्धता न होने पर मृत्यु के कारणों की जानकारी नहीं हो पाती है । कभी-कभी ऐसी मृत्यु होती है जो कई कारणों से उलझी हुई होती है, जैसे अत्यधिक शराब का सेवन करने के बाद नाले में गिर जाना, गिरने से रीढ़ की हड्डी का टूट जाना और उसके बाद मृत्यु । अब यहाँ पर यह बताना मुश्किल हो जाता है कि मृत्यु का वास्तविक कारण क्या है । कभी-कभी ऐसा होता है कि शिशु को खसरा निकल आता है और उसी समय न्यूमोनिया हो जाता है परिणाम स्वरूप बच्चे की मृत्यु हो जाती है । ऐसी स्थितियों में मृत्यु को वास्तविक कारण की जानकारी कर पाना एक समस्या बन जाती है । कुछ कारण तो ऐसे होते हैं जो सुलझाये ही नहीं सुलझते क्योंकि मृत्यु का मूल कारण बहुत गहराई में छिपा होता है । जैसे -बच्चा बीमार है, बीमारी की अवस्था में नर्स ने बच्चे की देखभाल ठीक से नहीं की, डाक्टर को दिखाना है किन्तु वह दूर है, माँ परेशान है

---

(1) टिटमस, रिचार्ड, एम0 (1959), वर्थ पावर्टी एण्ड वेल्थ, लन्दन, पेज 25 ।

बच्चे को डाक्टर के पास तक नहीं ले जा पाती । जहाँ पर वह रहती है वहाँ की परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं है, बच्चे की मृत्यु हो जाती है । ऐसी स्थितियों में पता करना मुश्किल हो जाता है कि मृत्यु का कारण किसे माना जाय । नर्स को, माँ को, डाक्टर एवं उसकी दूरी को[2] । ऐसे में कारणों की खोज अनुसंधान कर्ता को उलझा देती है अतः जनांकिकी वेत्ताओं ने मृत्यु के उन्हीं कारणों पर प्रकाश डाला है जो प्रत्यक्ष है, जिनका विवरण निम्नांकित है ।

(1) **बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानियाँ :**

भारत में हर साल लगभग 2 करोड़ 20 लाख बच्चे पैदा होते हैं हर 10 बच्चों में से एक शिशु अपना प्रथम जन्म दिन नहीं मना पाता क्योंकि बच्चा किसी न किसी जानलेवा बीमारी का शिकार हो जाता है । बीमारियां फैलने के अनेक कारण हो सकते हैं । ये कारण सामाजिक, आर्थिक, जलवायु सम्बन्धी, संक्रामक एवं साँस्कृतिक आदि हैं ।

एक वर्ष से कम आयु के बच्चों की मृत्यु जिन कारणों से होती है वे विशेषकर निम्नलिखित हैं ।

(1) गर्भ के अन्दर हारमोनलअसंतुलन होने से भ्रूण का विकास क्रम रूक जाता है बच्चे अल्प विकसित पैदा होते हैं जिससे शिशुओं को बचाना मुश्किल हो जाता है ।

(2) जन्म के साथ बच्चे में घाव का होना भी शिशु मृत्यु का कारण हो सकता है । कुछ घाव बच्चों में जन्म-जात नहीं होते बल्कि कुछ कारणों से हो जाते हैं जिनका विवरण निम्नांकित है ।

(अ) यदि महिला के गर्भाशय का मुंह छोटा होता है तो बच्चे को चोट लग सकती है ।

(ब) यदि प्रसव कठिनाई से होता है तो बच्चे को चोट लग सकती है ।

(स) अस्वाभाविक प्रसव से शिशु को चोट लग सकती है ।

(द) शल्य यंत्रों से शिशु को चोट आ सकती है ।

(च) हाथ के बल से प्रसव कराने पर शिशु को चोट आ सकती है ।

यदि लड़कियों का विवाह तथा प्रसव अल्प आयु में होता है तो उक्त परिस्थितियों की सम्भावना अधिक रहती है ।

(3) जन्मजात अपंगता का कारण गर्भ धारण के समय अनावश्यक दवाओं का प्रयोग माना जाता है । बार-बार एक्स-रे कराना भी जन्मजात अपंगता पैदा करता है । इसके कारण भी शिशु

---

(2) प्रेसैट, रोनाल्ड, (1979), डेमोग्राफिक एनालिसिस, लन्दन, पेज 82 ।

की मृत्यु सम्भावित रहती है ।

(4) शिशुओं की मृत्यु का एक प्रमुख कारण हीमोलिटिक रोगों का होना भी है । इसमें लाल रक्त कटिकायें टूट जाती हैं जिसकी वजह से ब्लड कैंसर, न्यूक्रिमीनिया, कैल्सियम की कमी का हो जाना, आर0एच0 फैक्टर का न मिलना आदि सम्भव है जिससे शिशु की मृत्यु हो सकती है।

(5) बच्चे की नाल की स्थिति के कारण भी शिशुओं की मृत्यु हो जाती है । कभी-कभी शिशु के गले में नाल उलझ जाता है और कसाव की वजह से शिशु की मृत्यु हो जाती है । नाल कटने में अधिक रक्तस्राव हो जाना भी शिशु मृत्यु का कारण हो सकता है । यदि साफ-सुथरे ब्लेड, कैंची आदि यंत्रों से नाल न काटा जाय तो जानलेवा बीमारी टिटनेस हो सकती है जो मृत्यु का बहुत बड़ा कारण है ।

(6) माँ के स्तन का गंदा होना, दूध की सफाई न होना, जिस साधन से दूध पिलाया जा रहा है उसका स्वच्छ न होना, निपुल का साफ न होना, आंत्र शोथ एवं अतिसार रोग को जन्म देता है जिससे शिशु मृत्यु सम्भव है ।

(7) श्वसनांगों में रोग संक्रमण से शिशु को तमाम तरह के रोग हो सकते हैं । यह रोग वाइरल एवं वैक्टीरियल संक्रामकता से होते हैं । कभी-कभी माँ की बीमारियाँ बच्चों में आ जाती हैं बच्चे में प्रतिरोधक क्षमता कम होने से वह वाइरल एवं वैक्टीरियल संक्रामकता को रोक नहीं पाता जिससे काली खांसी हो जाती है, न्यूमोनिया हो सकता है, खसरा हो जाता है अथवा तीव्र ज्वर आ सकता है जो कि प्राण-घातक है ।

(2) <u>कुपोषण :</u>

शिशु की अस्वस्थता एवं मृत्यु का एक बड़ा कारण कुपोषण है । कुपोषण दक्षिण एशिया में ज्यादा पाया जाता है । भारत का ग्रामीण अंचल भी ज्यादातर कुपोषण का शिकार है । कुपोषण संतुलित आहार न मिलना है, भारत सहित अन्य विकासशील देशों में 5 वर्ष से कम आयु के बच्चे ज्यादातर कुपोषण के कारण मर जाते हैं । प्रत्येक समाज के उस भाग में जिसमें आहार की पूर्ति सबसे कम होती है तथा जिसे हम निर्धन वर्ग कहते है, निरन्तर जनसंख्या बृद्धि के कारण कुपोषण की स्थिति देखी गयी है[3]।

---

(3) चन्द्रशेखर, सी0 (1959), सर्वे आफ दि स्टेट्स आफ डेमोग्राफी इन इण्डिया, दि स्टडी आफ पापुलेशन, शिकागो, शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस, पेज 249 ।

शिशु में कुपोषण के कई कारण हो सकते हैं ।

(अ) बच्चे को माँ का दूध कम मिलने के कारण शिशु में रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है ।

(ब) बाहरी दूध असंतुलित मात्रा में देने से शिशु कुपोषण का शिकार हो जाता है ।

(स) पोषक तत्वों के साथ दूध की पर्याप्त मात्रा न देने से शिशु कमजोर हो जाता है ।

(द) छः महीने में अन्नप्रासन की क्रिया के साथ लवण तथा अन्य पोषक तत्वों (प्रोटीन आदि) के अभाव में कुपोषणता बढ़ जाती है ।

कुपोषण मनुष्य जनित है जिसका कारण दरिद्रता, भोजन सम्बन्धी आदतें, धार्मिक एवं सामाजिक रूढ़िवादिता, अज्ञानता, दुर्व्यसन, गन्दगी आदि होती है ।

(3) पर्यावरणीय परिस्थितियाँ :

पर्यावरण सम्बन्धी परिस्थितियों के अन्तर्गत जनसंख्या बृद्धि, आवास व्यवस्था, पेयजल, वायु, मल विसर्जन, स्वच्छता सम्बन्धी व्यवस्था सम्मिलित होती है ।

जनसंख्या की निरन्तर बृद्धि ने भी पर्यावरण को दूषित कर दिया है, न बैठने-रहने की जगह, न चलने-फिरने की गुंजाइस । भूमि पर बढ़ती जनसंख्या का दबाव, बाढ़ जैसी स्थितियां, भूमि का कटाव, वृक्षो की कटाई आदि सभी कारक प्रदूषण की स्थिति उत्पन्न करते हैं ।

भूमि प्रदूषण के कारक कृषि के उन्नत तरीके भी हैं । कृषि के विकास, विस्तार के लिये वैज्ञानिक विधियों से फसलें ली जा रही हैं । कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिये उर्वरकों और फसलों की सुरक्षा के लिये कीट नाशक उपयोग में लाये जाते हैं । इनकी कृषकों को वाँछित जानकारी नहीं होती अतः असंतुलित प्रयोग बढ़ता है फलतः खाद्य-पदार्थ शुद्ध नहीं रह पाते । ऐसे पदार्थ भोजन में शामिल होने से स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं ।

वनों का कटाव प्रदूषण को और बढ़ा रहा है । कम जमीन में अधिक लोगों का निवास और हरियाली का दूर-दूर तक न होना प्रदूषण बढ़ाने में सहायक होता है । इनके अतिरिक्त प्राकृतिक विपदायें, लगातार अणु परीक्षण, औद्योगिक प्रसार, नगरीकरण आदि प्रदूषण को जन्म देते हैं ।

औद्योगिक नगरों में अधिकतर कार्बनडाई आक्साइड हवायें अधिक मात्रा में रहती हैं । प्रदूषित पर्यावरण बीमारी का घर है । आवास की गन्दी दशायें, वायु प्रदूषण, गन्दे पानी की आपूर्ति आदि ने नगरीय जीवन में अंधापन, टी0बी0, हैजा, काली खाँसी, डिफ्थीरिया, मलेरिया आदि

बीमारियों को विकसित कर दिया है । मल त्याग की अनुचित व्यवस्था संक्रामक रोगों जैसे- हैजा, टी0बी0, पेट के कीड़े, डायरिया आदि को बढ़ाने में सहायक होती है ।

(4) उच्च स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव :

शिशु स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव शिशु मृत्यु का एक बड़ा कारण है । भारत में हर वर्ष लगभग 2 करोड़ 20 लाख बच्चे पैदा होते हैं जिसमें से 10 प्रतिशत शिशु अपनी प्रथम वर्षगांठ नहीं मना पाते क्योंकि वे किसी न किसी बीमारी से ग्रस्त हो जाते हैं इनमें से आधे बच्चों को स्वास्थ्य सुविधाओं में प्रगति करके मृत्यु से बचाया जा सकता है । शिशुओं को छः जानलेवा बीमारियों -टिटनेस, पोलियो, डिफ्थीरिया, काली-खांसी, खसरा और तपेदिक से बचने के लिये भारत सरकार ने मुफ्त टीकाकरण की व्यवस्था की है । किन्तु सरकार की नीति का क्रियान्वयन ठीक से न होने के कारण शिशुओं के टीके नहीं लग पाते, गर्भावस्था में माँ के स्वास्थ्य केन्द्र पर न पहुंच पाने, टीकाकरण की उपयोगिता का ज्ञान न होने एवं अशिक्षा के कारणइनका प्रयोग नहीं किया जाता । इसके अतिरिक्त,अन्य बीमारियों के इलाज के लिये उत्तम स्वास्थ्य केन्द्र, शिशु कल्याण केन्द्र के अभाव आदि शिशु मृत्यु-दर को बढ़ावा देते हैं ।

(5) सामाजिक-आर्थिक कारक :

शिशुओं की मृत्यु के कारणों में सामाजिक एवं आर्थिक कारण प्रमुख हैं । यदि समाज की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है तो वहाँ निर्धनता, बेरोजगारी, अशिक्षा, समुचित इलाज का अभाव रहेगा । ऐसी स्थिति में शिशु को जीवित रख पाना एक कठिन कार्य होता है । दूसरी तरफ, हमारे जैसे समाज में स्त्रियों की स्थिति ऐसी है कि वे स्वयं कोई निर्णय नहीं ले सकतीं । साथ ही, उनके पास गृहस्थी के इतने कार्य होते हैं कि वह अपने लिये समय नहीं निकाल पातीं । गर्भधारण की अवस्था में अधिकतर महिलायें राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम के अन्तर्गत बंहुत कम टीके लगवा पाती हैं । लिंग परहेज के कारण बच्ची के पैदा होने पर उसकी देखभाल ठीक से नहीं करतीं । अशिक्षा के कारण अनपढ़ दाइयों से प्रसव कराया जाता है जिससे शिशु के जन्म लेते ही मर जाने की सम्भावना अधिक रहती है । अज्ञानता एवं गन्दगी के वातावरण में शिशुओं का जीवन सुरक्षित नहीं है ।

(6) दुर्घटनायें :

आज के आधुनिक परिवेश में मृत्यु का कारण दुर्घटनायें भी हैं जो मृत्यु को प्रभावित

करने वाले कारकों में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं । इनका विवरण निम्न है -

(अ) दूध पिलाते समय यह ध्यान न देना कि बच्चा दूध निगल गया है कि नहीं । बच्चा दूध निगलने में देर कर रहा हो और दूध बराबर मुख में डाला जा रहा हो तो ऐसी स्थिति में असावधानी से शिशु का गला घुट सकता है ।

(ब) बच्चे को बिस्तर पर लिटा कर दूर चले जाने पर बच्चा घूम सकता है उसकी नाक नीचे बिस्तर पर दब सकती है, इस असावधानी से शिशु की मृत्यु सम्भव है ।

(स) चारपाई से नीचे गिर जाने से शिशु की मृत्यु सम्भव है ।

(द) बच्चे का घिसटते-घिसटते पानी इत्यादि के टब के पास चले जाने से मृत्यु हो सकती है ।

(च) अनाज इत्यादि का टुकड़ा गले में फंस जाने से मृत्यु सम्भव है ।

उक्त सभी सम्भावनायें दुर्घटनाओं से सम्बंधित हैं ।

प्रस्तुत अध्ययन में तथ्य संकलन के समय शिशु मृत्यु के जो प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष कारण ज्ञात हो सके उन्हें अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से छः भागों में विभक्त करके निम्न सारणी में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 6.1

शिशु मृत्यु के विविध कारण

क्र0सं0	शिशु मृत्यु के कारण	मृत शिशुओं की संख्या	प्रतिशत
1-	बीमारी/प्रसव सम्बंधी असावधानी	92	38
2-	कुपोषण	52	22
3-	पर्यावरणीय परिस्थितियां	22	09
4-	उच्च स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव	35	14
5-	सामाजिक-आर्थिक कारक	24	10
6-	दुर्घटनायें	16	07
	योग:-	241	100

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक (38 प्रतिशत) शिशुओं की मृत्यु बीमारी एवं प्रसव सम्बंधी असावधानियों के कारण हुई तथा 22 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु

VARIOUS CAUSES OF INFANT DEATH

CAUSES OF INFANT DEATH
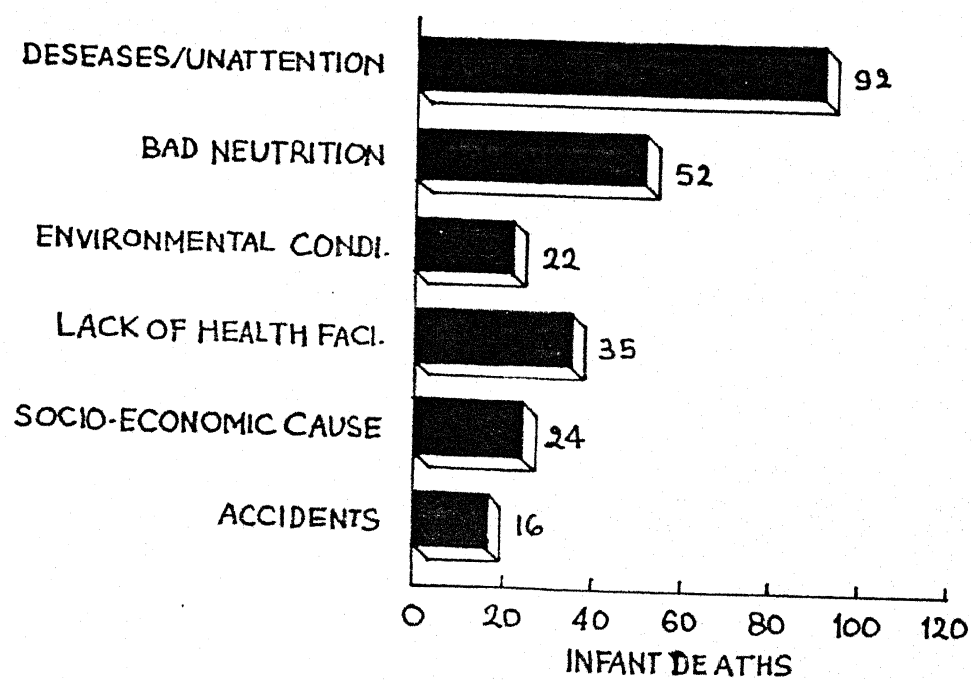
TABLE 6.1

कुपोषण से हो गयी । पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण मरने वाले शिशुओं की संख्या 9 प्रतिशत एवं उच्चस्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण मरने वाले शिशुओं का प्रतिशत 14 पायागया इसी प्रकार, 10 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु सामाजिक-आर्थिक कारकों के कारण हुई साथ ही, 7 प्रतिशत शिशु दुर्घटनाओं से मृत हो गये ।

इस प्रकार तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक शिशुओं की मृत्यु बीमारी एवं प्रसव सम्बन्धी असावधानियों के कारण होती है । इसके साथ ही साथ, कुपोषण से मरने वाले शिशुओं की संख्या भी कम नहीं है । इस प्रकार लगभग 50 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु उक्त दो कारणों से हो जाती है जबकि शेष 50 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु अन्य विभिन्न कारणों से होती है।

शिशु मृत्यु के विभिन्न कारणों एवं उनसे होने वाली मृत्यु को ज्ञात करने के साथ ही साथ हमारा उद्देश्य कारणों के आधार पर शिशु मृत्यु के दोनों सम्प्रदायों -हिन्दू तथा मुस्लिम- में तुलनात्मक स्थिति को प्रस्तुत करना है । अतः दोनो सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु के कारणों के आधार पर मृत्यु सम्बंधी तथ्य एकत्रित किये गये हैं जिन्हें निम्न सारणी में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 6.2

विभिन्न सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु के कारण

क्र0सं0	शिशु मृत्यु के कारण	सम्प्रदाय				योग	प्रतिशत
		हिन्दू		मुस्लिम			
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत		
1-	बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी	37 (40)	(41)	55 (60)	(37)	92 (100)	(38)
2-	कुपोषण	22 (42)	(24)	30 (58)	(20)	52 (100)	(22)
3-	पर्यावरणीय परिस्थितियाँ	07 (32)	(08)	15 (68)	(10)	22 (100)	(09)
4-	उच्च स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव	14 (40)	(15)	21 (60)	(14)	35 (100)	(14)
5-	सामाजिक-आर्थिक कारक	06 (25)	(07)	18 (75)	(12)	24 (100)	(10)
6-	दुर्घटनायें	05 (31)	(05)	11 (69)	(07)	16 (100)	(07)
	योगः-	91 38	(100)	150 (62)	(100)	241 (100)	(100)

टिप्पणी :- कोष्ठक में दिये गये अंक सम्बंधित प्रतिशत को दर्शाते हैं ।

VARIOUS CAUSES OF INFANT DEATH
IN BOTH COMMUNITIES
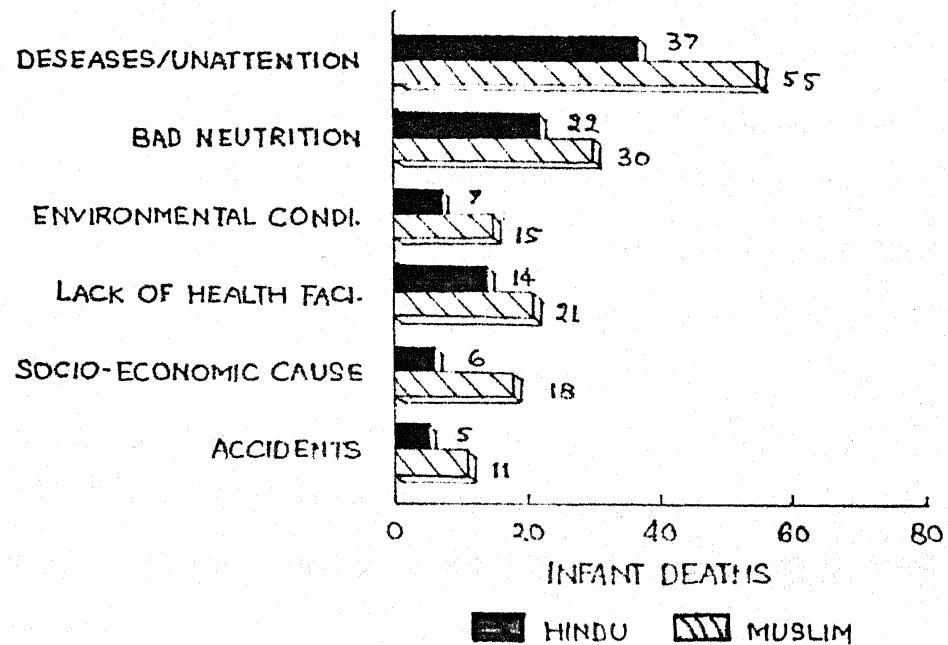
TABLE 6.2

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि हिन्दू समुदाय में बीमारी एवं प्रसव सम्बन्धी असावधानियों के कारण 41 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु होती है । तथा मुस्लिम में इसी कारण से 37 प्रतिशत शिशु मर जात हैं । कुपोषण के कारण हिन्दू एवं मुस्लिम समुदाय में शिशु मृत्यु क्रमशः 24 एवं 20 प्रतिशत रही । साथ ही, पर्यावरणीय परिस्थितियों एवं उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के कारण हिन्दू समुदाय में मरने वाले शिशुओं की संख्या क्रमशः 8 एवं 15 प्रतिशत रही तथा मुस्लिम समुदाय में इन्हीं कारणों से मृत शिशुओं की संख्या क्रमशः 10 एवं 14 प्रतिशत पायी गई । इसके अतिरिक्त, सामाजिक-आर्थिक कारकों एवं दुर्घटनाओं के कारण हिन्दू वर्ग में क्रमशः 7 एवं 5 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु हो गयी जबकि इसके विपरीत मुस्लिम समुदाय में इन्हीं कारणों से मृत शिशुओं की संख्या 14 एवं 12 प्रतिशत प्राप्त हुई ।

सारणी से यह भी स्पष्ट होता है कि बीमारी एवं प्रसव सम्बन्धी असावधानियों के कारण कुल 92 शिशुओं की मृत्यु होती है जो कि सम्पूर्ण मृत्यु का 38 प्रतिशत है जिसमें से 40 प्रतिशत हिन्दू समुदाय के एवं 60 प्रतिशत मुस्लिम समुदाय के हैं । कुपोषण से कुल मृत शिशुओं की संख्या 52 है जिसमें से 42 प्रतिशत शिशु हिन्दू समुदाय से एवं 38 प्रतिशत शिशु मुस्लिम समुदाय से सम्बंधित हैं । इसी प्रकार, पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण कुल मृत शिशुओं की संख्या 22 है जिसमें से 32 प्रतिशत शिशु हिन्दू समुदाय तथा 68 प्रतिशत मुस्लिम समुदाय के हैं साथ ही, उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण कुल मृत शिशुओं की संख्या 35 है जो कि कुल मृत्यु का 14 प्रतिशत है जिसमें से 40 प्रतिशत शिशु हिन्दू समुदाय एवं 60 प्रतिशत शिशु मुस्लिम समुदाय के हैं ।

इसके अतिरक्त, सामाजिक-आर्थिक कारकों के कारण कुल 24 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 25 प्रतिशत शिशु हिन्दू समुदाय एवं 75 प्रतिशत शिशु मुस्लिम समुदाय के सम्मिलित थे तथा दुर्घटनाओं से कुल 16 शिशु मृत हुये जिसमें से 31 प्रतिशत हिन्दू समुदाय के एवं 69 प्रतिशत शिशु मुस्लिम समुदाय के पाये गये ।

विभिन्न कारणों के आधार पर दोनों सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु को ज्ञात करने के पश्चात इन कारणों का नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु पर प्रभाव देखने के लिये सम्बंधित तथ्य एकत्रित किये गये हैं, जिनका विवरण निम्न सारणी में प्रस्तुत है ।

सारणी 6.3

शिशु मृत्यु के कारणों के अनुसार नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु का विवरण

क्र0सं0	शिशु मृत्यु के कारण	नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु संख्या	प्रतिशत	पश्च-नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु संख्या	प्रतिशत	योग	प्रतिशत
1-	बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी	71 (77)	(67)	21 (23)	(16)	92 (100)	(38)
2-	कुपोषण	12 (23)	(11)	40 (77)	(30)	52 (100)	(22)
3-	पर्यावरणीय परिस्थितियाँ	07 (32)	(07)	15 (68)	(11)	22 (100)	(09)
4-	उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव	10 (29)	(09)	25 (71)	(18)	35 (100)	(14)
5-	सामाजिक-आर्थिक कारक	04 (17)	(04)	20 (83)	(15)	24 (100)	(10)
6-	दुर्घटनायें	02 (12)	(02)	14 (88)	(10)	16 (100)	(07)
	योगः-	106 (44)	(100)	135 (56)	(100)	241 (100)	(100)

टिप्पणीः- कोष्ठक में दिये गये अंक सम्बंधित प्रतिशत को दर्शाते हैं ।

सारणी से स्पष्ट होता है कि बीमारी एवं प्रसव सम्बन्धी असावधानी के कारण कुल 92 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 77 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था में एवं 23 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था में मृत होते हैं तथा कुपोषण के कारण मरने वाले शिशुओं की कुल संख्या 52 है जिसमे से 23 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था से व 77 प्रतिशत शिशु पश्च-नवजात अवस्था से सम्बंधित है । पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण मरने वाले शिशुओं की कुल संख्या 22 है जिसमें से नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्था में मरने वाले शिशुओं का प्रतिशत क्रमशः 32 एवं 68 पाया

NEONATAL & POST-NEONATAL DEATHS
ACCORDING TO CAUSES OF INFANT DEATHS
CAUSES OF INFANT DEATH
DESEASES/UNATTENTION
71
21
BAD NEUTRITION
12
40
ENVIRONMENTAL CONDI.
7
15
LACK OF HEALTH FACI.
10
25
SOCIO-ECONOMIC CAUSE
4
20
ACCIDENTS
2
14
0
20
40
60
80
100
INFANT DEATHS
NEONATAL
POST-NEONATAL
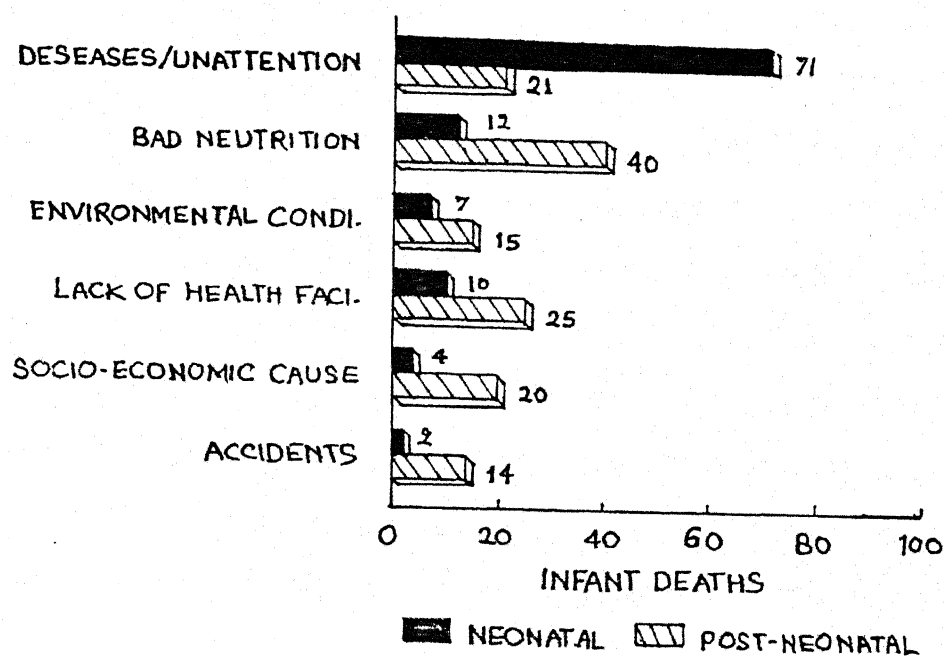
TABLE 6.3

गया । साथ ही, उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण कुल 35 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 29 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था में व 71 प्रतिशत शिशु पश्च-नवजात अवस्था में मृत हो गये । इसी प्रकार, सामाजिक-आर्थिक कारकों के प्रभाव के कारण कुल 24 शिशु मृत हुये जिसमें से 17 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था व 83 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था से सम्बंधित थे । इसके अतिरिक्त, दुर्घटनाओं से कुल 16 शिशु मृत हुये जिसमें से नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्था में मरने वाले शिशुओं की संख्या क्रमशः 12 एवं 88 प्रतिशत पायी गई ।

साथ ही, अवलोकन से यह भी ज्ञात होता है कि बीमारी एवं प्रसव सम्बन्धी असावधानी के कारण 67 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था में मृत हो जाते हैं जबकि 16 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में होती है । कुपोषण के कारण नवजात अवस्था में कुल मृत्यु का 11 प्रतिशत की मृत्यु होती है तथा पश्च-नवजात अवस्था में कुल मृत्यु का 30 प्रतिशत की मृत्यु होती है । इसी प्रकार, पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण 7 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में व 11 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में होती है । साथ ही, उच्च स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण 9 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में व 18 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में होती है । इसके अतिरिक्त, सामाजिक-आर्थिक कारकों के कारण नवजात अवस्था में 4 प्रतिशत की मृत्यु एवं 15 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में होती है । तथा दुर्घटनाओं के कारण नवजात अवस्था में 2 प्रतिशत की मृत्यु एवं 10 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हो जाती है ।

इस प्रकार नवजात अवस्था में कुल 106 शिशुओं की मृत्यु होती है जो कि सम्पूर्ण मृत्यु का 44 प्रतिशत है तथा पश्च-नवजात अवस्था में कुल मृत शिशुओं की संख्या 135 है जो कि कुल मृत्यु का 56 प्रतिशत पायी गई ।

शिशु मृत्यु के विभिन्न कारणों के अनुसार नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु को जानने के पश्चात शिशु मृत्यु के कारणों को विभिन्न सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्थाओं में भी जानने का प्रयास किया गया है जिसका विवरण निम्न सारणी में प्रस्तुत किया गया है ।

सारणी 6.4

विभिन्न सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु के कारणों के अनुसार नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु का विवरण

क्र0सं0	शिशु मृत्यु के कारण	सम्प्रदाय												
		हिन्दू						मुस्लिम						
		नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु सख्या	प्रतिशत	पश्च-नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु सं0	प्रतिशत	योग	प्रतिशत	नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु सख्या	प्रतिशत	पश्च-नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु सं0	प्रतिशत	योग	प्रतिशत	कुल योग
1-	बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी	30 (81)	(73)	07 (19)	(14)	37 (100)	(41)	41 (71)	(63)	14 (25)	(16)	55 (100)	(37)	92
2-	कुपोषण	04 (18)	(10)	18 (82)	(36)	22 (100)	(24)	08 (27)	(12)	22 (73)	(26)	30 (100)	(20)	52
3-	पर्यावरणीय परिस्थितियाँ	02 (29)	(05)	05 (71)	(10)	07 (100)	(08)	05 (33)	(08)	10 (67)	(12)	15 (100)	(10)	22
4-	उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव	05 (36)	(12)	09 (64)	(18)	14 (100)	(15)	05 (24)	(08)	16 (76)	(19)	21 (100)	(14)	35
5-	सामाजिक-आर्थिक कारक	-	-	06 (100)	(12)	06 (100)	(07)	04 (22)	(06)	14 (78)	(16)	18 (100)	(12)	24
6-	दुर्घटनायें	-	-	05 (100)	(10)	05 (100)	(05)	02 (18)	(03)	09 (82)	(11)	11 (100)	(07)	16
	योग:-	41 (45)	(100)	50 (55)	(100)	91 (100)	(100)	65 (43)	(100)	85 (57)	(100)	150 (100)	(100)	241

टिप्पणी:- कोष्ठक में दिये गये अंक सम्बंधित प्रतिशत को दर्शाते हैं ।

NEO & POST-NEO DEATHS IN BOTH COMMUNITY
ACCORDING TO CAUSES OF INFANT DEATHS

CAUSES OF INFANT DEATH
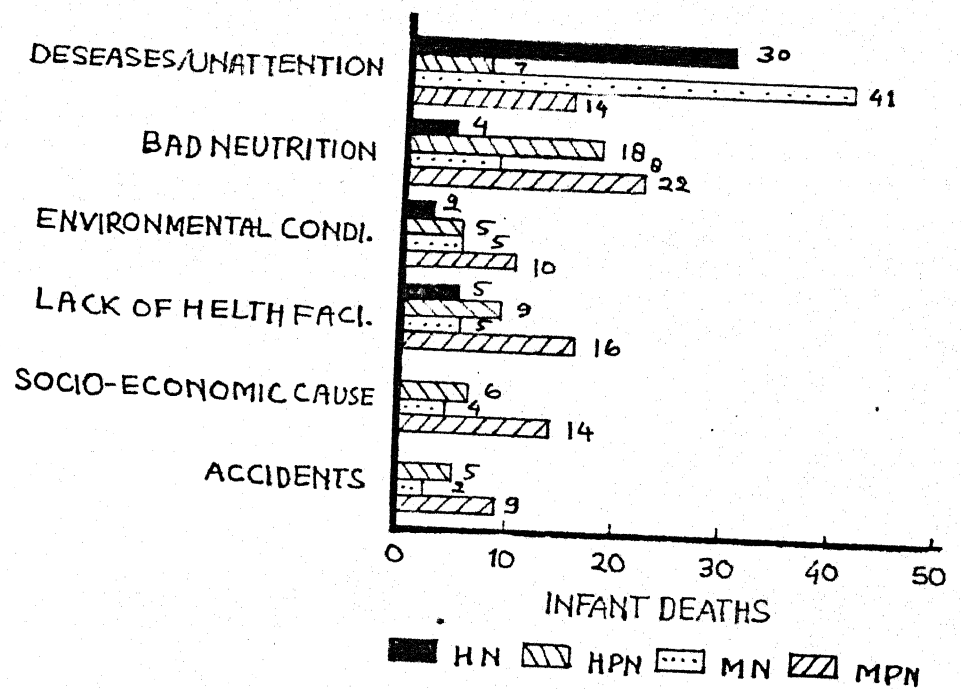
TABLE 6.4

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि बीमारी एवं प्रसव सम्बन्धी असावधानियों के कारण हिन्दू सम्प्रदाय में कुल 37 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 81 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था में एवं 19 प्रतिशत शिशु पश्च-नवजात अवस्था में मृत हो जाते हैं वहीं मुस्लिम समुदाय में इसी कारण से कुल 55 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 75 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था में एवं 25 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में होती है । कुपोषण के कारण हिन्दू समुदाय के कुल 22 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 18 प्रतिशत नवजात एवं 82 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था से सम्बंधित हैं जबकि मुस्लिम समुदाय में इसी कारण कुल 30 शिशु मृत होते हैं जिसमें कि नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्था में मरने वाले कुल शिशुओं की संख्या क्रमशः 27 एवं 73 प्रतिशत पायी गई । इसी प्रकार पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण हिन्दू समुदाय में 7 शिशु मृत होते हैं जिसमें से नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्था में मरने वाले शिशुओं की संख्या क्रमशः29 एवं 71 प्रतिशत रही वहीं मुस्लिम समुदाय में इन्हीं कारणों से 15 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 33 प्रतिशत नवजात अवस्था में व 67 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था में मृत हुये । इसी क्रम में, उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण हिन्दू समुदाय में कुल 14 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 36 प्रतिशत नवजात अवस्था व 64 प्रतिशत शिशु पश्च-नवजात अवस्था से सम्बंधित थे तथा मुस्लिम समुदाय में कुल 21 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 24 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था एवं 76 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था से सम्बंधित थे ।

इसके अतिरिक्त सामाजिक-आर्थिक कारकों के प्रभाव के कारण हिन्दू समुदाय में कुल 6 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से सभी शिशुओं की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हो गई जबकि मुस्लिम समुदाय में कुल 18 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 22 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था में व 78 प्रतिशत शिशु पश्च-नवजात अवस्था में मृत हो गये । साथ ही, दुर्घटनाओं के कारण हिन्दू समुदाय में कुल 5 शिशु मृत हुये जिसमें से सभी की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुई तथा मुस्लिम समुदाय में कुल 11 की मृत्यु हुई जिसमें से 18 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में व 82 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुई ।

इस प्रकार हिन्दू समुदाय में उपरोक्त सभी कारणों के कारण कुल 91 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 45 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में एवं 55 प्रतिशत की पश्च-नवजात अवस्था में मृत्यु हुई तथा मुस्लिम समुदाय में कुल 150 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 43 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था में एवं 57 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था में मृत हुये ।

सारणी से यह भी स्पष्ट होता है कि बीमारी एवं प्रसव सम्बन्धी असावधानी के कारण हिन्दू समुदाय में 73 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था में मृत हुये तथा 14 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुयी वहीं मुस्लिम समुदाय में 63 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में हुई तथा 16 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुई ।

कुपोषण के कारण हिन्दुओं में 10 प्रतिशत नवजात अवस्था में व 36 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था में मृत्यु हुई वहीं मुस्लिम समुदाय में 12 प्रतिशत नवजात अवस्था में व 26 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था में मृत्यु हुई ।

इसी प्रकार, पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण हिन्दुओं में नवजात अवस्था में 5 प्रतिशत व पश्च-नवजात अवस्था में 10 प्रतिशत की मृत्यु हुई जबकि मुस्लिम समुदाय में 8 प्रतिशत नवजात व 12 प्रतिशत पश्च-नवजात मृत्यु हुई । इसी क्रम में, उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण हिन्दुओं में 12 प्रतिशत नवजात एवं 18 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था में मृत्यु हुई तथा मुसलमानों में नवजात शिशु मृत्यु 8 प्रतिशत व पश्च-नवजात शिशु मृत्यु 19 प्रतिशत हुई ।

इनके अतिरिक्त, सामाजिक-आर्थिक कारकों से हिन्दुओं में पश्च-नवजात अवस्था में 100 प्रतिशत की मृत्यु हुई तथा मुस्लिम समुदाय में नवज़ात अवस्था में 6 प्रतिशत व पश्च-नवजात अवस्था में 16 प्रतिशत मृत्यु पायी गई ।

साथ ही दुर्घटनाओं से पश्च-नवजात अवस्था में 100 प्रतिशत मृत्यु हुई तथा मुसलमानों में 3 प्रतिशत नवजात अवस्था में मृत्यु हुये तथा 11 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुई ।

शिशु मृत्यु के कारणों का अध्ययन करने से पता चलता है कि सर्वाधिक शिशु मृत्यु बीमारियों एवं प्रसव सम्बन्धी असावधानियों के कारण होती है, अतः यह जानने के लिये कि किन-किन रोगों से शिशु मृत्यु होती है विशेष रूप से किये गये अध्ययन के माध्यम से समझने का प्रयास किया गया है, जिनका विवरण निम्न सारणी में दिया गया है ।

सारणी 6.5

बीमारियों से मरने वाले नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु का विवरण

क्र0सं0	रोगों का नाम	नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु संख्या	प्रतिशत	पश्च-नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु संख्या	प्रतिशत	योग
1-	टिटनेस	29 (91)	(76)	03 (09)	(06)	32 (100)
2-	डिफ्थीरिया	04 (27)	(11)	11 (73)	(20)	15 (100)
3-	काली खाँसी	-	-	12 (100)	(22)	12 (100)
4-	डायरिया	03 (15)	(08)	17 (85)	(31)	20 (100)
5-	खसरा	02 (20)	(05)	08 (80)	(15)	10 (100)
6-	अन्य	-	-	03 (100)	(06)	03 (100)
	योगः-	38 (41)	(100)	54 (59)	(100)	92 (100)

टिप्पणीः- कोष्ठक में दिये गये अंक सम्बंधित प्रतिशत को दर्शाते हैं ।

सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि टिटनेस से मरने वाले कुल शिशुओं की संख्या 20 है जिसमें से 91 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था में 9 प्रतिशत शिशु पश्च-नवजात अवस्था में मृत हो जाते हैं तथा डिफ्थीरिया से कुल 15 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 27 प्रतिशत शिशु नवंजात एवं 73 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था से सम्बंधित हैं । इसी प्रकार, काली खाँसी से कुल 12 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से सभी शिशुओं की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में होती है इसके अतिरिक्त, डायरिया नामक बीमारी के कारण 20 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्था में मरने वाले शिशुओं का प्रतिशत क्रमशः 15 एवं 85 है । साथ ही,

NEO & POST-NEO DEATHS
ACCORDING TO VARIOUS DESEASES
INFANT DEATHS
40
30
20
10
0
29
3
4
11
12
3
17
2
8
3
TITNESS
DIPTHEREA
KALI KHANSI
DIARIA
KHASRA
OTHERS
CAUSES OF INFANT DEATH
NEONATAL
POST-NEONATAL
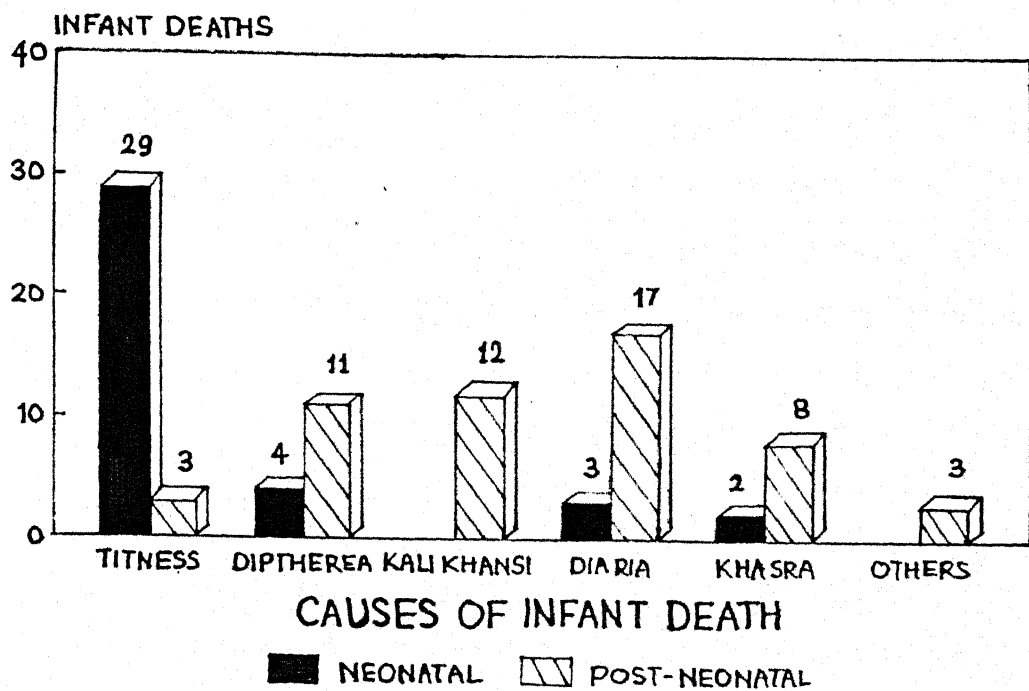
TABLE 6·5

खसरा से मरने वाले शिशुओं की संख्या 10 है जिसमें से 20 प्रतिशत शिशु नवजात अवस्था व 80 प्रतिशत शिशु पश्च-नवजात अवस्था में मृत हो गये तथा अन्य बीमारियों के द्वारा कुल 3 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से सभी शिशुओं की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुई ।

इस प्रकार विभिन्न रोगों के कारण कुल 92 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 41 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु नवजात अवस्था में एवं 59 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुई ।

सारणी के तथ्यों के विश्लेषण के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक मृत्यु टिटनेस नामक बीमारी से होती है । साथ ही, यह भी स्पष्ट है कि इस बीमारी से ज्यादातर शिशु मृत्यु नवजात अवस्था में ही हो जाती है इसका कारण सम्भवतः यह है कि सम्बंधित क्षेत्र में निरक्षरता अधिक एवं सामाजिक-आर्थिक स्तर अत्यधिक निम्न है शिक्षा की कमी के कारण जागरूकता का न होना एवं धन के अभाव के कारण ज्यादातर प्रसव अप्रशिक्षितदाइयों या परिवार के बड़ी-बुढ़ियों द्वारा व ज्यादातर घरों में कराये जाते हैं जहाँ स्वच्छता का अभाव, आधुनिक यंत्रों का प्रयोग न किया जाना, गन्दे व पुराने कपड़ों का प्रयोग किया जाता है व परम्परागत औजारों जैसे -हंसिया, खुर्पा, जंग लगा छूरा आदि का प्रयोग बे-हिचक किया जाता है जो कि इस जानलेवा बीमारी का कारण बनते हैं एवं शिशु मृत्यु-दर को बढ़ाने में योगदान देते हैं । इसके अतिरिक्त, डिफ्थीरिया, कालीखाँसी, खसरा आदि से होने वाली मृत्यु को भी टीका आदि लगवाकर रोका जा सकता है ।

सारणी के अवलोकन से यह भी स्पष्ट होता है कि विभिन्न रोगों से नवजात अवस्था में होने वाली कुल शिशु मृत्यु की संख्या 38 है (जो कि सम्पूर्ण बीमारियों से मरने वाली शिशु संख्या का 41 प्रतिशत है) जिसमें से 76 प्रतिशत की मृत्यु टिटनेस से, 11 प्रतिशत की मृत्यु डिफ्थीरिया से, 8 प्रतिशत की मृत्यु डायरिया एवं 5 प्रतिशत की मृत्यु खसरा नामक बीमारी से हो जाती है ।

इसी प्रकार पश्च-नवजात अवस्था में कुल शिशु मृत्यु संख्या 54 पायी गई (जो कि सम्पूर्ण बीमारियों से मरने वाली संख्या का 59 प्रतिशत है) जिसमें से 6 प्रतिशत की मृत्यु टिटनेस, 20 प्रतिशत डिफ्थीरिया, 22 प्रतिशत कालीखाँसी, 31 प्रतिशत डायरिया, 15 प्रतिशत खसरा एवं 6 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु अन्य कारणों से हो गई ।

विभिन्न रोगों के कारण नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्था में होने वाली शिशु मृत्यु को जानने के पश्चात शिशु मृत्यु के कारणों को विभिन्न सम्प्रदायों के नवजात तथा पश्च-नवजात अवस्थाओं में भी जानने का प्रयास किया गया है, सम्बंधित तथ्य निम्न सारणी में प्रस्तुत किये गये हैं ।

सारणी 6.6

विभिन्न सम्प्रदायों में बीमारियों से मरने वाले नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु का कारण

क्र0सं0	रोगों का नाम	सम्प्रदाय												
		हिन्दू						मुस्लिम						
		नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु सं0	प्रतिशत	पश्च-नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु संख्या	प्रतिशत	योग	प्रतिशत	नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु सं0	प्रतिशत	पश्च-नवजात अवस्था में शिशु मृत्यु संख्या	प्रतिशत	योग	प्रतिशत	कुल योग
1-	टिटनेस	11 (100)	(73)	-	-	11 (100)	(30)	18 (86)	(78)	03 (14)	(09)	21 (100)	(38)	32
2-	डिफ्थीरिया	02 (33)	(13)	04 (67)	(18)	06 (100)	(16)	02 (22)	(09)	07 (78)	(22)	09 (100)	(16)	15
3-	काली खाँसी	-	-	05 (100)	(23)	05 (100)	(14)	-	-	07 (100)	(22)	07 (100)	(13)	12
4-	डायरिया	01 (11)	(07)	08 (89)	(36)	09 (100)	(24)	02 (18)	(09)	09 (82)	(28)	11 (100)	(20)	20
5-	खसरा	01 (25)	(07)	03 (75)	(14)	04 (100)	(11)	01 (17)	(04)	05 (83)	(16)	06 (100)	(11)	10
6-	अन्य	-	-	02 (100)	(09)	02 (100)	(05)	-	-	01 (100)	(03)	01 (100)	(02)	03
	योग -	15 (41)	(10C)	22 (59)	(100)	**37** (100)	**(100)**	23 (42)	(100)	32 (58)	(100)	55 (100)	(10C)	92

टिप्पणी :- कोष्ठक में दिये गये अंक सम्बंधित प्रतिशत को दर्शाते हैं ।

NEO & POST-NEO DEATHS IN BOTH COMMUNITY
ACCORDING TO VARIOUS DESEASES

CAUSES OF INFANT DEATH
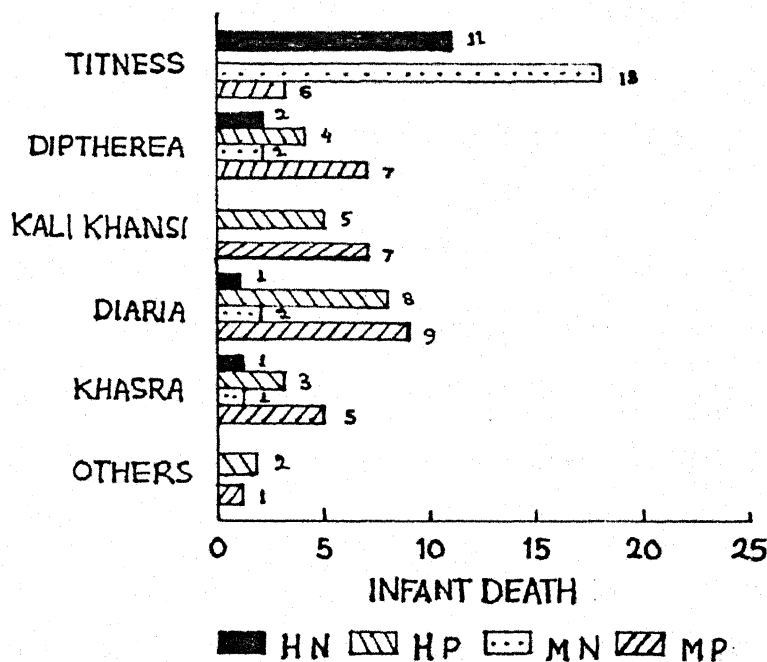
TABLE 6.6

सारणी के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि हिन्दू सम्प्रदाय में टिटनेस के कारण 11 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से सभी शिशुओं की मृत्यु नवजात अवस्था में हो जाती है तथा मुस्लिम समुदाय में इसी रोग के कारण कुल 21 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 86 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में व 14 प्रतिशत की पश्च-नवजात अवस्था में मृत्यु होती है । डिफ्थीरिया के कारण हिन्दू समुदाय में कुल 6 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 33 प्रतिशत नवजात अवस्था से व 67 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था से सम्बंधित हैं जबकि मुस्लिम समुदाय में इसी बीमारी से 9 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 22 प्रतिशत नवजात अवस्था से व 78 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था से सम्बंधित हैं । इसी प्रकार, काली खाँसी नामक बीमारी से हिन्दू समुदाय में कुल 5 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से सभी की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में होती है वहीं मुस्लिम समुदाय में इसी बीमारी के कारण 7 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से सभी की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हो गयी । साथ ही, डायरिया के कारण हिन्दू समुदाय में कुल 8 शिशु मृत होते हैं जिसमें से 11 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में 89 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हो गयी वहीं मुस्लिम समुदाय में इसी रोग के कारण 11 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 18 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में व 82 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था में मृत हो गये । इसी क्रम में, खसरा के कारण हिन्दू समुदाय में कुल 4 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 25 प्रतिशत नवजात अवस्था में व 75 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था मे मृत हो गये तथा मुस्लिम समुदाय में इसी कारण से कुल 6 शिशु मृत हुये जिसमें से 17 प्रतिशत नवजात अवस्था से व 83 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था से सम्बंधित थे । इसके अतिरिक्त, अन्य कारणों से हिन्दू समुदाय में कुल 2 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से सभी की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुई तथा मुस्लिम समुदाय में अन्य कारणों से 1 शिशु की मृत्यु हुई जिसकी मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हो गयी ।

इस प्रकार हिन्दू समुदाय में विभिन्न रोगों के कारण कुल 37 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 41 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में एवं 59 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुई तथा मुस्लिम समुदाय में कुल 55 शिशुओं की मृत्यु विभिन्न कारणों से हुई जिसमें से 42 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था एवं 58 प्रतिशत पश्च-नवजात अवस्था में मर गये ।

सारणी से यह भी स्पष्ट होता है कि हिन्दू समुदाय में टिटनेस के कारण मृत शिशुओं में 73 प्रतिशत नवजात अवस्था में तथा पश्च-नवजात अवस्था में मृत शिशुओं की संख्या शून्य है । जबकि मुस्लिम समुदाय में इसी कारण से नवजात अवस्था में 78 प्रतिशत की मृत्यु होती है व 9

प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में । इसी प्रकार, डिफ्थीरिया से हिन्दू समुदाय में नवजात अवस्था में होने वाली मृत्यु 13 प्रतिशत व पश्च-नवजात अवस्था में 18 प्रतिशत है । वहीं मुस्लिम समुदाय में 9 प्रतिशत की मृत्यु नवजात अवस्था में व 22 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में होती है । साथ ही, काली खाँसी से हिन्दू समुदाय में नवजात अवस्था में मृत्यु संख्या शून्य व पश्च-नवजात अवस्था में होने वाली मृत्यु 23 प्रतिशत पायी गई और मुस्लिम समुदाय में इसी बीमारी से नवजात अवस्था में मृत्यु संख्या शून्य व पश्च-नवजात अवस्था में 22 प्रतिशत की मृत्यु हुई । इसके अतिरिक्त, डायरिया से हिन्दू समुदाय में नवजात अवस्था में 7 प्रतिशत की मृत्यु हुई व पश्च-नवजात अवस्था में 36 प्रतिशत की मृत्यु हुई तथा मुस्लिम समुदाय में नवजात अवस्था में 9 प्रतिशत व पश्च-नवजात अवस्था में 28 प्रतिशत की मृत्यु हो गयी । इसी क्रम में, खसरा की बीमारी से हिन्दू समुदाय में 7 प्रतिशत की मृत्यु नवजात व 14 प्रतिशत की पश्च-नवजात अवस्था में हुई । जबकि मुस्लिम समुदाय में 4 प्रतिशत की नवजात व 16 प्रतिशत की पश्च-नवजात अवस्था में मृत्यु हुई । इसके पश्चात अन्य रोगों से हिन्दू समुदाय में 9 प्रतिशत की मृत्यु पश्च-नवजात अवस्था में हुई तथा मुस्लिम समुदाय में इसी कारण से 3 प्रतिशत की मृत्यु हो जाती है ।

शिशु मृत्यु की समस्या के निवारण के लिये सुझाव

प्रस्तुत अध्याय में शिशु मृत्यु के कारणों की सूक्ष्म रूप से विवेचना की गई, जिससे यह ज्ञात हुआ कि, वे कारण, जो शिशु मृत्यु को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं वे हैं -बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी, कुपोषण, पर्यावरणीय परिस्थितियाँ, उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव के साथ ही सामाजिक-आर्थिक कारक एवं दुर्घटनायें आदि । उक्त कारणों के अतिरिक्त कुछ और भी सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियाँ हैं जो शिशु मृत्यु को प्रभावित करती हैं जैसे- बाल विवाह, पर्दा प्रथा, अशिक्षा, अज्ञानता, रूढ़िवादिता, अधिक संतान, अपौष्टिक भोजन, निर्धनता, माता-पिता की रूग्णता एवं कल्याणकाली संस्थाओं की कमी आदि ये सभी कारण एक दूसरे पर अन्योन्याश्रित हैं । अब उक्त कारणों से होने वाली शिशु मृत्यु की समस्या के निवारण हेतु सुझाव प्रस्तुत किये जायेंगे ताकि समस्या का निराकरण किया जा सके ।

शिशु मृत्यु-दर में कमी करने के लिये एवं समस्या के समाधान हेतु निम्नलिखित प्रयास किये जा सकते हैं ।

भारत में हर वर्ष लगभग 2 करोड़ 20 लाख बच्चे पैदा होते हैं । हर 10 बच्चों में एक शिशु अपना पहला जन्म दिन भी नहीं मना पाता, क्योंकि वह किसी न किसी जानलेवा बीमारी का

शिकार हो जाता है । इनमें से आधे बच्चों को मौत से बचाया जा सकता है यदि उन्हें समय पर जानलेवा बीमारियों टिटनेस, डिफ्थीरिया, काली खाँसी, पोलियो, डायरिया, खसरा आदि के टीके समय से लगवा दिये जायें ।

(1) अध्ययन से स्पष्ट है कि लगभग 62 प्रतिशत प्रसव दाइयों, रिश्तेदारों, या अप्रशिक्षित कार्यकर्ताओं द्वारा कराये जाते हैं । सरकार की ओर से अप्रशिक्षित दाइयों को प्रशिक्षित करने के लिये कार्यक्रम चल रहे हैं इन दाइयों को यदि प्रशिक्षण दे दिया जाये तो ये अवश्य ही प्रसव के समय सफाई का ध्यान रख सकती हैं । इसमें परिवार के लोगों का सहयोग भी आवश्यक है ।

इसी प्रकार लगभग 35 प्रतिशत शिशु टिटनेस की बीमारी से मर जाते हैं जिन्हें कुछ सावधानियाँ बरत कर बचाया जा सकता है । यदि घर की कोई महिला गर्भवती है तो परिवार वालों को चाहिए कि एक साफ धुली धोती, नया ब्लेड, साफ मजबूत धागा व साबुन घर पर अलग से रखा रहे । यदि बच्चे का जन्म घर पर ही दाई के द्वारा कराया गया हो तो वह साबुन से हाँथ धोकर साफ कपड़े पर ही प्रसूता को लिटाये । बच्चे की नाल काटने के लिये ब्लेड या चाकू को गर्म पानी में उबाल लें तथा जिस धागे से नाल को बाँधे उसको भी उबाल लें, उबालने से उसके कीटाणु मर जाते हैं । नाल को काटने से जो घाव बनता है उस पर तेल, घी, राख आदि लगाना बहुत ही घातक हो सकता है उस घाव को खुला छोड़ना ही बेहतर होता है । घाव जल्दी ही सूख जाता है ये सावधानियाँ बरतने से शिशु के शरीर में रोग के कीटाणु आदि प्रवेश नहीं कर पाते हैं ।

(2) अध्ययन के निष्कर्षों से स्पष्ट हो चुका है कि कुल मृत्यु का लगभग 22 प्रतिशत शिशु कुपोषण के कारण मर जाते हैं । इससे बचने के लिये सामाजिक-आर्थिक प्रगति आवश्यक है । इसके साथ ही, यदि माँ के भोजन एवं स्वास्थ्य पर ध्यान दिया जाये तो इसे आसानी से दूर किया जा सकता है । कुपोषण को दूर करने के लिये भोजन पर इस प्रकार ध्यान दिया जाना चाहिए-

(अ) माँ को गर्भधारण के समय से ही संतुलित भोजन दिया जाये ।

(ब) शिशु के जन्म के बाद उसे पौष्टिक आहार अवश्य दिया जाना चाहिए ।

गर्भधारण के समय माँ को निम्नलिखित मात्रा में पौष्टिक आहार दिया जाना चाहिए-

सरेलस	50 ग्राम	कैल्सियम	1000 मि0ग्रा0
हरीपत्तियों की सब्जी	25 ग्राम	आयरन,बिटामिन बी 12	40 मि0ग्रा0 3.00 ग्राम
दूध	125ग्राम	विटामिन ए	7.50 ग्राम
चीनी	10 ग्राम	विटामिन डी	4.00 ग्राम
प्रोटीन	55 ग्राम	राइवोप्लेविन	0.55 मि0ग्रा0
फालिक एसिड	100ग्राम	थायामाइन	0.5 मि0ग्रा0

उपरोक्त तत्वों को प्राप्त करने के लिये निम्नलिखित सावधानियाँ बरतनी चाहिए ।

(1) ताजी सब्जियाँ आवश्यकतानुसार खरीदें एवं काटने से पहले धोयें, क्योंकि काटकर धोने से पोषक तत्वों में कमी आ जाती है । इन सब्जियों के छोटे-छोटे टुकड़े नहीं काटने चाहिए । जहाँ तक सम्भव हो छिलके बहुत ही पतले उतारने चाहिए ।

(2) मूली, गाजर और प्याज की हरी पत्तियाँ बहुत ही पौष्टिक होती है । पत्ता गोभी की पत्तियों में लोहा, कैल्सियम व विटामिन होते हैं अतः उन्हें सलाद के रूप में खायें ।

(3) सब्जियों को जरूरत से ज्यादा न पकायें क्योंकि अधिक समय तक पकने से उनके पौष्टिक तत्वों में कमी आ जाती है ।

(4) सब्जियों को गलाने के लिये सोडे का प्रयोग नहीं करना चाहिए, सोडे का प्रयोग करने से विटामिन नष्ट हो जाते हैं ।

(5) सब्जियों को ढ़क कर पकाना चाहिए, इससे उनके विटामिन कम मात्रा में नष्ट होते हैं

(6) सब्जियाँ हमेशा चौड़े बर्तन में पकायें, उन्हें पकाते समय बार-बार न हिलायें क्योंकि बार-बार हिलाने के लिये ढक्कन खोलना पड़ता है इससे बर्तन में हवा जाती है और इससे "विटामिन सी" नष्ट हो जाता है ।

(7) सब्जियों को कम आँच पर पकायें, प्रेशर कुकर से सब्जियाँ पकाने से पोषक तत्व बहुत कम नष्ट होते हैं जबकि उबालने के दौरान उनके नष्ट होने की सम्भावना अधिक रहती है ।

(8) सब्जियाँ पकाकर रखने तथा उन्हें बार-बार गरम करने से उसके विटामिन नष्ट हो जाते हैं । अतः इन्हें उसी समय तैयार करना चाहिए जब जरूरत हो ।

(9) चावल को साफ कर एक दो बार ही धोना चाहिए, उबालते समय चावल में इतना ही पानी डालना चाहिए जो चावल को अच्छी तरह पका सके । यदि पानी अधिक हो जाता है तो चालक के मॉड़ को कभी भी फेंकना नहीं चाहिए क्योंकि उसमें थोड़ा किन्तु अच्छी किस्म का प्रोटीन होता है जो स्वास्थ्य के लिये अति-लाभकारी होता है।

(10) रोटी बनाते समय आटे का चोकर निकालने से विटामिन 'बी' काफी मात्रा में कम हो जाती है साथ ही, खनिज तथा लवण जैसे- चूने का आधा भाग, पोटेशियम का तीन चौथाई भाग लोहे तथा फास्फोरस का 4/5 भाग नष्ट हो जाता है । अतः अच्छा होगा कि बिना छने आटे का ही प्रयोग किया जाय और पोषक तत्वों का पूरा उपयोग किया जाय ।

(11) जिस पानी में दाल भिगोई जाती है उसका प्रयोग ही उसके पकाने में करना चाहिए । इसे फेंकना नहीं चाहिए । इससे पानी में घुलनशील पोषक तत्व नष्ट होने से बचेंगे । दाल धीमी आँच पर ही पकायें और उफन कर बाहर न गिरने पाये । इस प्रकार पौष्टिक तत्व बचाये जा सकते हैं ।

उपरोक्त सावधानियाँ रखने पर गर्भवती महिला को अच्छा स्वास्थ्य एवं आहार दिया जा सकता है ।

उपरोक्त के अतिरिक्त, शिशु के स्वास्थ्य पर भी ध्यान रखना चाहिए । जब बच्चा एक से छः माह के बीच हो तो उसे उसके शारीरिक वजन के आधार पर पौष्टिक आहार देना चाहिए । 120 कैलोरी एक किलोग्राम के बच्चे को देना चाहिए साथ ही एक किलोग्राम के बच्चे को 2.3 ग्राम प्रोटीन ।

छः माह के बाद शिशु को फलों का रस देना चाहिए जिसमें मुख्य रूप से केले का रस, लौकी का पानी, दाल का पानी, चावल का पानी, मिश्रित करके देना चाहिए ।

उपरोक्त बातों पर ध्यान देने से शिशु की कुपोषणता स्वतः दूर हो सकती है ।

(3) यौन शिक्षा को प्रोत्साहित किया जाय । इसके साथ ही लड़कियों को बाल मनोविज्ञान, दाम्पत्य जीवन और स्वास्थ्य सुरक्षा सम्बन्धी सुविधायें प्रदान की जानी चाहिए । इससे शिशु मृत्यु में कमी आयेगी ।

(4) लड़कियों को मातृत्व सुरक्षा तथा शिशु पालन के नियमों की जानकारी प्रदान की जाय और इससे सम्बंधित ज्ञान को सर्व-सुलभ बनाया जाय । इससे शिशु मृत्यु-दर में कमी लाई जा सकती है ।

(5) परिवार नियोजन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। नगर की आवादी भारत की आवादी की तरह लगातार बढ़ रही है, जिससे अनेक समस्याओं का जन्म हो रहा है, इन पर रोक लगाई जानी चाहिए। धर्म की आड़ में इस नगर का एक समुदाय परिवार नियोजन को अपनाना नहीं चाहता है, जिसके कारण उस समुदाय में महिलायें बार-बार गर्भधारण करती है जो स्वयं उनके स्वास्थ्य के लिये साथ ही साथ, शिशु के स्वास्थ्य के लिये भी हानिकारक है, यदि धर्मान्धता को छोड़कर वर्तमान परिस्थितियों से लड़ने का फैसला सभी लोग कर लें तो परिवार नियोजन उन्हें काफी लाभ दे सकता है, इससे शिशु मृत्यु-दर को कम किया जा सकता है ।

(6) बाल विवाह की प्रथा को पूरी तरह समाप्त कर दिया जाय, जिससे छोटी आयु में विवाह नहीं होंगे । छोटी आयु में विवाह न होने से स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ेगा, बच्चे स्वस्थ

पैदा होंगे और बाहरी वातावरण में फैले संक्रामक रोगों से लड़ने की क्षमता उनके अन्दर होगी इससे शिशु मृत्यु-दर को रोका जा सकता है ।

(7) पर्दा प्रथा का उन्मूलन इस क्षेत्र से कर दिया जाना चाहिए । महिलाओं की समय-समय पर स्वास्थ्य केन्द्रों पर ले जाकर स्वास्थ्य परीक्षण कराना चाहिए इससे इनमें पाई जाने वाली बीमारियों का निदान होगा । जिससे शिशु मृत्यु-दर कम हो सकती है ।

(8) इस क्षेत्र से अज्ञानता, निरक्षरता, रूढ़िवादिता को समाप्त कर देना चाहिए क्योंकि ये सभी समस्याओं के जड़ में होती हैं ।

(9) औरतों के प्रति जो उदासीनता और उपेक्षात्मक दृष्टिकोण है उसे समाप्त किया जाना चाहिए । इससे भी शिशुओं की मृत्यु-दर में कमी आयेगी ।

(10) शिशुओं के कल्याण से सम्बंधित योजनाओं और संस्थाओं को विकसित करना चाहिए । क्योंकि यहाँ मातृ शिशु कल्याण संस्थाओं की कमी है जिसके कारण यहाँ शिशु मृत्यु का दबाव ज्यादा है । इन संस्थाओं का विकास करके शिशु मृत्यु-दर को कम किया जा सकता है ।

(11) उक्त के अतिरिक्त स्वास्थ्य सुविधाओं की व्यवस्था तथा उनका उचित प्रयोग करने के लिये लोगों में जागरूकता पैदा की जानी चाहिए जिसके प्रभाव से शिशु मृत्यु को कम किया जा सकेगा।

बच्चे को जन्म देने की प्रक्रिया चाहे जितनी कष्टदायी क्यों न हो, शिशु का जन्म माँ के लिये असीम आनन्द का अवसर होता है लेकिन, माँ-बाप यह कल्पना भी नहीं कर सकते कि नवजात शिशु जो कि बिल्कुल स्वस्थ पैदा हुआ है, आने वाले कुछ दिनों में ही किसी घातक रोग से ग्रस्त हो जायेगा और उसकी मृत्यु हो जायेगी, कौन माँ-बाप यह चाहेगें कि उनके शिशु का जीवन अधिक से अधिक 4 हफ्तों तक ही सीमित हो या किसी तरह से 28 दिन तक अपना जीवन पूरा कर सके ।

शिशु परिवार में पैदा होते हैं, अभिभावकों और सम्बंधियों का भावनात्मक और सुरक्षात्मक स्नेह ही उन्हें पहली बार यह एहसास दिलाता है कि वे किसी के हैं और कोई उनका है यदि बच्चे का जन्म उसका प्राकृतिक अधिकार है तो जन्म पर किये जाने वाले लिंग भेद को अमानवीय सामाजिक व्यवहार समझना चाहिए ।

प्रस्तुत अध्यान में शिशु मृत्यु के कारणों की सूक्ष्म रूप से विवेचना की गई जिससे यह ज्ञात हो सका कि वे कारण जो शिशु मृत्यु को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं वे बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी, कुपोषण, पर्यावरणीय परिस्थितियाँ, उच्च स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं का

अभाव, के साथ ही सामाजिक-आर्थिक कारक एवं दुर्घटनायें आदि । उक्त के अतिरिक्त कुछ और भी सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियाँ हैं जो शिशु मृत्यु को प्रभावित करती हैं जैसे- बाल विवाह, पर्दाप्रथा, अशिक्षा, रूढ़िवादिता, अधिक संतान, अपौष्टिक भोजन, निर्धनता, माता-पिता की रूग्णता एवं कल्याणकारी संस्थाओं की कमी आदि । साथ ही, उक्त कारणों से होने वाली शिशु मृत्यु, एवं विभिन्न सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु के कारणों का विवरण प्रस्तुत किया गया है । इसी प्रकार,शिशु मृत्यु के कारणों के अनुसार नवजात एवं पश्च-नवजात व विभिन्न सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु को ज्ञात किया गया है तथा विभिन्न बीमारियों से मरने वाले नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु के विवरण के साथ ही विभिन्न सम्प्रदायों में बीमारियों से होने वाली नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु को भी स्पष्ट किया गया है । इसके अतिरिक्त उक्त कारणों से होने वाली शिशु मृत्यु की समस्या के निवारण हेतु सुझाव भी प्रस्तुत किया गया जिससे समस्या का निराकरण किया जा सके ।

सप्तम अध्याय

पूर्ववर्ती अध्यायों में शिशु मृत्यु की दर, उसकी विभिन्नताओं, उसके कारण तथा निवारण के उपायों का विश्लेषण किया गया है । अब तक का विश्लेषण शिशु मृत्यु के विविध पक्षों में अलग-अलग किया गया है जबकि वास्तविकता यह है कि इन सभी में घनिष्ट सम्बन्ध है । इस अध्यान में अध्ययन के सारांश तथा निष्कर्षो को प्रस्तुत किया जायेगा तथा आनुभविक उपलब्धियों को इस प्रकार रखने का प्रयास किया गया है ताकि विविध अध्यायों में प्रस्तुत तथ्य एक श्रृंखला में आबद्ध हो सकें ।

प्रस्तुत अध्ययन का अभिप्राय सूक्ष्म स्तर पर उच्च शिशु मृत्यु के लिये उत्तरदायी कारकों की खोज करना है । इस अध्ययन को भारतीय समाज के नगरीय परिवेश में कुछ विशिष्ट सांस्कृतिक समूहों -हिन्दू तथा मुस्लिम- तक सीमित किया गया है । उक्त प्रक्रिया में अध्ययन का उद्देश्य है शिशु मृत्यु-दर तथा विभिन्न समूहों में उसकी विभिन्नताओं पर प्रकाश डालना । साथ ही, विभिन्न परिस्थितियों में शिशु मृत्यु-दर पर नियन्त्रण हेतु सुझाव प्रस्तुत करना भी उक्त अध्ययन का उद्देश्य है ।

मृत्यु-दर किसी भी राष्ट्र की स्मृद्धि का सूचक है । उन देशों में जहाँ जनसंख्या का अधिकांश प्रतिशत निर्धनता रेखा के नीचे जीवन यापन करता है, की तुलना में उच्च रहन-सहन के स्तर वाले देशों में मृत्यु-दर कम पायी जाती है । विश्व के अन्य विकास शील देशों की तुलना में भारत में स्वास्थ्य का निम्न स्तर पाया जाता है जो यहाँ के निवासियों की अल्पजीवन अवधि के रूप में परिलक्षित होता है । भारत उन देशों में से एक है जहाँ शिशु मृत्यु की उच्च दर पायी जाती है । जब सम्पूर्ण विश्व में शिशु मृत्यु-दर प्रति एक हजार जीवित जन्मों पर 84 तथा विकसित देशों में यह 19 है, भारत में यह दर 105 है । पूर्व वर्षो में 1951-61 के दशक में शिशु मृत्यु-दर प्रति एक हजार जीवित जन्मों पर 146 थी तथा 1961-71 में यह लगभग 129 थी। यद्यपि इससे स्पष्ट है कि शिशु मृत्यु-दर में कमी आयी है तथापि भारत में शिशु मृत्यु की वर्तमान दर अन्य विकसित देशों की तुलना में बहुत अधिक है । भारत में लगभग 50 प्रतिशत शिशु पोस्ट नियोनेटल अवस्था में ही मर जाते हैं ।

सम्पूर्ण देश में, ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में शिशु मृत्यु-दर में पर्याप्त भिन्नतायें हैं । इसके अतिरिक्त यह भिन्नतायें विभिन्न प्रान्तों में दृष्टिगोचर होती हैं । भारत में नगरीय क्षेत्रों में शिशु मृत्यु-दर 65 है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में यह 114 है । जहाँ तक प्रान्तों का प्रश्न है, केरल में यह सबसे कम है (प्रति हजार जीवित जन्मों पर 30) जो कि उस लक्ष्य की भी आधी है जिसे कि

भारत इस शताब्दी के अन्त तक प्राप्त करना चाहता है । दूसरी तरफ, उत्तर प्रदेश में यह सबसे अधिक 147 है । इसके पीछे मध्य प्रदेश तथा उड़ीसा है जहाँ पर कि यह क्रमशः 134 तथा 132 है ।

स्वतन्त्र भारत में शिशु मृत्यु की दर को कम करने के लिये बहुत सी नीतियों का प्रतिपादन तथा क्रियान्वयन किया गया है फिर भी उच्च शिशु मृत्यु-दर अब भी विद्यमान है । स्वाभाविक रूप से यह सामान्य चिंता का विषय है । यह समस्या इस परिप्रेक्ष्य में और भी महत्वपूर्ण हो जाती है कि जब तक शिशु मृत्यु-दर को व्यापक स्तर पर कम नहीं किया जाता, प्रजनन दर तथा जनसंख्या बृद्धि में आशानुरूप ह्रास करना सम्भव नहीं है । इससे भी अधिक यह समस्या परिवार नियोजन को स्वीकार करने वाले दम्पत्तियों के दृष्टिकोण के कारण और भी जटिल हो जाती है । सामान्य तौर पर वे अपने परिवार को सीमित करने की तभी सोंचते हैं जब उनके अधिक बच्चे हो जाते हैं । इस दृष्टिकोण के पीछे कौन से कारण है, इस पर वैज्ञानिक अनुसंधान की आवश्यकता है ।

मृत्यु-दर के अन्वेषण में सांख्यकीय कारकों की भी महत्वपूर्ण भूमिका है । जिन देशों में जन्म एवं मृत्यु के पंजीकरण की विकसित व्यवस्था है वहाँ पर शिशु मृत्यु का प्रत्यक्ष मापन करना अत्यधिक सरल है परन्तु भारत सहित विश्व के अधिकाँश विकासशील देशों में जहाँ पर पंजीकरण की विकसित व्यवस्था नहीं है, पर्याप्त तथा सही आँकड़ों का अभाव है । इस परिप्रेक्ष्य में सूक्ष्म स्तरीय अध्ययनों के अधिक सही तथा उपयोगी होने की सम्भावना है ।

उपर्युक्त तथ्यों के परिप्रेक्ष्य में तथा योजनाओं की सफलता के दृष्टिकोण से शिशु मृत्यु-दर तथा सूक्ष्म स्तर पर उसके कारणों की सही जानकारी प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है । भारत एक विशाल देश है जहाँ पर कि सामाजिक-साँस्कृतिक तथा आर्थिक विभिन्नतायें अधिक हैं । इस दृष्टि से भी सूक्ष्म स्तरीय अध्ययन अत्यधिक महत्वपूर्ण है । साथ ही, जनसंख्या से सम्बंधित विभिन्न तथ्यों के बीच अर्न्तक्रिया की प्रकृति को समझने के लिये यह आवश्यक है कि विभिन्न तथ्यों का सूक्ष्म स्तर पर अध्ययन किया जाये । वर्तमान अध्ययन उक्त संदर्भ में किया गया एक प्रयास है ।

वर्तमान अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य हैं -

(1) शिशु मृत्यु-दर का आँकलन ।

(2) शिशु मृत्यु की विभिन्नताओं को ज्ञात करना ।

(3) शिशु मृत्यु के स्तर को प्रभावित तथा निर्धारित करने वाले सामाजिक, आर्थिक तथा साँस्कृतिक कारकों का पता लगाना तथा ।

नगर के पूर्व सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों के अनुसार नगर में कुल परिवारों की संख्या 4734 है जिसमें हिन्दू परिवारों की संख्या 2443 तथा मुस्लिम परिवारों की 2291 है । नगर में उर्वर आयु समूह (15 से 45 वर्ष) में स्त्रियों की कुल संख्या 4045 है जिसमें हिन्दू समुदाय की महिलाओं की संख्या 1985 तथा मुस्लिम समुदाय में यह संख्या 2060 है । उक्त स्त्रियाँ ही प्रस्तुत अध्ययन की इकाइयाँ हैं तथा इन्हीं के जीवित जन्मों तथा मृत शिशुओं पर हमारे निष्कर्ष आधारित हैं ।

इस प्रकार समग्र में अध्ययन की जाने वाली इकाइयों की संख्या 4045 है जिसमें दोनो सम्प्रदायों -हिन्दू तथा मुस्लिम- की स्त्रियों की संख्या लगभग समान है । अध्ययन की सुविधा की दृष्टिकोण से प्रत्येक समुदाय से 200 महिलाओं का चयन दैव निदर्शन प्रविधि के द्वारा किया गया है । यही हमारा प्रतिदर्श है । प्रतिदर्श, समग्र की सम्पूर्ण इकाइयों का लगभग 10 प्रतिशत अंश है ।

सामान्यतया नगर की अधिकाँश स्त्रियाँ या तो अपढ़ हैं अथवा बहुत कम पढ़ी-लिखी हैं अतः वाँछित सूचना का संग्रह साक्षात्कार अनुसूची की प्रविधि का उपयोग करते हुये किया गया है । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये कि क्षेत्र की महिलायें पुरानी परम्पराओं की पोषक हैं, साक्षात्कार के लिये महिला साक्षात्कार कर्ता के सहयोग से तथ्यों का संकलन किया गया है । साक्षात्कार अनुसूची में समस्या के सभी पक्षों से सम्बंधित प्रश्नों का समावेश किया गया है ।

द्वितीय अध्याय के सामुदायिक पृष्ठभूमि का विवरण दिया गया है । प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र भारतवर्ष के उत्तर प्रदेश राज्य में स्थित हमीरपुर जनपद का ऐतिहासिक नगर 'मौदहा' है । हमीरपुर जनपद उत्तरीगोलार्द्ध के पूर्वीभाग में स्थित है जिसका भौगोलिक क्षेत्रफल 7166 वर्ग किलो मीटर है ।

हमीरपुर जनपद की कुल जनसंख्या 1991 की जनगणना के अनुसार 14,65,707 है जिसमें से 7,95,666 पुरूष व महिलायें 6,70,041 हैं । जिले की ग्रामीण जनसंख्या 12,21,576 तथा नगरीय जनसंख्या 2,44,131 है । यहाँ की कुल जनसंख्या में 53.5 प्रतिशत लोग कृषक वर्ग के हैं जबकि अपनी आजीविका के लिये 81.8 प्रतिशत लोग किसी न किसी रूप में कृषि पर ही निर्भर हैं। धार्मिक आधार पर यदि देखा जाय तो हिन्दू 91.89 प्रतिशत, मुसलमान 6.22 प्रतिशत, 0.012 प्रतिशत ईसाई, 0.014 सिक्ख तथा 1.85 प्रतिशत लोग अन्य धर्मो को मानने वाले हैं ।

जनपद की कार्यप्रणाली को सुचारू रूप से चलाने के लिये इसे 6 तहसीलों एवं 11 विकास खण्डों में विभाजित किया गया है । सभी विकास खण्डों के अन्तर्गत कुल 98 न्याय पंचायतें, 693 ग्राम सभायें हैं । जनपद में कुल 5 नगरपालिकायें तथा 7 टाउनएरिया हैं । यहाँ की साक्षरता औसतन 32.14 प्रतिशत है जिसमें से 45.40 प्रतिशत पुरूष एवं 16.71 प्रतिशत स्त्रियाँ हैं ।

(4) शिशु मृत्यु पर नियन्त्रण पाने के लिये सुझाव प्रस्तुत करना ।

उपर्युक्त विवरण के संदर्भ में, प्रस्तुत शोध का अभिकल्प अन्वेषणात्मक, वर्णनात्मक तथा निदानात्मक है । इस मुख्य उद्देश्य नगरीय परिवेश में शिशु मृत्यु के स्तर तथा विभिन्नताओं का अन्वेषणात्मक अध्ययन करना है । साथ ही, कुछ परिकल्पनाओं, जिनका निर्माण भारतीय समाज में प्रचलित दशाओं तथा उपलब्ध अनुसंधान सामग्री पर आधारित है, का परीक्षण भी करना है । इसके अतिरिक्त, अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर समस्या के समाधान के लिये सुझाव प्रस्तुत करना भी वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य है ।

पूर्व अध्ययनों के निष्कर्षो तथा शिशु मृत्यु की प्रचलित दर के आधार पर हमारी विशिष्ट परिकल्पनायें निम्नलिखित हैं :-

1- शिशु मृत्यु-दर ह्रास की ओर उन्मुख है परन्तु फिर भी यह अधिक है ।

2- नवजात शिशुओं की मृत्यु-दर की तुलना में पश्च-नवजात शिशुओं की मृत्यु-दर अधिक है ।

3- जनांकिकीय कारकों, जैसे प्रसव के समय माँ की आयु आदि का शिशु मृत्यु से सकारात्मक सह-सम्बन्ध है ।

4- सामाजिक-साँस्कृतिक कारक, जैसे कि माता-पिता का साक्षरता स्तर, उनकी जाति, धर्म, परिवार का स्वरूप, तथा सामाजिक-आर्थिक स्तर शिशु मृत्यु के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं ।

5- प्रसव तथा शिशुओं के देख-रेख सम्बन्धी कारक, जैसे -प्रशिक्षित अथवा अप्रशिक्षित प्रसव सहायक, नाल काटने के लिये प्रयुक्त किये गये यंत्र का प्रकार तथा लड़कियों की तुलना में लड़कों को अधिक तथा शीघ्र औषधीय सुविधा प्रदान करना आदि शिशु मृत्यु से घनिष्ठ रूप में सम्बंधित है ।

प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड प्रभाग के हमीरपुर जनपद में स्थिति 'मौदहा' नगर में किया गया है । अध्यन के उद्देश्यों को दृष्टि में रखते हुये उक्त अध्ययन क्षेत्र का चयन किया गया है । इस अध्ययन में दो सांस्कृतिक समूहों -हिन्दू तथा मुस्लिम- के बीच शिशु मृत्यु का तुलनात्मक स्वरूप प्रस्तुत किया गया है । उक्त संदर्भ में मौदहा एक ऐसा नगर है जिसमें हिन्दुओं तथा मुसलमानों की जनसंख्या लगभग समान है । एक ही परिवेश में दोनो सांस्कृतिक समूहों का समान रूप से मिलना अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने में अत्यधिक उपयोगी है ।

जनपद में 1990-91 में 4 महाविद्यालय, 51 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, 280 सीनियर बेसिक स्कूल एवं 1191 जूनियर बेसिक स्कूल थे । इनके अतिरिक्त, सरस्वती शिशु मन्दिर 20, सरस्वती विद्या मन्दिर 6, शिक्षा प्रशिक्षण केन्द्र 2, औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र 1 एवं लेखपाल प्रशिक्षण केन्द्र 1 है ।

स्वास्थ्य सेवाओं में यहाँ 50 एलोपैथिक, 25 आयुर्वेदिक एवं 17 होम्योपैथिक चिकित्सालय है । एक क्षयरोग चिकित्सालय, एक कुष्ठ रोग निवारण केन्द्र एवं 305 मातृ शिशु कल्याण केन्द्र हैं ।

अन्य सुविधाओं में जनपद में 13 पुलिस स्टेशन, 23 पुलिस चौकी, 13 रेलवे स्टेशन, 155.2 कि0मी0 रेलवे लाइन, राष्ट्रीयकृत बैंक शाखायें 42, सहकारी बैंक 18, ग्रामीण बैंक शाखायें 47 एवं 4 भूमि विकास बैंक हैं ।

जनपद में नहरों की लम्बाई 908 कि0मी0, राजकीय नलकूप 418, निजी नलकूप 5453, राजकीय कृषि रक्षा इकाई 12, एग्रो केन्द्र 3 एवं 443 गोबर गैस संयंत्र हैं ।

यहाँ संचार सुविधा के नाम पर 11 टेलीफोन केन्द्र, 10 तारघर, 255 डाकघर हैं, मनोरंजन के नाम पर 9 सिनेमा गृह हैं ।

जनपद में सस्ते गल्ले की दूकानें 762, सहकारी दुग्ध समिति 17, मिट्टी के तेल की दूकाने 831 एवं एक शीत भण्डार गृह है ।

हमीरपुर जिले में कुल 5 नगरपालिकायें आती है जिसमें से एक 'मौदहा' भी है । मौदहा नगर पालिका क्षेत्र प्रस्तुत अध्ययन का अध्ययन-क्षेत्र है ।

उत्तर प्रदेश के दक्षिणांचल में स्थित हमीरपुर जनपद का मौदहा नगर अपने मुख्यालय से 32 कि0मी0 दूर, 25° 46' अक्षांश एवं 80° 7' देशान्तर पर स्थित है । प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर महोबा यहाँ से 48 कि0मी0 दूर है ।

मौदहा नगर का क्षेत्रफल 2.46 वर्ग कि0मी0 है । नगर की पूर्व से पश्चिम की लम्बाई 4 कि0मी0 एवं उत्तर से दक्षिण से लम्बाई 3.5 कि0मी0 है ।

यहाँ की जनसंख्या 1991 की जनगणना के अनुसार कुल 26520 थी । नगर में कुल परिवारों की संख्या 4734 है । नगर की कुल जनसंख्या का लगभग 47 प्रतिशत हिन्दू एवं 53 प्रतिशत मुसलमान थे ।

नगर में कुल साक्षर व्यक्तियों की संख्या 13463 है जिसमें पुरूष 8921 तथा स्त्रियाँ 4542 थीं कुल साक्षरता प्रतिशत 49.37 है । यहाँ शिक्षा के लिये 3 हायर सेकेण्डरी स्कूल बालकों

के लिये, 1 हायर सेकेण्डरी स्कूल बालिकाओं के लिये हैं । उच्च शिक्षा के लिये नगर में कोई व्यवस्था नहीं है । नगर में सीनियर बेसिक स्कूल 5 व जूनियर बेसिक स्कूलों की संख्या 11 है । 3 मान्टेसरी तथा 7 नर्सरी स्कूल कार्यरत हैं ।

स्वास्थ्य सुविधाओं में 1 एलोपैथिक स्वास्थ्य केन्द्र, 1 यूनानी चिकित्सालय, 1 मातृ शिशु कल्याण केन्द्र एवं उपकेन्द्र है । इसके अतिरिक्त, यहाँ पर गैर सरकारी स्वास्थ्य केन्द्र भी हैं ।

आधुनिकीकरण की दृष्टि से नगर में आधुनिक सुविधायें भी उपलब्ध हैं । नगर में एक टेलीफोन केन्द्र, 3 डाकघर, 1 तारघर, एक सार्वजनिक टेलीफोन केन्द्र, 3 कृषि सेवा केन्द्र, 2 राष्ट्रीयकृत बैंक शाखायें, 1 ग्रामीण बैंक शाखा, 1 सहकारी बैंक एवं 1 भूमि विकास बैंक स्थित है । नगर में विद्युत की उपलब्धता एवं नल द्वारा पेयजल सुविधा भी उपलब्ध है । इसके अतिरिक्त शीत गोदाम, बीज गोदाम, उर्वरक भण्डार, सस्ते गल्ले की सरकारी दूकानें हैं । यहाँ ब्लाक मुख्यालय एवं पुलिस स्टेशन भी है ।

मौदहानगरकीअर्थव्यवस्था में कृषि का प्रमुख स्थान है । अधिकतर लोग कृषि व्यवसाय से सम्बंधित हैं । कृषि के अतिरिक्त यहाँ अनेक प्रकार के व्यापार एवं गृह उद्योग प्रचलित हैं । यहाँ पर चाँदी की मछली बनाकर बेंचना, भी प्रमुख व्यवसाय है, प्लास्टिक के जूते-चप्पल बनाना यहाँ का एक प्रमुख उद्योग है ।

तृतीय अध्याय में महिलाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि का विवरण दिया गया और सूक्ष्म स्तर पर उस सामाजिक परिवेश को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है जिसमें महिलायें निवास करती है।जिससे यह ज्ञात हुआ कि दोनों सम्प्रदायों के उत्तरदाताओं में से हिन्दुओं में 32.5 प्रतिशत उत्तरदाता 15-24 वर्ष आयु, 47.5 प्रतिशत 25-34 एवं 20 प्रतिशत उत्तरदाता 35-44 वर्ष आयु की हैं तथा मुसलमानों में 30 प्रतिशत 15-24 वर्ष आयु, 47 प्रतिशत 25-34 तथा 23 प्रतिशत 35-44 वर्ष आयु के हैं ।

उत्तरदाताओं की धार्मिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि 50 प्रतिशत उत्तरदाता हिन्दू समुदाय व 50 प्रतिशत उत्तरदाता इस्लाम धर्म से सम्बंधित हैं अर्थात दोनों सम्प्रदायों के उत्तरदाताओं की संख्या लगभग समान है ।

पारिवारिक पृष्ठभूमि के अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि दोनों सम्प्रदायों में परिवार के दो स्वरूप दिखायी देते हैं । हिन्दू समाज में संयुक्त परिवारों की बहुलता (62.5 प्रतिशत) है, वहीं मुस्लिम एकाकी परिवार बहुतायत (60.5 प्रतिशत) में पाये जाते हैं । यह दोनों समुदायों की सांस्कृतिक भिन्नता को स्पष्ट करते हैं ।

उत्तरदाताओं के शैक्षिक स्तर का अवलोकन किया गया जिससे यह ज्ञात हुआ कि उत्तरदाताओं में निरक्षरों का प्रतिशत सर्वाधिक (61.25 प्रतिशत) है । हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त करने वालों का प्रतिशत 24.75 है तथा हाईस्कूल व उससे उच्च शिक्षा प्राप्त करने वालों की संख्या सबसे कम मात्र 14.0 प्रतिशत है । अर्थात दोनों सम्प्रदायों में शिक्षा का स्तर पर्याप्त कम है ।

उत्तरदाताओं के पतियों की शिक्षा के स्तर का आँकलन करने पर स्पष्ट हुआ कि उत्तरदाताओं के शिक्षा के स्तर से उनके पतियों का शैक्षिक स्तर अधिक है । यदि दोनों समुदायों की निरक्षरता पर गौर करें तो इसका प्रतिशत हिन्दुओं में 18.5 तथा मुसलमानों में 50.5 है, हाईस्कूल से कम की शिक्षा में हिन्दुओं का प्रतिशत 21.5 है जबकि मुसलमानों में यह 32 प्रतिशत रहा । इसी प्रकार, हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा हिन्दूओं में 60 प्रतिशत है जबकि **मुसलमानों** में यह 17.5 प्रतिशत पायी गई । इस प्रकार कुल मिलाकर हिन्दुओं में शिक्षा का स्तर प्रत्येक दृष्टि से अच्छा है ।

विवाह के समय आयु का अध्ययन करने पर पता चलता है कि दोनों सम्प्रदायों के सर्वाधिक उत्तरदाताओं (55.25 प्रतिशत) का विवाह 10-14 वर्ष आयु में हुआ है जिसमें हिन्दुओं के लिये यह 50.5 प्रतिशत तथा मुसलमानों में यह 60 प्रतिशत है । तथा सबसे कम उत्तरदाताओं का विवाह (16 प्रतिशत) 20-24 वर्ष आयु में हुआ है, हिन्दुओं में इसका प्रतिशत 22.5 है वहीं मुसलमानों में यह 6.5 प्रतिशत है । इसी प्रकार, ऐसे उत्तरदाता जिनका विवाह 15-19 वर्ष आयु में हुआ है उसमें दोनों का प्रतिशत क्रमशः 24 एवं 33.5 रहा है । इस प्रकार स्पष्ट है कि ज्यादातर उत्तरदाताओं का विवाह 10-14 वर्ष आयु में हो जाता है । विवाह की आयु मुसलमानों की अपेक्षा हिन्दुओं में कुछ ज्यादा होती है ।

उत्तरदाताओं के जातीय स्तर का अवलोकन किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि, दोनों समुदायों में उच्च जातियों के उत्तरदाताओं की संख्या सबसे कम (18.25 प्रतिशत) है जिसमें हिन्दुओं का प्रतिशत 21.5 तथा मुसलमानों का 15 है । निम्न जाति के उत्तरदाताओं की संख्या दोनों समुदायों में सर्वाधिक (52.5 प्रतिशत) है । जिसमें कि हिन्दुओं में इसका प्रतिशत 50 तथा मुसलमानों में 55 है । इसी प्रकार, मध्य जाति स्तर में हिन्दू उत्तरदाता 28.5 प्रतिशत तथा मुसलमान 30 प्रतिशत हैं अर्थात मध्य जाति स्तर में कुल 29.25 प्रतिशत उत्तरदाता हैं ।

इसी क्रम में जब उत्तरदाताओं के पतियों के व्यवसाय का अध्ययन किया गया तो ज्ञात हुआ कि दोनों समुदायों के 46 प्रतिशत उत्तरदाता नगरीय क्षेत्र से सम्बंधित होने के बावजूद कृषि से सम्बंधित व्यवसाय अपनाये हुये हैं जिसमें हिन्दुओं के लिये यह प्रतिशत 48.5 व मुसलमानों के लिये 43.5 है । इसके अतिरिक्त, दोनों समुदायों के शेष 54 प्रतिशत उत्तरदाता कृषि के अतिरिक्त

व्यवसायों को अपनाये हुये हैं, जिसमें हिन्दुओं के लिये यह प्रतिशत 51.5 व मुसलमानों के लिये 56.5 है ।

इसी प्रकार जब भू-स्वामित्व की जानकारी प्राप्त की गई तो पता चला कि दोनों समुदाय के सर्वाधिक 74.25 प्रतिशत उत्तरदाता भूमिहीन हैं जिसमें हिन्दुओं के लिये इनका प्रतिशत 73.5 व मुसलमानों के लिये यह 75 प्रतिशत है । 12.25 प्रतिशत के पास 10 एकड़ अथवा उससे भी कम भूमि है जिसमें हिन्दुओं और मुसलमानों में इसका प्रतिशत क्रमशः 15 एवं 9.5 है । इसी प्रकार, 10-12 एकड़ भू-स्वामित्व वाले उत्तरदाताओं का कुल प्रतिशत 13.5 है जिसमें हिन्दुओं के लिये इसका प्रतिशत 11.5 एवं मुसलमानों में यह 15.5 पाया गया ।

उक्त के अतिरिक्त, उत्तरदाताओं के सामाजिक-आर्थिक स्तर का अध्ययन किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि सर्वाधिक उत्तरदाता 63.5 प्रतिशत, निम्न सामाजिक-आर्थिक स्थिति वाले हैं जिसमें से हिन्दुओं के लिये यह प्रतिशत 58.5 व मुसलमानों के लिये यह 68.5 है । सबसे कम उत्तरदाता 10.75 प्रतिशत, उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर से सम्बंधित हैं जिसमें से हिन्दुओं के लिये यह 12.5 प्रतिशत व मुसलमानों के लिये 9 प्रतिशत है । इसी प्रकार, मध्यम सामाजिक-आर्थिक स्तर के दोनों समुदायों के कुल उत्तरदाताओं की संख्या 25.75 प्रतिशत है जिसमें से हिन्दुओं एवं मुसलमानों के लिये इनका प्रतिशत क्रमशः 29.0 व 22.5 पाया गया ।

साथ ही, उत्तरदाताओं के मकानों के स्वरूप सम्बन्धी विवरण ज्ञात किया गया जिससे यह पता चलता कि दोनों समुदायों के सर्वाधिक उत्तरदाताओं (45.75 प्रतिशत) क मकान कच्चे किस्म के हैं जिनमें हिन्दुओं के लिये इनका प्रतिशत 40.5 व मुसलमानों के लिये इनका प्रतिशत 51 है । सबसे कम 23.75 प्रतिशत मकान पक्के किस्म के हैं इनका प्रतिशत हिन्दुओं के लिये 30.5 एवं मुसलमानों में 17 पाया गया । मिश्रित मकानों की संख्या पक्के मकानों से कुछ ज्यादा किन्तु कच्चे मकानों की अपेक्षा कम है, जिसका प्रतिशत हिन्दुओं एवं मुसलमानों में क्रमशः 29.0 एवं 32.0 है ।

इसी क्रम में, उत्तरदाताओं के मकान में प्रकाश के साधन का विवरण ज्ञात करने पर पता चला कि दोनों समदायों में प्रकाश के साधन के रूप में सर्वाधिक उपयोग बिजली का है । दोनों समुदायों के 68.25 प्रतिशत उत्तरदाता विद्युत का उपयोग करते हैं जिसमें से हिन्दुओं के लिये इसका प्रतिशत 72 तथा मुसलमानों में 64.5 प्रतिशत है । इसी प्रकार लानटेन का उपयोग 17.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा किया जाता है जिसमें हिन्दुओं एवं मुसलमानों के लिये इसका प्रतिशत 20 एवं 15.5 है । इसी क्रम में, डिब्बी का प्रयोग हिन्दुओं में 8 प्रतिशत एवं मुसलमानों में 20.0 प्रतिशत पाया गया इस प्रकार दोनों समुदाय बिजली के प्रयोग के प्रति जागरूक हैं ।

उत्तरदाताओं के पीने के पानी के साधन का अध्ययन करने पर पता चलता है कि दोनों समुदायों में सर्वाधिक 75 प्रतिशत उत्तरदाता नल का प्रयोग करते हैं जिसमें से हिन्दुओं के लिये इसका प्रतिशत 73.5 एवं मुसलमानों के लिये 76.5 है।इसी प्रकार शेष 25 प्रतिशत कुओं का उपयोग करते हैं जिसमें से हिन्दुओं के लिये यह प्रतिशत 26.5 है तथा 23.5 प्रतिशत मुसलमान कुयें के जल का उपयोग करते पाये गये । इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि दोनों समुदायों में नल व्यवस्था काफी प्रचलित है ।

अन्त में, उत्तरदाताओं के परिवार में शौचालय सुविधा का अध्ययन किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि ज्यादातर 59.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं के यहाँ शौचालय सुविधा उपलब्ध नहीं है । हिन्दुओं में इसका प्रतिशत 49.0 है जबकि मुसलमानों में इसका प्रतिशत 70.5 है । इसी प्रकार, दोनों समुदायों में जिनके यहाँ शौचालय सुविधा है उनका प्रतिशत 40.25 है जिसमें हिन्दुओं में इसका प्रतिशत 51.0 तथा मुसलमानों में 29.5 पाया गया । इस प्रकार स्पष्ट है कि ज्यादातर लोग शौचालय सुविधा से वंचित हैं दोनों समुदायों में से हिन्दुओं में मुसलमानों की अपेक्षा ज्यादा लोगों के पास शौचालय सुविधा उपलब्ध है ।

अध्याय चार में विविध वर्षों में शिशु मृत्यु-दर का अध्ययन कियागया है जिससे यह ज्ञात हुआ कि वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 335.29, 286.24 तथा 167.78 प्रति हजार है,जो कि ह्रास की ओर उन्मुख है ।

विविध वर्षों में दोनों सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु-दर का अध्ययन किया गया जिससे पता चला कि दोनों सम्प्रदायों में से हिन्दू सम्प्रदाय की वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 279.22, 243.69 व 138.68 प्रति हजार है तथा मुस्लिम समुदाय में यह क्रमशः 381.72, 320 एवं 192 प्रति हजार रही । अतः स्पष्ट है कि दोनों सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु-दर में निरन्तर कमी आ रही है । साथ ही, यह भी स्पष्ट है कि हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में शिशु मृत्यु-दर अधिक है ।

विविध वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर का भी विश्लेषण किया गया जिससे यह ज्ञात हुआ कि वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में नवजात शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 141.17, 126.39 एवं 80.53 प्रति हजार रही तथा पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 194.11, 159.85 एवं 87.24 प्रति हजार है । स्पष्ट है कि अलग-अलग वर्षों में नवजात शिशु मृत्यु की अपेक्षा पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अधिक है साथ ही, क्रमिक वर्षों में नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर

क्रमशः घट रही है तथा यह भी संकेत मिलता है कि नवजात शिशु मृत्यु-दर की अपेक्षा पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर में ह्रास की दर अधिक है ।

नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु का अलग-अलग सम्प्रदायों में भी अध्ययन किया गया जिससे यह ज्ञात हुआ कि हिन्दुओं में उक्त तीनों वर्षों में नवजात शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 123.37, 109.24 एवं 65.69 प्रति हजार और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 155.84, 134.45 एवं 72.99 प्रति हजार प्राप्त हुई। जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में नवजात शिशु मृत्यु-दर 1988, 1989 एवं 1990 में क्रमशः 155.84, 140.00 एवं 93.75 प्राप्त हुई और पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 255.0 180.00, एवं 99.37 प्राप्त हुई । अतः स्पष्ट है कि दोनों सम्प्रदायों में विविध वर्षों में नवजात शिशु मृत्यु की तुलना में पश्च-नवजात शिशु मृत्यु-दर अधिक है जो निरन्तर ह्रास की ओर उन्मुख है ।

नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु को और अधिक प्रभावी ढंग से समझने के लिये उसका आनुपातिक विश्लेषण भी किया गया, जिससे यह ज्ञात हुआ कि नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अनुपात तीनों वर्षों 1988, 1989 एवं 1990 में क्रमशः 1:1.37, 1:1.26 एवं 1:1.08 है । इससे यह स्पष्ट होता है कि नवजात शिशु मृत्यु की तुलना में पश्च-नवजात शिशु मृत्यु सदैव अधिक है । साथ ही, पश्च-नवजात शिशु मृत्यु ह्रास की ओर उन्मुख है ।

इसी प्रकार नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु के अनुपात को अलग-अलग सम्प्रदायों के आधार पर विवेचित किया गया जिससे यह भी स्पष्ट हुआ कि हिन्दू सम्प्रदाय में नवजात शिशु एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अनुपात तीनों वर्षों में क्रमशः 1:1.26, 1:1.23 एवं 1:1.10 रहा तथा मुसलमानों में यह अनुपात क्रमशः 1:1.44, 1:1.28 एवं 1:1.06 है । स्पष्ट है कि हिन्दू सम्प्रदाय की तुलना में मुस्लिम समुदाय में पश्च-नवजात शिशु मृत्यु अधिक है परन्तु यह निरन्तर कम होती जा रही है साथ ही यह 1990 में हिन्दुओं की अपेक्षा कुछ कम हो गई है ।

शिशु मृत्यु की दर ज्ञात कर उसकी तुलना प्रदेश एवं देश के आँकड़ों से भी की गई है । जहाँ एक ओर हमारे आँकड़े वर्ष 1988, 1989 एवं 1990 में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 355.29, 286.24 एवं 167.78 प्रति हजार दर्शाते हैं, वहीं उत्तर प्रदेश में यह दर क्रमशः 118, 120 तथा 118 प्रति हजार रही जबकि भारत में यह क्रमशः 87, 91 एवं 80 प्रति हजार पायी गई ।

अध्याय पाँच में शिशु मृत्यु-दर से सम्बंधित कुछ ऐसे सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों का सूक्ष्म रूप से विश्लेषण किया गया है जिनके कारण शिशु मृत्यु-दर में विभिन्नतायें उत्पन्न हो जाती हैं । ऐसे विभिन्न सामाजिक कारक जो शिशु मृत्यु-दर को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते

हैं उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है ।

धार्मिक आधार पर शिशु मृत्यु-दर का अध्ययन किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि हिन्दू सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर 221.95 व मुस्लिम सम्प्रदाय में 301.81 प्रति हजार है । इस प्रकार, हिन्दू सम्प्रदाय की अपेक्षा मुस्लिम सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर अधिक है, जो कि .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण है ।

परिवार के स्वरूप के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नताओं का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि संयुक्त परिवारों में शिशु मृत्यु-दर 288.01 प्रति हजार है एवं एकाकी परिवारों में शिशु मृत्यु-दर 229.88 प्रति हजार है जिससे स्पष्ट हुआ कि संयुक्त परिवारों में एकाकी परिवारों की अपेक्षा शिशु मृत्यु-दर अधिक है किन्तु विशेष अन्तर नहीं है तथा .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है ।

साथ ही, दोनों सम्प्रदायों में भी उक्त आधार पर शिशु मृत्यु का अध्ययन किया गया जिससे स्पष्ट हुआ कि हिन्दू सम्प्रदाय में संयुक्त परिवारों में शिशु मृत्यु-दर 241.07 व एकाकी परिवारों में 198.90 प्रति हजार तथा मुस्लिम सम्प्रदाय में यह क्रमशः 319.40 व 265.54 प्रति हजार है । इस प्रकार दोनों ही सम्प्रदायों में संयुक्त परिवारों में एकाकी परिवारों की अपेक्षा शिशु मृत्यु-दर अधिक है ।

जातीय स्तर के आधार पर भी शिशु मृत्यु में विभिन्नताओं का अध्ययन किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि उच्च स्तर की जातियों में शिशु मृत्यु-दर 205.12 तथा मध्य एवं निम्न में क्रमशः 284.44 एवं 299.78 प्रति हजार है । जिससे स्पष्ट होता है कि जातीय स्तर घटने के साथ ही शिशु मृत्यु-दर में बृद्धि होती है फिर भी यह .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है ।

जातीय स्तर के प्रभाव को दोनों सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु-दर में जानने का प्रयत्न करने पर स्पष्ट हुआ कि हिन्दुओं में उच्च, मध्य एवं निम्न जाति स्तर में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 184.78, 205.12 तथा 248.75 है जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में यह क्रमशः 223.30, 289.85 तथा 339.34 है । स्पष्ट रूप से दोनों सम्प्रदायों में जातीय स्तर का समान प्रभाव परिलक्षित होता है। जातीय स्तर एवं शिशु मृत्यु के बीच नकारात्मक सह-सम्बन्ध है ।

माँ के शैक्षिक स्तर के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नताओं का अध्ययन करने पर पता चला कि निरक्षर महिलाओं में शिशु मृत्यु-दर 341.20, हाईस्कूल से कम शिक्षा प्राप्त में 238.09 एवं हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं में यह 101.19 प्रति हजार है । स्पष्ट है कि निरक्षर महिलाओं में शिशु मृत्यु-दर सर्वाधिक है जो कि शिक्षा के स्तर के साथ ही

क्रमशः घटती जाती है तथा .01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण है ।

उक्त आधार पर दोनों सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु-दर का अध्ययन करनेपर ज्ञात हुआ कि हिन्दुओं में निरक्षर, हाईस्कूल से कम एवं हाईस्कूल व उससे अधिक शिक्षा प्राप्त स्त्रियों में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 248.40, 219.29 व 51,28 प्रति हजार है जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में यह क्रमशः 391.12, 251.57 व 144.44 प्रति हजार है । स्पष्ट है कि दोनों सम्प्रदायों में शिक्षा बढ़ने के साथ-साथ शिशु मृत्यु-दर घटती है । दोनों सम्प्रदायों में शिक्षा का समान प्रभाव परिलक्षित होता है ।

इसी प्रकार, उत्तरदाताओं के पति की शिक्षा का शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव जानने का प्रयास किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि जिनके पति निरक्षर, हाईस्कूल से कम व हाईस्कूल और उससे अधिक शिक्षा प्राप्त हैं उनमें शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 323.59, 239.83 व 148.35 प्रति हजार है जिससे यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा शिशु मृत्यु को अत्यधिक प्रभावित करती है । पति का शैक्षिक स्तर जैसे-जैसे बढ़ता हैशिशुमृत्यु-दर वैसे-वैसे घटती जाती है तथा .01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण है ।

पति की शिक्षा का दोनों सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु-दर पर अलग-अलग प्रभाव देखने पर ज्ञात हुआ कि हिन्दुओं में निरक्षर, हाईस्कूल से कम व हाईस्कूल एवं उच्च शिक्षा प्राप्त पतियों में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 279.28, 186.91 व 117.95 प्रति हजार है तथा मुस्लिम सम्प्रदाय में यह क्रमशः 360.15, 280.57 एवं 175.71 प्रति हजार है । स्पष्ट है कि पति के शैक्षिक स्तर का शिशु मृत्यु पर प्रभाव दोनों सम्प्रदाय में समान एवं महत्वपूर्ण है । पति का शैक्षिक स्तर बढ़ने के साथ ही शिशु मृत्यु-दर कम होती जाती है ।

पति के व्यवसाय का शिशु मृत्यु पर प्रभाव जानने का प्रयत्न किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि जिनका व्यवसाय कृषि आधारित है उनमें शिशु मृत्यु-दर 298.81 तथा जिनका व्यवसाय कृषि के अतिरिक्त है उनमें यह 246.04 प्रति हजार है । जिससे यह स्पष्ट होता है कि पिता के व्यवसाय का शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव सीमित है जो कि .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है।

पति के व्यवसाय का शिशु मृत्यु पर प्रभाव का अलग-अलग सम्प्रदायों में अध्ययन किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि हिन्दुओं में जिनका व्यवसाय कृषि आधारित व कृषि के अतिरिक्त था उनमें शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 161.90 व 194.21 प्रति हजार है तथा मुस्लिम सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 335.29 व 284.40 प्रति हजार है । जिससे स्पष्ट होता है कि पिता के व्यवसाय का शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव बड़ा ही सीमित है ।

भू-स्वामित्व के आधार पर शिशु मृत्यु में विभिन्नताओं का अध्ययन करने पर पता चला कि भूमिहीन परिवारों में शिशु मृत्यु-दर सर्वाधिक 279.26, 0-10 एकड़ भू-स्वामित्व वाले परिवारों में 267.85 तथा 10-20 एकड़ भू-स्वामित्व वाले परिवारों में यह सबसे कम 205.67 प्रति हजार है । यहाँ पर भी यह स्पष्ट है कि भूमि सीमा के बढ़ने के साथ ही साथ शिशु मृत्यु-दर कम होती जाती है परन्तु यह प्रभाव महत्वपूर्ण प्रतीत नहीं होता । यह .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है ।

जब दोनों सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु-दर पर भू-स्वामित्व के प्रभाव का अध्ययन किया गया तो ज्ञात हुआ कि हिन्दुओं में यह भूमिहीनों में सर्वाधिक 240.67, 0-10 एकड़ भू-स्वामित्व वाले परिवारों में यह 213.11 तथा 10-20 एकड़ वालों में यह सबसे कम 129.62 प्रति हजार है, जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में यह क्रमशः 316.83, 299.06 एवं 252.87 प्रति हजार है । स्पष्ट है कि दोनों सम्प्रदायों में भू-स्वामित्व की सीमा बढ़ने के साथ-साथ शिशु मृत्यु-दर में गिरावट आ रही है किन्तु यह ह्रास अत्यधिक कम है ।

विवाह के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव ज्ञात किया गया जिससे स्पष्ट हुआ कि जिन स्त्रियों का विवाह 15-19 वर्ष आयु समूह में हुआ उनमें शिशु मृत्यु-दर सर्वाधिक 2678.78,जिनका विवाह 20-24 वर्ष आयु समूह में हुआ उनमें यह सबसे कम 236.84 तथा 10-14 वर्ष आयु समूह में विवाह करने वाली स्त्रियों में यह 272.20 प्रति हजार रही । प्रस्तुत किये गये तथ्यों से स्पष्ट है कि विवाह के समय की स्त्रियों की आयु के बढ़ने अथवा कम होने का शिशु मृत्यु-दर पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है । यह .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है ।

उक्त प्रभाव को अलग-अलग सम्प्रदायों में देखने पर पता चलता है कि हिन्दुओं में जिन स्त्रियों की विवाह के समय आयु क्रमशः 10-14, 15-19 एवं 20-24 वर्ष थी उनमें शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 235, 229.50 एवं 181.81 प्रति हजार पायी गई जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर उन्हीं आयु समूहों में क्रमशः 322.14, 307.69 एवं 271.42 प्रति हजार है । यहाँ भी आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि दोनों सम्प्रदायों में विवाह के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव आंशिक ही है जो कि अधिक महत्वपूर्ण नहीं कहा जा सकता ।

प्रसव सहायक के आधार पर भी शिशु मृत्यु में विभिन्नताओं का अध्ययन किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि जिन उत्तरदाताओं के प्रसव प्रशिक्षित सहायकों की उपस्थिति में हुये उनमें शिशु मृत्यु-दर सबसे कम 143.27 तथा जिनके प्रसव अप्रशिक्षित सहायकों द्वारा कराये गये

उनमें यह सर्वाधिक 339.82 प्रति हजार रही जो कि .01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण हैं । स्पष्ट है कि प्रसव सहायकों की शिशु मृत्यु-दर के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है ।

जब उक्त प्रभाव को अलग-अलग सम्प्रदायों में देखा गया तो पता चला कि हिन्दू सम्प्रदाय में जहाँ प्रशिक्षित प्रसव सहायकों का प्रयोग हुआ वहाँ शिशु मृत्यु-दर 95.95 तथा जहाँ अप्रशिक्षित सहायकों का प्रयोग हुआ वहाँ यह 299.21 प्रति हजार रही जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 182,79 एवं 372.99 प्रति हजार थी । उक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि दोनों समुदायों में प्रसव सहायकों का समान प्रभाव है जो कि अत्यधिक महत्वपूर्ण है ।

नाल काटने के यंत्र का शिशु मृत्यु पर प्रभाव जानने के लिये अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि परम्परागत यंत्रों का नाल काटने में जहाँ प्रयोग किया गया वहाँ शिशु मृत्यु-दर सर्वाधिक 368.60 तथा जहाँ आधुनिक यंत्रों का प्रयोग हुआ यह 216.62 प्रति हजार पायी गयी । जिससे स्पष्ट है कि नाल काटने के यंत्र का शिशु मृत्यु पर प्रभाव अत्यधिक महत्व का है जो कि .01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण है ।

उक्त प्रभाव को अलग-अलग सम्प्रदायों में जानने के लिये अध्ययन करने पर पता चलता है कि हिन्दू समुदाय में जहाँ नाल काटने के परम्परागत यंत्रों का प्रयोग किया गया उनमें शिशु मृत्यु-दर 328.24 तथा जहाँ आधुनिक यंत्रों का प्रयोग हुआ वहाँ यह 172.04 रही जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 401.23 व 253.73 प्रति हजार प्राप्त हुई । इससे स्पष्ट है कि परम्परागत यंत्रों के प्रयोग से शिशु मृत्यु बढ़ जाती है अर्थात दोनों सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु-दर नाल काटने के यंत्र के प्रयोग से प्रभावित होती है यह प्रभाव दोनों सम्प्रदायों में समान रूप से परिलक्षित होता है ।

जन्म के स्थान का शिशु मृत्यु पर प्रभाव जानने के लिये अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि घर में प्रसव कराने पर शिशु मृत्यु-दर पर्याप्त अधिक 311.64 तथा अस्पताल में प्रसव कराने पर शिशु मृत्यु-दर काफी कम 142.27 प्रति हजार पायी गई । अतः स्पष्ट है कि जन्म के स्थान का शिशु मृत्यु के संदर्भ में विशेष महत्व है जो कि .01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण है ।

जन्म के स्थान का दोनों सम्प्रदायों की शिशु मृत्यु पर प्रभाव जानने के लिये अध्ययन किया गया जिससे ज्ञात होता है कि हिन्दू सम्प्रदाय में घर में प्रसव कराने पर शिशु मृत्यु-दर 263.15 व अस्पताल में प्रसव कराने पर 68.96 प्रति हजार प्राप्त होती है, जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में प्रसव घर व अस्पताल में कराने से शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 335.98 व 182.38 प्रति हजार प्राप्त

होती है । इससे स्पष्ट है कि दोनों सम्प्रदायों में अस्पताल की अपेक्षा घर में प्रसव कराने पर शिशु मृत्यु-दर अत्यधिक बढ़ जाती है अर्थात जन्म का स्थान दोनों सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु को समान रूप से प्रभावित करता है ।

प्रसव के समय माँ की आयु का शिशु मृत्यु-दर पर प्रभाव का अध्ययन करने से ज्ञात हुआ कि जिन माताओं की प्रसव के समय आयु 15-25, 25-34 व 35-44 वर्ष थी उनमें शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 244.68, 289.47 एवं 236.68 प्रति हजार रही । स्पष्ट है कि जिन माताओं की आयु प्रसव के समय 15-24 वर्ष व 35-44 वर्ष है उनमें शिशु मृत्यु-दर उन माताओं की तुलना में कम पायी जाती है जिनकी प्रसव के समय आयु 25-34 वर्ष है । चूँकि यह अन्तर अत्यधिक कम है अतः कह सकते हैं कि प्रसव के समय माँ की आयु का कोई विशेष महत्व नहीं है । हमारे निष्कर्ष .05 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण नहीं है ।

उक्त प्रभाव का अलग-अलग सम्प्रदायों में अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि हिन्दुओं में जिनकी प्रसव के समय आयु 15-24, 25-34 व 35-44 वर्ष है उनमें शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 204.72, 335.57 व 213.33 प्रति हजार प्राप्त होती है जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 277.41, 344.67 एवं 255.31 प्रति हजार पायी गई । इससे स्पष्ट है कि प्रसव के समय माँ की आयु का दोनों सम्प्रदायों में समान रूप से शिशु मृत्यु-दर पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है ।

लिंग भेद के आधार पर शिशु मृत्यु-दर पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि जिन उत्तरदाताओं ने लड़कों को जन्म दिया उनमें शिशु मृत्यु-दर 199.18 थी जिन्होंने लड़कियों को जन्म दिया उनमें यह 344.57 प्रति हजार प्राप्त हुई । उक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि लड़कों के संदर्भ में शिशु मृत्यु-दर कम तथा लड़कियों के संदर्भ में शिशु मृत्यु-दर बहुत अधिक है।अतः कहा जा सकता है कि लिंग भेद का शिशु मृत्यु-दर पर अत्यधिक प्रभाव है जो कि .01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण है ।

उपरोक्त प्रभाव को दोनों सम्प्रदायों में जानने के लिये अध्ययन करने पर पता चला कि हिन्दुओं में जहाँ बच्चों का लिंग क्रमशः लड़का एवं लड़की था वहाँ शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 161.82 व 307.67 प्रतिहजार पाई गई । जबकि मुस्लिम समुदाय में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 235.05 व 369.91 प्रति हजार है । इससे स्पष्ट है कि दोनों सम्प्रदायों में लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की मृत्यु-दर अधिक है । साथ ही, लिंग के आधार पर शिशु मृत्यु का प्रभाव हिन्दुओं में अधिक दिखाई पड़ता है जबकि मुसलमानों में यह अपेक्षाकृत कम परिलक्षित होता है ।

इसी प्रकार शिशु मृत्यु पर सामाजिक-आर्थिक स्थिति के प्रभाव का अध्ययन करने से ज्ञात हुआ कि उच्च, मध्य एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर की महिलाओं में शिशु मृत्यु-दर क्रमशः 76.92, 247.19 एवं 343.94 प्रति हजार है । इससे स्पष्ट होता है कि उच्च स्तर में शिशु मृत्यु-दर सबसे कम तथा निम्नस्तर में सर्वाधिक होती है । इस प्रकार, सामाजिक-आर्थिक स्तर शिशु मृत्यु को विशेष रूप से प्रभावित करता है जो कि .01 सम्भाविता स्तर पर महत्वपूर्ण है ।

उक्त प्रभाव को अलग-अलग सम्प्रदायों में जानने के लिये प्रयास किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि हिन्दू सम्प्रदाय में उच्च, मध्य एवं निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर में शिशु मृत्यु क्रमशः 60.10, 185.48 एवं 302.88 प्रति हजार है जबकि मुस्लिम सम्प्रदाय में यह क्रमशः 87.91, 300.69 एवं 376.00 प्रति हजार है । इससे स्पष्ट है कि दोनों सम्प्रदायों में निम्न आर्थिक स्तर में शिशु मृत्यु-दर अधिक व उच्च स्तर में यह सर्वाधिक कम है अर्थात दोनों सम्प्रदायों में सामाजिक-आर्थिक स्तर का शिशु मृत्यु पर प्रभाव समान रूप से परिलक्षित होता है ।

अध्याय छः में शिशु मृत्यु के उन कारणों की सूक्ष्म रूप से विवेचना की गई है जिनके कारण यह होती है । वे कारण जो शिशु मृत्यु को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं वे हैं -बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी, कुपोषण, पर्यावरणीय परिस्थितियाँ, उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, सामाजिक-आर्थिक कारक एवं दुर्घटनायें आदि । इन कारणों से मरने वाले शिशुओं की कुल संख्या तीनों वर्षों -1988, 1989 एवं 1990- में कुल 241 रही जिसमें से बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी से सर्वाधिक 38 प्रतिशत की मृत्यु हुई, कुपोषण से 22 प्रतिशत, पर्यावरणीय परिस्थितियों से 9 प्रतिशत, उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण 14 प्रतिशत, सामाजिक-आर्थिक कारकों से 10 प्रतिशत एवं 7 प्रतिशत की मृत्यु दुर्घटनाओं से हो जाती है । स्पष्ट है कि बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी एवं कुपोषण से लगभग 60 प्रतिशत शिशुओं की मृत्यु हो जाती है जबकि शेष 40 प्रतिशत की मृत्यु अन्य कारणों से होती है ।

शिशु मृत्यु के कारणों के प्रभाव को अलग-अलग सम्प्रदायों में जानने का प्रयास भी किया गया जिससे ज्ञात हुआ कि हिन्दुओं में कुल 91 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी से 41 प्रतिशत, कुपोषण से 24 प्रतिशत, पर्यावरणीय परिस्थितियों से 8 प्रतिशत, उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव से 15 प्रतिशत, सामाजिक-आर्थिक कारकों से 7 प्रतिशत एवं 5 प्रतिशत की मृत्यु दुर्घटनाओं से हो जाती है । तथा मुस्लिम समुदाय में कुल 150 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से उक्त कारणों से क्रमशः 37 प्रतिशत, 20 प्रतिशत, 10 प्रतिशत, 14 प्रतिशत, 12 प्रतिशत एवं 7 प्रतिशत की मृत्यु होती है । इस प्रकार, दोनों सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु के कारणों

का लगभग समान प्रभाव परिलक्षित होता है । साथ ही, यह भी स्पष्ट है कि सर्वाधिक मृत्यु बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी तथा कुपोषण से होती है । स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, सामाजिक-आर्थिक कारक, पर्यावरणीय परिस्थितियाँ एवं दुर्घटनायें अधिक महत्वपूर्ण नहीं हैं ।

शिशु मृत्यु के कारण का प्रभाव नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्था के शिशुओं में भी जानने का प्रयास किया गया जिससे यह ज्ञात हुआ कि नवजात अवस्था में कुल 106 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से सर्वाधिक 67 प्रतिशत की मृत्यु बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी से, 11 प्रतिशत की कुपोषण, 7 प्रतिशत की पर्यावरणीय परिस्थितियों से, 9 प्रतिशत की उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव से तथा 4 प्रतिशत की सामाजिक-आर्थिक कारकों व 2 प्रतिशत की मृत्यु दुर्घटनाओं आदि से हुई है । पश्च-नवजात अवस्था में कुल 137 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से उक्त कारकों से मरने वाले शिशुओं की संख्या क्रमशः 16 प्रतिशत, 30 प्रतिशत, 11 प्रतिशत, 18 प्रतिशत, 15 प्रतिशत एवं 10 प्रतिशत है । इससे स्पष्ट होता है कि नवजात अवस्था में सर्वाधिक शिशुओं की मृत्यु बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी से होती है जबकि पश्च-नवजात अवस्था में सर्वाधिक मृत्यु कुपोषण एवं स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव से होती है ।

शिशु मृत्यु के कारणों को जानने का प्रयास अलग-अलग सम्प्रदायों में नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्थाओं में भी किया गया जिससे यह पता चला कि हिन्दुओं में विभिन्न कारणों से कुल 91 शिशुओं की मृत्यु हुई उनमें से 41 शिशुओं की मृत्यु नवजात अवस्था में हुई जिसमें से सर्वाधिक 73 प्रतिशत की मृत्यु बीमारी एवं प्रसव सम्बन्धी असावधानी से हुई । पश्च-नवजात अवस्था में कुल 50 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से सर्वाधिक 36 प्रतिशत की मृत्यु कुपोषण से तथा 18 प्रतिशत की मृत्यु स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव के कारण हुई तथा शेष की मृत्यु बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी, पर्यावरणीय परिस्थितियाँ एवं सामाजिक-आर्थिक कारकों से हुई ।

इसके विपरीत, मुस्लिम सम्प्रदाय में कुल 150 शिशुओं की मृत्यु हुई उनमें से 65 शिशुओं की मृत्यु नवजात अवस्था में हुई जिसमें बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी से 63 प्रतिशत, कुपोषण से 12 प्रतिशत, पर्यावरणी परिस्थितियों से 8 प्रतिशत, उच्च-स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव से 8 प्रतिशत, 6 प्रतिशत की सामाजिक-आर्थिक कारकों से एवं 3 प्रतिशत की मृत्यु दुर्घटनाओं से हुई पश्च-नवजात अवस्था में कुल 85 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से उक्त कारणों से क्रमशः 16 प्रतिशत, 26 प्रतिशत, 12 प्रतिशत, 19 प्रतिशत, 16 प्रतिशत और 11 प्रतिशत की मृत्यु होती है ।

उक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि हिन्दू सम्प्रदाय के संदर्भ में नवजात शिशु मृत्यु के लिये प्रमुख रूप से बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी महत्वपूर्ण है जबकि पश्च-नवजात शिशु मृत्यु के लिये प्रमुखतः कुपोषण तथा स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव व बीमारी महत्वपूर्ण है । इसी प्रकार, मुस्लिम सम्प्रदाय की नवजात शिशु मृत्यु के लिये बीमारी/प्रसव सम्बन्धी असावधानी व कुपोषण महत्वपूर्ण है तथा पश्च-नवजात मृत्यु के लिये कुपोषण, स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव तथा बीमारी उत्तरदायी हैं ।

इसके अतिरिक्त, बीमारियों से होने वाली नवजात एवं पश्च-नवजात शिशु मृत्यु का अध्ययन करने से स्पष्ट हुआ कि बीमारियों से कुल 92 शिशुओं की मृत्यु हुई । उनमें से 38 शिशुओं की मृत्यु नवजात अवस्था में हुई जिसमें से सर्वाधिक (76 प्रतिशत) की मृत्यु टिटनेस, 11 प्रतिशत डिफ्थीरिया, 8 प्रतिशत डायरिया एवं 5 प्रतिशत की मृत्यु खसरे से हुई तथा पश्च-नवजात अवस्था में कुल 54 शिशुओं की मृत्यु हुई जिसमें से 31 प्रतिशत डायरिया, 22 प्रतिशत काली खाँसी, 20 प्रतिशत डिफ्थीरिया, 15 प्रतिशत खसरा एवं 6 प्रतिशत की टिटनेस तथा 6 प्रतिशत की मृत्यु अन्य कारणों से हुई । इससे स्पष्ट है कि नवजात अवस्था में मृत्यु के लिये सर्वाधिक उत्तरदायी कारक टिटनेस है तथा पश्च-नवजात अवस्था में डायरिया, कालीखाँसी, डिफ्थीरिया एवं खसरा की महत्वपूर्ण भूमिका है ।

इसी प्रकार, बीमारियों का प्रभाव विभिन्न सम्प्रदायों की नवजात एवं पश्च-नवजात अवस्था की शिशु मृत्यु पर जानने का प्रयास किया गया जिससे यह स्पष्ट हुआ कि हिन्दू समुदाय में बीमारियों से कुल 37 शिशुओं की मृत्यु हुई है, उनमें से 15 शिशुओं की मृत्यु नवजात अवस्था में हुई जिसमें से 73 प्रतिशत की मृत्यु टिटनेस, 13 प्रतिशत डिफ्थीरिया, 7 प्रतिशत डायरिया व 7 प्रतिशत की मृत्यु खसरे से हुई है । पश्च-नवजात अवस्था में कुल 22 शिशुओं की मृत्यु हुई है जिसमें से डायरिया से 36 प्रतिशत, 23 प्रतिशत कालीखाँसी, 18 प्रतिशत डिफ्थीरिया, खसरा से 14 प्रतिशत तथा 9 प्रतिशत की मृत्यु अन्य कारणों से हुई है ।

इसके विपरीत, मुस्लिम सम्प्रदाय में बीमारियों से कुल 55 शिशुओं की मृत्यु हुई है उनमें से 23 शिशु नवजात अवस्था में मर गये । जिसमें से 78 प्रतिशत की मृत्यु टिटनेस, 9 प्रतिशत डिफ्थीरिया, 9 प्रतिशत डायरिया तथा 4 प्रतिशत खसरे से मर जाते हैं वहीं पश्च-नवजात अवस्था में कुल 32 शिशुओं की मृत्यु होती है जिसमें से 9 प्रतिशत टिटनेस, 22 प्रतिशत डिफ्थीरिया, 22 प्रतिशत कालीखाँसी, 28 प्रतिशत डायरिया, 16 प्रतिशत खसरा तथा 3 प्रतिशत की मृत्यु अन्य कारणों से होती है । इससे स्पष्ट है कि दोनों ही सम्प्रदायों में नवजात शिशु मृत्यु के लिये टिटनेस प्रमुख रूप से उत्तरदायी है जबकि पश्च-नवजात शिशु मृत्यु के लिये डायरिया, कालीखाँसी एवं डिफ्थीरिया प्रमुख बीमारियाँ हैं ।

उक्त कारणों से होने वाली शिशु मृत्यु की समस्या के निवारण हेतु निम्नलिखित प्रयास करने चाहिए -

(1) सर्व प्रथम शिशुओं के जन्म होने के बाद समय-समय पर टिटनेस, डिफ्थीरिया, कालीखाँसी, डायरिया, खसरा आदि के टीके लगवाने चाहिए ।

(2) प्रसव प्रशिक्षित कार्यकर्ता से कराया जाना चाहिए व अप्रशिक्षित कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ।

(3) कुपोषण के कारण होने वाली शिशु मृत्यु से बचने के लिये माँ के भोजन एवं स्वास्थ्य पर ध्यान रखने के साथ ही साथ, शिशुओं को 6 माह के बाद फलों का रस देना चाहिए जिसमें मुख्य रूप से केले का रस, लौकी का पानी, दाल का पानी, चावल का पानी मिश्रित करके देना चाहिए ।

(4) यौन शिक्षा को प्रोत्साहित किया जाये ।

(5) लड़कियों को मातृत्व सुरक्षा तथा शिशु पालन की जानकारी प्रदान की जाये ।

(6) परिवार नियोजन को अपनाने के लिये लोगों को प्रोत्साहित किया जाय ।

(7) बाल विवाह प्रथा को बिल्कुल समाप्त किया जाये ।

(8) पर्दा-प्रथा का उन्मूलन कर दिया जाना चाहिए ।

(9) अज्ञानता, निरक्षरता, रूढ़िवादिता को समाप्त कर साक्षरता का स्तर उच्च किया जाये ।

(10) औरतों के प्रति उदासीनता और उपेक्षात्मक दृष्टिकोण समाप्त किया जाना चाहिए ।

(11) शिशु कल्याण से सम्बंधित योजनाओं और संस्थाओं को विकसित किया जाना चाहिए ।

उक्त के अतिरिक्त स्वास्थ्य सुविधाओं की व्यवस्था तथा उनका उचित प्रयोग करने के लिये लोगों में जागरूकता पैदा की जानी चाहिए जिसके प्रभाव से शिशु मृत्यु को रोका जा सकेगा ।

इस प्रकार के अध्ययन यदि व्यापक स्तर पर किये जायें तो और अधिक रोचक परिणाम उपलब्ध होंगे । विभिन्न समुदायों तथा सम्प्रदायों में शिशु मृत्यु का तुलनात्मक अध्ययन करने पर स्थितियाँ और भी अधिक स्पष्ट होंगी तथा राष्ट्रीय स्तर पर शिशु मृत्यु तथा उससे घनिष्ठ रूप में सम्बंधित अधिक जन्म-दर एवं जनसंख्या बृद्धि की समस्या को भी समझने में सहायता मिलेगी जो कि आधुनिक समय में कहीं अधिक महत्वपूर्ण है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

अग्रवाल, एस0एन0, 1981, इण्डियाज पापुलेशन प्राब्लम्स, नई दिल्ली, टाटा मैक ग्रा-हिल पब्लिसिंग कम्पनी लि0 ।

अग्रवाल, आर0डी0, "इन्फ्ल्यूयेन्स आफ इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन इण्डिया" इन कमेटी फार इण्टरनेशनल कोआर्डिनेशन आफ रिसर्च इन डेमोग्राफी, सेमिनार आन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन रिलेशन टू दि लेविल आफ फर्टीलिटी, बैंकाक, मई 6-12, 1975 पेरिस, सी0आई0सी0आर0ई0डी0 1975 ।

अरोरा, वाई0एल0, 1979, "इन्फेन्ट मारटेलिटी एण्ड इट्स कोरिलेट्स इन ग्रेटर बाम्बे," हेल्थ एण्ड पापुलेशन, प्रासपेक्टिव एण्ड इसूज, 12 (4) अक्टूबर ।

अमीन, आर0 मरियम, ए0जी0 एण्ड फारूकी, आर0, 1986, इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन बांगलादेश 1959-1976, डेमोग्राफी इण्डिया वाल्यूम 15 नं0 1, पेज 35 ।

अमीन, आर0 मरियम : वही पेज 43 ।

अपना जनपद हमीरपुर, द्वितीय संस्करण, सरस्वती मुद्रणालय, हमीरपुर, 1990 ।

अशरफ, के0एम0, 1932, लाइफ एण्ड कण्डीशन आफ दि पीपुल्स आफ हिन्दुस्तान, लन्दन, पेज 107

अन्सारी, धौस, 1960, मुस्लिम कास्ट इन उत्तर प्रदेश, ए स्टडी आफ कल्चर कान्टेक्ट, लखनऊ ।

अहमद, जरीना, 1962, मुस्लिम कास्ट इन उत्तर प्रदेश, दि इकोनोमिक वीकली, फरवरी 17, पेज 389

अहमद, इम्तियाज, 1966, दि इण्डियन इकोनोमिक्स एण्ड सोशल हिस्ट्री रिब्यू, सितम्बर, वाल्यूम 3 नं0 3, पेज 268 ।

अनुराधा, के0 जैन, एण्ड विसारिया, प्रवीन, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, लन्दन, पेज 229-30 ।

अदलाख, ए0एल0, 1970, ए स्टडी आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन तुर्की, पी-एच0डी0 थीसिस, यूनीवर्सिटी आफ मिचिधा, पेज 318 ।

अनुराधा, के0 जैन, 1984 "इन्फेन्ट मारटेलिटी आफ रीजनल वैरियेशन" इन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन रूरल इण्डिया: इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स 1988, लन्दन ।

एण्टोनोव, ए0, 1947, चिल्ड्रेन बार्न ड्यूरिंग दि सीज इन लेनिनगार्ड इन 1942, जनरल आफ पैडियाट्रिक, 30 ।

भाटिया, पी0एस0 एण्ड राय, एस0, 1983, प्रासपेक्टिव फार मारटेलिटी डिक्लाइन इन इण्डिया, इन दि नेक्स्ट टू डिकेड्स, इन पापुलेशन पालिसी प्रास्पेक्टिव इन डेवलपिंग कन्ट्री, एडीटेड वाई नारायन, बी0 एण्ड प्रकाशन सी0पी0 बाम्बे, दि हिमालयन पब्लिसिंग हाउस ।

बर्कले, जी0 डब्लू, 1958, टेक्निक्स आफ पापुलेशन इनालिसिस, न्यूयार्क, जानवैली एण्ड सन्स ।

ब्रोकिंगटन, सी0एफ0, 1967, वर्ड हेल्थ चर्चिल, लन्दन ।

ब्लण्ट, ई0ए0आर0, 1931, दि कास्ट सिस्टम आफ नार्दन इण्डिया, आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस ।

बेबन, जोन्स, बी0आर0, इत्यादि, 1914, वीमेन इन इस्लाम, लखनऊ पब्लिसिंग हाउस ।

बेनेडिक्ट,स्थ, 1938, कान्टीन्यूटीज एण्ड डिसकान्टीन्यूटीज इन कल्चरल कण्डीसनिंग, साइकिट्री, वाल्यूम।

भाटिया, जे0सी0, 1983, एज ऐट मैरिज एण्ड फर्टीलिटी इन घाना, वेस्ट अफ्रीका, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 12, नं0 11

भट्टाचार्य जी, जी0जे0, "एन इनालिसिस आफ नियो-नेटल मारटेलिटी", डी0सी0ए0आर0सी0 इन्स्टीट्यूट आफ सोशल एण्ड इकोनोमिक चेन्ज, बंगलौर, एन0डी0 ।

बोगी, डोनाल्ड, जे0, 1961, प्रिंसिपल आफ डेमोग्राफी, जान वैली एण्ड सन्स, न्यूयार्क ।

भट्टाचार्य जी, पी0ज0, 1979, फैक्ट्रस इन्फल्यूवेंशिंग इन्फेन्ट मारटेलिटी के0 श्रीनिवासन, पी0सी0 सक्सेना, तारा कानिटकर, डेमोग्राफी एण्ड सोशल इकोनोमिक्स एस्पेक्ट आफ दि चाइल्ड इन इण्डिया, बाम्बे, हिमालयन पब्लिसिंग हाउस ।

बेकर, हुग, डी0आर0, 1979, इपीडिमियोलोजिक पैटर्न ओवर टाइम इन डी0एम0 टीड एण्ड एफ0जे0 स्टैण्डली, दि इपीडिमियोलाजी आफ प्रि मेच्योरिटी, वस्टीमोर, स्वारजेम वर्ग ।

ब्रे, डी0जी0, 1977, मैटर्नल न्यूट्रीशन ब्रेस्ट फीडिंग एण्ड इन्फेन्ट सरवाइवल, इन न्यूट्रीशन एण्ड हू मैन रिप्रोडक्शन, न्यूयार्क, प्लेनू प्रेस ।

ब्रेड, सर डूगाल्ड, 1977, इपीडिमियोलाजी पैटर्न ओवर टाइम इन डी0एम0 रीड एण्ड एफ0जे0 स्टैण्डली, दि इपीडिमियोलाजी आफ प्रिमेच्योरिटी, वाल्टीमोर, स्वजनवर्ग ।

सेन्सस आफ इण्डिया, 1961-71, लाइफ टेबिल, आफिस आफ रजिस्ट्रार जनरल, नई दिल्ली, एस0आर0 1, इण्डिया पेपर । आफ 1977 ।

चौधरी, ए0आई0, फिलिप्स, जे0एफ0 एण्ड शेख, ए0के0, 1986, दि ट्रेण्ड्स इन नियोनेटल, इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन मतलब प्रोजेक्ट पीरिएड, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0।

चन्ना, एच0बी0, "ए स्टडी आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन रूरल दिल्ली," डेमोग्राफी इण्डिया, 8 (1-2), दिसम्बर-जनवरी, 1979, 217-225 ।

चन्द्रशेखर, एस0, 1959, एशियाज पापुलेशन प्राब्लम, शिकागो विश्व विद्यालय शिकागो प्रेस ।

चैपिन, एफ0एस0, 1947, इक्सपेरीमेन्टल डिजाइन इन सोशियोलाजिकल रिसर्च, न्यूयार्क हारपर एवं रो पब्लिसर्स ।

चौधरी, ए0के0एम0, 1982, दि कान्सेप्ट आफ इन्टरमीडिएट लेविल वैरियेबिल इन मारटेलिटी स्टडीज, इन वी0 एडमान्सटन एण्ड आर0 वैरागी,इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन बांगलादेश, ढाका, यूनीवर्सिटी आफ ढ़ाका ।

चन्द्रशेखर, सी0, 1959, सर्वे आफ दि स्ट्टेस आफ डेमोग्राफी इन इण्डिया, दि स्टडी आफ पापुलेशन शिकागो, शिकागो यूनीवर्सिटी प्रेस ।

दास वर्मा, जी0एल0, 1986, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डोनेशिया, ए रिब्यू आफ रीसेन्ट एवीडेन्स, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 ।

ई0एस0, बोगार्डस, 1957, सोशियोलाजी ।

फिशर, आर0, 1951, दि डिजाइन आफ इक्सपेरीमेन्ट, हाफनर ।

गण्डोत्रा, एम0ए0, एण्ड एन0दास, 1984, इन्फेन्ट मारटेलिटी एन एनालिसिस आफ रीसेन्ट वर्कस इन गुजरात, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, 1988, लन्दन।

गोयल, डा0 रमेश एण्ड माथुर, डा0 सरला, 1991, हेल्थ एण्ड फेमिली वेलफेयर प्रोग्राम इन सेवेन्थ फाइव ईयर प्लान, डिपार्टमेन्ट आफ पीडियाट्रिक, जी0एस0वी0एम0 मेडिकल कालेज, कानपुर ।

गुभाजू, भक्त बी0, 1986, लेविल एण्ड ट्रेण्ड आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन नेपाल, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 ।

गुप्ता, के0सी0 एण्ड राव, आर0के0, "चाइल्ड लास इक्सपीरियन्स इन ए रूरल एरिया," जनरल आफ फेमिली वेलफेयर, 23 (1) सितम्बर, 1976, 27-35 ।

गुनाशेषरन, एस0, 1984, डिटरमिनेन्ट आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन रूरल एरिया आफ तमिलनाडु, पेपर सबमिटेड टू ए सेमिनार आन "डिटरमिनेन्ट्स आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया" इस्पान्सर्ड बाई दि गुजरात इन्स्टीट्यूट आफ एरिया प्लानिंग एण्ड पापुलेशन कौन्सिल (न्यूयार्क) अहमदाबाद, अक्टूबर, 1-4

गुनाशेषरन, एस0, 1974, "ए नोट आन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन अथूर ब्लाक, 1964-69," सी0ए0आर0सी0 गाँधीग्राम ।

गार्सिया, बाई, गारमा, एण्ड इरमा, ओलाया, 1983, सम फैक्ट्स एसोसिएटेड विथ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन दि वर्ड ।

गुडे, डब्लू, जे0 एण्ड हाट, पी0एफ0, 1952, मैथड इन सोशल रिसर्च, न्यूयार्क, मैक ग्रेव-हिल पब्लिशिंग कम्पनी ।

ग्रीनउड अर्नस्ट, 1945, इक्सपेरीमेन्टल सोशियोजाली, ए स्टडी इन मैथड, न्यूयार्क कोलम्बिया यूनीवर्सिटी प्रेस ।

गजेटियर, जनपद हमीरपुर, अध्याय XIX, 267 ।

घुरिये, जी0एस0, 1957, कास्ट एण्ड क्लास इन इण्डिया, पापुलर प्रकाशन, बम्बई ।

गुहा, उमा, 1965, कास्ट एमंग रूरल बंगाल मुस्लिम, मैन इन इण्डिया, राँची ।

ग्रीन, ए0 डब्लू0, सोशियोलाजी ।

गण्डोत्रा, एम0एम0 दास एण्ड भट्ट, आर0वी0, 1980, फैक्टर्स इन्फ्ल्यूवेशिंग नियोनेटल मारटेलिटी इन ऐन इण्डिया, कम्युनिटी डेमोग्राफी, इण्डिया, 9 (182) ।

दि हिन्दुस्तान टाइम्स, 1987, सर्वे आन दि इन्फेन्ट मारटेलिटी नई दिल्ली, फरवरी 8 ।

हाउजर, फिलिप, एम0 एण्ड डंकन, ओरिस टूडले, 1959, दि स्टडी आफ पापुलेशन, ऐन इन्वेन्ट्री एण्ड ए प्राइजल, शिकागो विश्वविद्यालय, शिकागो प्रेस ।

हेंस, मिकाइल, आर0, एण्ड एम0टी0, रोजर, सी0, 1982, डिफरेन्सियल इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन कास्टारिका, 1968-1973, पापुलेशन स्टडी, 36(1) ।

हैवीचट, जे0पी0, लेच टीग, सी0 वार्ग वर्ग, एण्ड आर0ई0 क्लेन, 1976, मैटर्नल न्यूट्रीशन, बर्थविट, एण्ड इन्फेन्ट मारटेलिटी इन के0ई0 इलिएट एण्ड नाइट, साइज एट बर्थ, एसोसिएट साइंसटिफिक पब्लिशर ।

इण्डिया, रजिस्ट्रार जनरल, 1983, ए ।

इस्लाम इन इण्डिया, 1921, आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस ।

इस्लाम, एम0एस0, 1982, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन रूरल बांगलादेश, ऐन एनालिसिस आफ काजेज ड्यूरिंग नियोनेटल एण्ड पोस्ट नियोनेटल पीरिएड, जनरल आफ ट्रापिकल पैडियाट्रिक, दिसम्बर, 28 (6) ।

जकारिया, के0सी0 एण्ड पटेल, एस0, 1983, ट्रेण्ड्स आफ डिटरमिनेन्ट्स आफ इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन केरल, जनसंख्या वाल्यूम ।, नं0 2 ।

खान, एम0ई0, 1984, डिटरमिनेन्ट्स आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन उत्तर प्रदेश, ए माइक्रोलेविल स्टडी, अक्टूबर 1-4 ।

करमाकर, आर0, 1982, "टाइम सिरीज कैजुवल्टी बिटवीन इन्फेन्ट मारटेलिटी एण्ड फर्टीलिटी इन लेस डेवलप्ड कन्ट्रीज," डाक्टोरल डेजरटेशन,सबमिटेड टू सिटी यूनीवर्सिटी आफ न्यूयार्क ।

कार्ल, एन, लेलवेलिन, 1953, लीगल ट्रेडीशन एण्ड सोशल साइंस मेथड, इन बुकिंग इन्स्टीट्यूटशन, कमेटी आन ट्रेनिंग एसाइन रिसर्च मेथड इन दी सोसल साइंस ।

क्रुक, डब्लू, 1986, ट्रइवल्स एण्ड कास्ट्स आफ नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज आफ आगरा एण्ड अवध, लन्दन ।

कपाड़िया, के0एम0, 1972, मैरिज एण्ड फेमिली इन इण्डिया, कलकत्ता, आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस ।

कर्वे, आई0, 1965, किंगशिप आर्गनाइजेशन इन इण्डिया, बाम्बे, एशिया पब्लिशिंग हाउस ।

कारकल, मालिनी, 1980, "इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन महाराष्ट्र, इण्डिया," पेपर प्रेजेन्टेड एट दि एनुवल मीटिंग आफ दि पापुलेशन एसोसिएशन आफ अमेरिका, डेनवर, कोलोराडो, अप्रैल 10-12 ।

खान, एम0ई0, 1980, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन उत्तर प्रदेश, ए माइक्रोलेविल स्टडी, इन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, अनुराधा के0 जैन एण्ड विसारिया प्रवीन, लन्दन ।

कैडवेल, जान0सी0 एण्ड मैक्डोनल, पी0, 1981, इन्फ्ल्यूवेंश आफ मैटर्नल एजूकेशन आन इन्फेन्ट चाइल्ड मारटेलिटी लेविल एण्ड काजेज, इन इण्टरनेशनल पापुलेशन कान्फ्रेन्स प्रोसीडिंग एण्ड सेलेक्टेड पेपर, मनीला, 1981, लीज आई0यू0एस0एस0पी0 2 ।

कास्टीलो, एम0, फ्रेसिया, एफ0, सोलिस एण्ड ग्रेसिला, एम0ए0, 1983, इन्फ्लूवेशिया डिल सेक्टर स्लाइडेन लांस निवेलेस, इन सिसरेड, इनफेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन दि थर्ड वर्ड, पेरिस ।

खनजंन स्थति, पी0 एण्ड वेंचाकरन, विलाई, वेंचाकरू, 1983, हेल्थ प्राब्लम इन पेरीनेटल पीरिएड एण्ड इन्फन्ट इन ए रूरल डिस्ट्रिक आफ थाईलैण्ड, इन सिसरेड, इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन दि थर्ड वर्ड, पेरिस ।

कबीर, एम0 एण्ड ए0ए0 हाउलडर, 1980, सोशल इकोनोमिक्स डिटरमिनेन्ट्स आफ मारटेलिटी इन बांगलादेश, रूरल, लन्दन, डेमोग्राफी 7 (12) (1-13) ।

कानिटकर, तारा, एण्ड मूर्ती, वी0एन0, 1984, फैक्टर्स एसोसिएट्स विथ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन राजस्थान एण्ड उड़ीसा इन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, 1988, लन्दन ।

लिण्ड, क्वीस्ट, जी0, 1953, डिजाइन एण्ड एनालिसिस आफ इक्सपेरीमेंट इन साइकोलाजी एण्ड एजूकेशन, हंगसन ।

लूसी मेयर, सामाजिक नृ-विज्ञान की भूमिका, हिन्दी अनुवाद ।

लैथम, सी0मिचेल, 1968, साइंस, इन एन0एस0 स्कीमसा, सी0ई0टेलर, जे0ई0 गार्डेन, मोनोग्राफ सिरीज नं0 57 ।

महादेवन, के0, 1984, मारटेलिटी बाइलोजी एण्ड सोसाइटी, एनालिटिकल फ्रेमवर्क एण्ड कान्सेप्चुवल मॉडल ।

मरटन, आर0के0, 1949, सोशल थियरी एण्ड सोशल स्ट्रक्चर, टू वर्ड कोडिफिकेशन आफ थियरी एण्ड रिसर्च, कोलम्बिया यूनीवर्सिटी प्रेस ।

मनोरमा ईयर बुक, 1983, मलयाला मनोरमा कोट्टयम, केरल ।

मैकडोनल, एवं कीथ, 1935, वैदिक इण्डेक्स, वाल्यूम I, लन्दन, चेप्टर XXII ।

मेरियट, मैकिम, 1960, कास्ट रैंकिंग एण्ड कम्यूनिटी स्ट्रक्चर इन फाइव रीजन्स आफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, पूना ।

मिश्र, सतीश, 1961, मुस्लिम कम्यूनिटीज इन गुजरात, बाम्बे ।

मजूमदार, एवं मदान, रेसेज एण्ड कल्चर इन इण्डिया ।

मुकजी, आर0के0, 1957, दि डायनामिक्स आफ रूरल सोसाइटी, बरलिन ऐकेडमिक विरलाज ।

महादेवन, के0 एण्ड नाम बोथोरी, नारायनन, डी0, 1972,"कास्ट स्टेट्स एण्ड फर्टीलिटी इन ए रूरल एरिया आफ तमिलनाडु," बुलेटिन आफ दि गाँधीग्राम इन्स्टीट्यूट आफ रूरल हेल्थ एण्ड फेमिली प्लानिंग, जुलाई 7 (1) ।

मुथियाह, ए0, 1980, रिप्रोडक्शन इन फोर कल्चरल ग्रुप इन रूरल एरिया आफ तमिलनाडु, इण्डिया, चण्डीगढ़ ।

महादेवन, के0, 1981, कल्चर, न्यूट्रीशन एण्ड इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी, ए स्टडी इन साउथ सेन्ट्रल, इण्डिया, न्यूयार्क मेमियो ।

महादेवन, के0 रेड्डी, पी0आर0, मूर्ती, एम0एस0आर0 रेड्डी, पी0जे0 गौरी,वी0 एण्ड शिवरासू, एस0, 1986, कल्चर न्यूट्रीशन एण्ड इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी, इन फर्टीलिटी एण्ड मारटेलिटी, एडीटेड बाई के0महादेवन, संज पब्लिकेशन, लन्दन ।

मिगमा, एस0ए0, 1980, सोशियो इकोनोमिक्स डिटरमिनेन्ट्स आफ इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी इन श्रीलंका, बर्थ फर्टीलिटी सर्वे, अप्रैल 8, 1980 ।

नाम, सी0वी0, एण्ड हरिंगटन, टी0एम0, 1983, फक्टर्स सेपिंग दि मारवेलिटी एण्ड मारटेलिटी एक्सेप्टेशन आफ यूथ, ए सोशियोलाइजेशन मॉडल, मेमियो ।

ओमरान, ए0आर0 एण्ड स्टैण्डली, 1976,"चाइल्ड लास एण्ड फेमिली फारमेशन," फेमिली फामेशन पैटर्न एण्ड हेल्थ इन इण्टरनेशनल कोलेबरेशन स्टडी इन इण्डिया, ईरान, लेबनान, फिलीपीन्स एण्ड तुर्की, जनेवा, डब्लू0 एच0ओ0 ।

पार्क, जे0ई0, एण्ड पार्क, के0, 1991, पार्क्स टेक्स्ट बुक आफ प्रिवेन्टीव एण्ड सोसल मेडिसिन, बनारसीदास भनार पब्लिसर्स, जबलपुर, तेरवाँ संस्करण ।

पाठक, के0वी0 एण्ड मूर्थी, पी0के0, 1985, सोशियो, इकोनोमिक कोरिलेट्स आफ फर्टीलिटी एण्ड मारटेलिटी डिक्लाइन इन इण्डिया, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 14 नं0 1, 12 नं0 11

पाठक, के0वी0 एण्ड मूर्थी, पी0के0, 1983, लेविल एण्ड ट्रेण्ड्स आफ मारटेलिटी इन सम सेलेक्टेड कन्ट्रीज आफ एशिया, इन श्रीनिवासन, के0 मुकर्जी, एस0 (एडीटेड), डायनामिक्स आफ पापुलेशन एण्ड फेमिली वेलफेयर, 1983, बाम्बे, हिमालयन पब्लिसिंग हाउस, 246-277 ।

परमार, एस0बी0सिंह, 1987, स्त्रियों की प्रजनन-दर निर्धारण में शिशु एवं बाल मृत्यु की भूमिका, मानव, वर्ष 15, अंक ।

प्रभाकर, एन0आर0, 1983, मारटेलिटी वर्सेस, पब्लिक हेल्थ प्रोग्राम हारपोथोसिस डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 12 नं0 11

पारसन्स, टाल्कट, 1942, एज एण्ड सेक्स इन दि सोशल स्ट्रक्चर आफ दि यूनाइटेड स्टेट्स, अमेरिकन सोशियोलाजिकल रिब्यू, 7 अक्टूबर ।

पारसन्स, टालकट, रिलीजियस पर्समिक्टिव आफ कालेज टीचिंग इन सोशियोलाजी एण्ड साइकोलाजी, न्यू हेवेन दि हैजन फाउण्डेशन, 1952 ।

प्रभु, पी0एन0, 1985, हिन्दू सोशल आर्गनाइजेशन, बाम्बे, पापुलर बुक डिपो ।

पानिक्कर, के0एम0, 1956, हिन्दू सोसाइटी एट दि क्रास रोड, न्यूयार्क इन्स्टीट्यूट आफ पेसफिक रिलेशन ।

प्रभु, पी0एन0, 1963, हिन्दू सोशल आर्गनाइजेशन, बाम्बे, पापुलर प्रकाशन ।

पेथी ब्राइड, 1974, एण्ड ए0एम0 फैरहा, चाइल्ड मारटेलिटी एण्ड इट्स कोरिलेट्स इन सूडान, डाक्टोरल थीसिस ।

प्रेसैट, रोनाल्ड, 1979, डेमोग्राफिक इनालिसिस, लन्दन ।

दि रजिस्ट्रार जनरल, 1981, सर्वे आन इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड मारटेलिटी, 1979, नई दिल्ली, मिनिस्ट्री आफ होम एफेयर्स ।

रूजिका, एल0टी0 एण्ड कानिटकर, टी0, "इन्फेन्ट मारटेलिटी इन ग्रेटर बाम्बे," डेमोग्राफी इण्डिया, 2(1) जून, 1973, 41-55 ।

राज, डा0 हंस, 1978, फण्डामेन्टल्स आफ दि डेमोग्राफी, पापुलेशन स्टडीज विथ स्पेशल रिफरेन्स टू इण्डिया । समरजीत पब्लिकेशन, नई दिल्ली ।

रास, ए0डी0, दि हिन्दू फेमिली इन इट्स अरबन सेटिंग, यू0एस0ए0, यूनीवर्सिटी आफ टोरन्टो प्रेस 1961 ।

रूजिका, एल0टी, एण्ड कानिटकर टी0, 1972, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन ऐन अरबन सेटिंग, दि केश स्टडी आफ ग्रेटर बाम्बे ।

राय, यू0एन0 एण्ड कोआजी, बानो, 1988, कोरिलेट्स आफ इन्फेन्ट सरवाइवल एकार्डिंग टू कोहरोट स्टडी इन वधू रूरल हेल्थ प्रोजेक्ट, इन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेज एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, एडीटेड बाई अनुराधा के0 जैन, एण्ड प्रवीन, विसारिया, लन्दन ।

रामानुज, सी0, 1984, कोरिलेट्स आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन ए रूरल एरिया आफ तमिलनाडु, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, डिफरेन्सेस एण्ड डिटरमिनेन्ट्स, अनुराधा के0 जैन, एण्ड प्रवीन विसारिया, लन्दन ।

संध्या, एस0, 1986, सोशियो कल्चरल एण्ड इकोनोमिक कोरिलेट्स आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी, ए केश स्टडी आफ आन्ध्र प्रदेश, डेमोग्राफी इण्डिया, वाल्यूम 15 नं0 ।

सक्सेना, डी0एन0, श्रीवास्तव, जे0एन, 1980, बायो-सोशल कोरिलेट्स आफ पेरीनेटल मारटेलिटी इक्सपीरिएन्स आफ ऐन इण्डियन हास्पिटल, जनरल आफ बायो-सोशल साइंसेज 12, 69 ।

स्वतन्त्र भारत, 20 ई, 1992 ।

श्रीवास्तव, जे0एन0 एण्ड सक्सेना, डी0एन0, इन्फेन्ट मारटेलिटी डिफरेन्सियल इन इण्डियन सेटिंग, "फालोअप आफ हास्पिटल डिलेवरीज" जनरल आफ बायो सोशल साइंस, 13 (4) अक्टूबर 1981, 467-478 ।

सिंह, के0पी0,"चाइल्ड मारटेलिटी, सोशल स्टेट्स एण्ड फर्टीलिटी इन इण्डिया," सोशल बाइलोजी 24(4) 1974, 385-88 ।

स्वामी, अमृतलाल एण्ड मंगोल, सुदर्शन, इकोनोमिक इम्प्लीकेशन आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी, दि जनरल फेमिली वेलफेयर, 7(4), जून 1961, 35-39 ।

सोलेमन, आर0, 1949, एन इक्सटेन्सन आफ कन्ट्रोल ग्रुप डिजाइन, साइक्लोजिकल बुलेटिन ।

सूचना एवं जनसम्पर्क कार्यालय, जनपद हमीरपुर, 1992 ।

संख्या अधिकारी, सांख्यकीय पत्रिका, हमीरपुर ।

शास्त्री, राम, 1940, इवोल्यूशन आफ कास्ट, लन्दन ।

एस0एन0, 1956, आइजेन स्टाट, फ्राम जनरेशन टू जनरेशन, एज ग्रुप एण्ड सोशल स्ट्रक्चर, न्यूयार्क दि फ्री प्रेस ।

सक्सेना, डा0 आर0एन0, भारतीय समाज तथा सामाजिक संस्थायें ।

शर्मा, के0एल0, 1974, दि चेंजिंग रूरल स्ट्रेटीफिकेशन सिस्टम, नई दिल्ली, अरियेन्ट लागमैन लिमिटेड ।

सिग मैथ्यूसू, आई0, 1983, डिक्लाइन आफ मारटेलिटी आफ जापान, यू0एस0 जापान कान्फ्रेन्स आन एजिंग, मेमियो ।

साइमन, जार्ज, वी0, वी0डी0 मिश्रा, 1979, सम एक्सपेक्ट्स आफ इन्फेन्ट एण्ड चाइल्ड हूड मारटेलिटी इन रूरल नाथ इण्डिया, सोशल एक्शन, वाल्यूम 29 ।

साइमन, जी0वी0, सी0एम0स्मुकर, वी0डी0मिश्रा, एण्ड पी0मजूमदार, 1978, पैटर्न एण्ड काजेज आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन रूरल उत्तर प्रदेश, जनरल आफ ट्रापिकल पैडियाट्रिक एण्ड इन विहाफ मेन्टल चाइल्ड हेल्थ, 27 (5) ।

साइमन, जी0वी0 एण्ड वी0डी0मिश्रा, 1982, पोस्ट नियोनेटल मारटेलिटी इन रूरल इण्डिया, इम्प्लीकेशन आफ इकोनोमिक्स मॉडल, डेमोग्राफी वाल्यूम 19 नं0 111, लन्दन ।

सोबरे, डी0जी0, 1971, पापुलेशन प्रेसर आन फेमिलीज, फेमिलीज साइज एण्ड चाइल्ड स्पेशिंग इन रैपिड पापुलेशन ग्रोथ, दि जान होपकिंस प्रेस ।

तलवार, प्रेम जी0, 1984, इन्फेन्ट मारटेलिटी, सम एवीडेन्स फ्राम रूरल मध्य प्रदेश, इन इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, लन्दन ।

टिटमस, रिचार्ड, एम, 1959, बर्थ पावर्टी एण्ड वेल्थ, लन्दन ।

यूनाइटैड नेशन, 1953, दि हिस्ट्री आफ पापुलेशन थियरी, न्यूयार्क ।

उद्वाहत्व- तेन भार्यात्व सम्पादकं गृहणं विवाहः, मनुस्मृति, 3/20 ।

वैद्यनाथन, के0ई0, "सम इन्डीकेट्स आफ डिफ्रेन्सियल्स मारटेलिटी इन इण्डिया," ए स्टडीज आन मारटेलिटी इन इण्डिया बाई वैद्यनाथन, के0ई0 दि गाँधीग्राम इन्स्टीट्यूट आफ रूरल हेल्थ एण्ड फेमिली प्लानिंग, 1972, 145-160 ।

विसारिया, लीला, 1988, लेविल, ट्रेण्ड्स एण्ड डिटरमिनेन्ट आफ इन्फेन्ट मारटेलिटी इन इण्डिया, लन्दन ।

विप्रदास, पी0के0, 1970, इन्फेन्ट मारटेलिटी इन सम रूरल एरिया आफ महाराष्ट्र, सुखी-शंकर, फरवरी 8 ।

विनीकाफ, वेवर्ली, 1978, न्यूट्रीशन पापुलेशन एण्ड हेल्थ सम इम्प्लीकेशन फार पालिसी, दि पापुलेशन काउन्सिल, वर्किंग पेपर नं0 3 ।

नगरीय परिवेश मे शिशु – मृत्यु : दर, विभिन्नतायें,

कारण तथा निवारण

(उत्तर प्रदेश के हमीरपुर जनपद स्थित मौदहा नगर में दो सांस्कृतिक समूहो की ४०० माताओं के तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित)

साक्षात्कार–अनुसूची

I. उत्तरदाता के सम्बन्ध में सामान्य सूचनायें–

(१) उत्तर दाता का नाम–

(२) परिवार के मुखिया का नाम
तथा उत्तर दाता से सम्बन्ध–

(३) उत्तरदाता की आयु

(४) धर्म

(५) जाति

(६) शिक्षा

शिक्षा	निरक्षर	हाईस्कूल से कम	हाईस्कूल और अधिक
	१	२	३
स्वयं की			
पति की			

(७) पति का व्यवसाय

कृषि पर आधारित			कृषि के अतिरिक्त			
स्वयं की कृषि	बटाई की कृषि	कृषि मजदूरी	लघु उद्योग	बृहत उद्योग	नौकरी	अन्य
१	२	३	४	५	३	७

(८) परिवार का स्वरूप — संयुक्त / एकाकी

(९) विवाह के समय आयु — विवाह का वर्ष

(१०) गौने के समय आयु — गौने का वर्ष
यदि विवाह में विदाई
न हुयी हो

II परिवार के जीवन–स्तर से सम्बन्धित सूचनायें

११- मकान का स्वरूप- कच्चा / पक्का / मिश्रित / झोपड़ी

११ (अ) मकान में कमरों की संख्या-

१२- प्रकाश का साधन- विजली / लालटेन / डिब्बी, अन्य कोई

१३- पीने के पानी का साधन–

(i) नल व्यक्तिगत / किसी दूसरे का / साझे का / सार्वजनिक

(ii) कुँआ ,, ;; ;; ,,

(iii) नलकूप ,, ;; ;; ;;

१३ (अ) क्या पर्याप्त पानी मिलता है ? यदि हां तो कितने महीने पर्याप्त पानी मिलता है।

१४- शौचालय सुविधा – व्यक्तिगत / सार्वजनिक / सुविधा नही

१५- परिवार की कुल भूमि –

१५ (अ) खेती योग्य भूमि सिंचित / असिंचित

१६- खेतों से आय

१६ (अ) अन्य स्रोतों से आय

आपके परिवार में निम्न में से कौन–कौन वस्तुये हैं। (संख्या सहित)

(i) चारपाई	(ii) मेज	(iii) कुर्सी	(iv) स्टूल
(v) घड़ी	(vi) सिलाई मशीन	(vii) विजली का पंखा	(viii) सायकिल
(ix) मोटर सायकिल	(x) स्कूटर	(xi) कार या जीप	(xii) रेडियो/ट्रांजिस्टर
(xiii) टेलीविजन	(xiv) फ्रिज		

III

उत्तरदाता (स्त्री) के सभी जन्मो का विस्तृत विवरण

जन्म का वर्ष माह व तिथि	जन्म का स्वरूप जीवित/मृत/गर्भपात	प्रसव के समय मां की आयु	जन्म स्थान घर/अस्पताल	बच्चे का लिंग लड़का/लड़की	जन्म के समय परिचारक डाक्टर/नर्स मिडवाइफ प्रशिक्षित दाई अप्रशिक्षितदाई सम्बन्धी/मित्र	नाल काटने का यंत्र	वर्तमान में बच्चा जीवित/मृत (यदि जीवित हो तो आयु)	यदि मृत, तो मृत्यु के समय आयु(यदि एक वर्ष से कम तो विवरण दिनों में	मृत्यु का स्थान घर/अस्पताल	इलाज की अवधि	इलाज का प्रकार देशी/डाक्टरी वैद्य की/ होम्योपैथी अन्य कोई	कुल खर्च	विशेष विवरण
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४

IV (i) अलग-अलग वर्षों में जीवित जन्मों (Live Births) की कुल संख्या लड़के एवं लड़कियों की अलग-२

(ii) ऊपर उल्लिखित जन्मों में से मृत शिशुओं (लड़के एवं लड़की का अलग-अलग) का विवरण (२८ दिन के अन्दर मृत तथा २८ दिन से एक वर्ष के मध्य मृत बच्चों को अलग-२ दर्शायें)

(iii) यदि कोई मृत जन्म (Still Birth) तो उनकी संख्या लड़के / लड़की

(iv) यदि कोई गर्भपात तो संख्या

(v) शिशु मृत्यु के कारण (प्रत्येक के लिये कारण) अलग-२ टिटनेस / जन्म से अस्वस्थ्य / पोषक पदार्थों का पर्याप्त न होना / इलाज की असुविधा / इलाज के लिये धनाभाव / रोग निरोधक टीकों का न लगना / लड़कियों के इलाज पर ध्यान न देना।

(vi) परिवार में किसी के बीमार होने पर सर्वप्रथम कौन सा इलाज किया जाता है।
झाड़ फूंक / देशी दवा / वैद्य /